धातुओं के रोचक तथ्य

शताब्दियो से धातुएं मनुष्य की सेवा करती आ रही हैं। इनकी सहायता से वह विपत्तियों का सामना करता आ रहा है। धातुओं के बल पर वह प्रकृति के रहस्य समझ रहा है तथा बड़े काम की चीजे बना रहा है।

धातुओ की दुनिया बड़ी विस्तृत तथा रंग-बिरंगी है। कुछ धातुओं—ताम्र, लोहा, लेड, पारद, स्वर्ण, रजत, टिन के साथ मनुष्य हजारो सालो से परिचित है परतु कुछ धातुएं ऐसी हैं जिनसे मनुष्य केवल पिछले दशकों मे परिचित हुआ है।

धातुओ के गुण विस्तृत तथा विविध है। उदाहरण के लिए, पारद शीत से बिल्कुल नहीं घबराता है और टग्स्टन आग की तीव्र ज्वाला से नहीं डरता है। लीथियम एक बढिया तैराक हो सकता है क्योंकि वह पानी से दुगुना हल्का होता है। रजत अच्छा सुचालक है जबकि टाइटेनियम को इस काम से नफरत है। परंतु धातुओ के गुणों में कितनी भी विविधता क्यो न हो, वे एक परिवार की सदस्य फिर भी बनी रहती हैं। पुस्तक में कुछ महत्त्वपूर्ण धातुओं के इतिहास तथा उनके भविष्य पर प्रकाश डाला गया है।

पुस्तक विज्ञान के जगत् में प्रथम कदम रखने वाले स्कूली छात्रों के लिए दिलचस्प होगी। आशा है कि वे लोग भी इस पुस्तक से लाभ उठा सकेगे, जो अपना सामान्य ज्ञान बढ़ाना चाहते हैं।

धातुओं के रो

शताब्दियों से धातुएं
करती आ रही है। इनकं
विपत्तियों का सामना व
धातुओं के बल पर वह
समझ रहा है तथा बड़े व
रहा है।

धातुओं की दुनिया
रंग-बिरगी है। कुछ धात्
लेड, पारद, स्वर्ण, रज
मनुष्य हजारों सालो से
कुछ धातुएं ऐसी हैं जि
पिछले दशको मे परि

धातुओं के गुण वि
हैं। उदाहरण के लिए
बिल्कुल नहीं घबराता है
की तीव्र ज्वाला से नहीं
एक बढ़िया तैराक हो
वह पानी से दुगुना हल
अच्छा सुचालक है जब
इस काम से नफरत है
गुणों में कितनी भी वि
वे एक परिवार की स
रहती हैं। पुस्तक
धातुओं के इतिहास
पर प्रकाश डाला गर

पुस्तक विज्ञान
[illegible]


धातुओं के
रोचक तथ्य

धातुओं

शताब्दियो से
करती आ रही है
विपत्तियों का र
धातुओ के बल
समझ रहा है तः
रहा है।

धातुओं के
रंग-बिरगी है।
लेड, पारद, स
मनुष्य हजारो
कुछ धातुएं ऐ
पिछले दशको

धातुओं
हैं। उदाहरण
बिल्कुल नहीं
की तीव्र ज्वाल
एक बढ़िया
वह पानी से
अच्छा सुचाल
इस काम से
गुणों में कित
वे एक परि
रहती है।
धातुओ के
पर प्रकाश

पुस्तक
कदम रखने
दिलचस्प हे
इस पुस्तक
सामान्य ज्ञ

धातुओं के रोचक तथ्य

भाग-1

पुनर्लेखन एवं लिप्यंतरण
राजकुमार शर्मा

स्वराज्य मंदिर प्रकाशन
दिल्ली 110053

एस आई वनन्स्की की विश्वविख्यात कृति

Tales about Metals

का हिन्दी पुनर्लेखन एवं निष्यंतरण

प्रसिद्ध विचारक राजकुमार शर्मा के द्वारा

ISBN: 81-88069-03-5

मूल्य : 150.00 रुपये

प्रथम हिन्दी संस्करण : 2002

संशोधक : उदयकांत पाठक

धातुओं के रोचक तथ्य भाग-1

स्वराज्य मंदिर प्रकाशन

ब्लॉक-सी-8, मकान न. 174, यमुना विहार, दिल्ली-110053

द्वारा प्रकाशित

आवरण : श्याम जगोता द्वारा

मुद्रक आर. के. ऑफसेट दिल्ली 110032 द्वारा मुद्रित

प्रस्तावना

शताब्दियों से धातुएं मनुष्य की सेवा करती आ रही हैं। इनकी सहायता से वह विपत्तियों का सामना करता आ रहा है। धातुओं के बल पर वह प्रकृति के रहस्य समझ रहा है तथा बड़े काम की चीजें बना रहा है।

धातुओं की दुनिया बड़ी विस्तृत तथा रंग-बिरंगी है। कुछ धातुओं—ताम्र, लोहा, लेड, पारद, स्वर्ण, रजत, टिन के साथ मनुष्य हजारों सालों से परिचित है परन्तु कुछ धातुएं ऐसी हैं जिनसे मनुष्य केवल पिछले दशकों में परिचित हुआ है।

धातुओं के गुण विस्तृत तथा विविध है। उदाहरण के लिए, पारद शीत से बिल्कुल नहीं घबराता है और टंगस्टन आग की तीव्र ज्वाला से नहीं डरता है। लीथियम एक बढ़िया तैराक हो सकता है क्योंकि वह पानी से दुगुना हल्का होता है। रजत अच्छा सुचालक है जबकि टाइटेनियम को इस काम से नफरत है। परतु धातुओं के गुणों में कितनी भी विविधता क्यो न हो, वे एक परिवार की सदस्य फिर भी बनी रहती हैं। पुस्तक में कुछ महत्त्वपूर्ण धातुओं के इतिहास तथा उनके भविष्य पर प्रकाश डाला गया है।

पुस्तक विज्ञान के जगत् में प्रथम कदम रखने वाले स्कूली छात्रों के लिए दिलचस्प होगी। आशा है कि वे लोग भी इस पुस्तक से लाभ उठा सकेंगे, जो अपना सामान्य ज्ञान बढ़ाना चाहते हैं।

शता
करत
विपा
धातु
समः
रहा

रंग-
लेड,
मनु
कुछ
पिछ

हैं।
बिल
की
एक
वह
अः
इस
गुण
वे
रह
धा
पर

क
दि
इ
स

विषय-सूची

१

शताब्
करती
विपत्ति
धातुअ
समझ
रहा है

रग-बि
लेड,
मनुष्
कुछ
पिछले

हैं।
बिल्
की त
एक
वह
अच्
इस
गुणो
वे ए
रहते
धातु
पर

कद
दिल
इस
सा

सबसे हल्की धातु

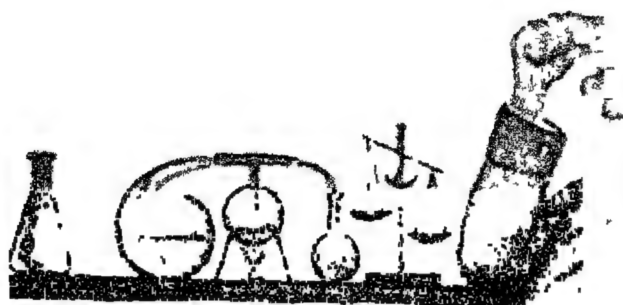
हमेशा जवान–पिछली शताब्दी की सैर–कार्ल्सबाड का आरोग्यकारी जल–कौन-सी चीज हल्की है?–वैसलिन बाथ–विमान चालकों को रक्षा-जाकेट दिए गए–गाऊट का इलाज–आवश्यकता आविष्कार की जननी है–जल में न डूबनेवाली धातु–न सर्दी का डर और न ही गर्मी का–ऐण्टार्कटिक महाद्वीप में काफी दूर तक–शाश्वत स्नेहक–क्या कांच जायकेदार होता है?–नीली ज्वाला–'प्रथम वायलिन'–बमबारी के परिणाम–लीथियम न्यूट्रॉन निगल जाता है–बीस द्नीपर जलबिजलीघर की कुल क्षमता के बराबर–वही पुराना ईधन-मिट्टी का तेल–लीथियम लीथियम का मुकाबला करता है–नाभिकीय गोंद–दक्षिणी डकोटा में पाया गया एक क्रिस्टल–'खुल जा सिम-सिम!'–जूठा नाश्ता

मेडेलीफ की आवर्त सारणी में धातुओ का ग्रुप लीथियम से शुरू होता है। यह ऐसी पहली धातु थी जिसकी खोज की 150-वीं जयती 1967 में मनाई गई। इतने वर्ष वीत जाने पर भी इस धातु का महत्त्व जरा भी कम नहीं हुआ है। आधुनिक तकनीक मे इसकी उतनी ही कद्र है जितनी पिछली शताब्दी में थी। आधुनिक प्रविधि में यह धातु बहुत ज्यादा उपयोगी सिद्ध हो रही है। फिर भी आज के वैज्ञानिक विश्वास ही नहीं करते कि उन्हें इस धातु की सारी खूबियां मालूम है। उनके विचारानुसार भविष्य मे इस धातु का महत्त्व और भी ज्यादा बढ़ जाएगा। लेकिन इन बातो की चर्चा करने से पहले, आइए, हम पिछली शताब्दी मे लौटते हे और स्वीडिश रसायनज्ञ आर्फवेडसन की प्रयोगशाला देखने चलते हैं। यह 1817 की बात है।

. प्रयोगशाला में शाति छाई हुई है। कई दिनो से वैज्ञानिक स्टाकहोल्म के पास ऊटो की खानों मे पाए गए खनिज पेटेलाइट का विश्लेषण करने मे व्यस्त

है। वह बार-बार अपने विश्लेषण के परिणामों की जांच करने ,
सब अवयवों की प्रतिशत संख्या का योग 96 आता है। बाकी ।
क्या ऐसा संभव है ? निश्चित रूप से खनिज में कोई अज्ञात
है। आर्फवेडसन बार-बार कोशिश करते है। अंत में यह मान जा
एक नई क्षारीय धातु खोज निकाली है। चूंकि यह धातु अपने 'नज
पोटैशियम तथा सोडियम की तरह कार्बनिक उत्पादों में नहीं न
पाई गई, इसलिए वैज्ञानिक ने इस धातु का नाम लीथियम रखने क
(यूनानी शब्द "litheos" से, जिसका अर्थ 'पत्थर' है)।

शीघ्र ही आर्फवेडसन ने यह धातु अन्य खनिजों में भी ढूंढ
अन्य स्वीडिश रसायनज्ञ बर्जेलियस ने कार्ल्सबाड तथा मेरियेनबा
इस धातु की उपस्थिति सिद्ध कर दिखाई। हमारे जमाने में फ्रांस व
जगह इसी कारण से ही तो प्रसिद्ध है कि वहां के खनिज जल मे



विद्यमान हैं जिनकी वजह से इस जल मे अतिलाभदायक स्नान-चिकि

1818 में अंग्रेज वैज्ञानिक डैवी ने लीथियम के हाइड्रॉक्साइड
इसके शुद्ध कण निकाले और 1855 में दो और वैज्ञानिकों ने

* चेकोस्लोवाकिया का एक स्वास्थ्यप्रद स्थान। इसका आधुनिक नाम मारि

अपने-अपने देशों में गलित लीथियम क्लोराइड के विद्युतविश्लेषण से शुद्ध लीथियम प्राप्त कर दिखाया। ये थे जर्मन रसायनज्ञ बुन्सन तथा अंग्रेज भौतिकविद् मैथसन। देखने में यह चांदी जैसे सफेद रंग की कोमल धातु थी जिसका वजन जल के वजन का करीब आधा था। धातुओं में हल्केपन में लीथियम का कोई भी दूसरी धातु मुकाबला नहीं कर सकती—एलुमिनियम इससे 5 गुना भारी है, लोह 15 गुना और ओस्मियम 10 गुना।

सामान्य ताप पर भी लीथियम वायु में उपस्थित नाइट्रोजन तथा ऑक्सीजन के साथ तीव्र प्रतिक्रिया कर जाता है। लीथियम के एक छोटे-से टुकड़े को कांच के ऐसे बर्तन में रखकर देखें जिसमें शीशे का प्लग खूब कसकर लगा हुआ हो। आप देखेंगे कि लीथियम सारी वायु का अवचूषण कर लेगा जिसके फलस्वरूप बर्तन निर्वातयुक्त हो जाएगा तथा वायुमंडलीय दाब प्लग को इतना ज्यादा कस देगा कि आप उसे बर्तन से अलग करने में शायद ही समर्थ हो सकेंगे। यही कारण है कि लीथियम का संचयन एक कठिन समस्या है। सोडियम को तो आसानी से मिट्टी के तेल या पेट्रोल में सुरक्षित रखा जा सकता है पर लीथियम के साथ ऐसा तरीका नहीं अपनाया जा सकता। वह एकदम सतह पर बैठ जाएगा और प्रज्वलित होने लगेगा। लीथियम को सुरक्षित रखने के लिए इसकी बत्तियां बनाकर उन्हें वैसलिन या पैराफिन में रख देते हैं। इन चीजों का लेप संरक्षी आवरण की भूमिका निभाता है।

हाइड्रोजन के साथ लीथियम और भी ज्यादा तीव्रता से प्रतिक्रिया कर जाता है। धातु की थोड़ी-सी मात्रा भी इस गैस के भारी आयतनों को आकर्षित करने की क्षमता रखती है : एक किलोग्राम लीथियम हाइड्राइट में 2800 लीटर हाइड्रोजन होता है। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान अमरीकी विमानचालकों को लीथियम हाइड्राइट की रक्षा-जाकेट (पेलेट) दी गई जिनका प्रयोग आपत्काल में किया जा सकता था। समुद्र के ऊपर उड़ते समय अगर जहाज क्रैश होकर पानी में गिर जाए तो जैसे ही पेलेट पानी के संपर्क में आएगा, जाकेट तुरत घुल जाएगी और हाइड्रोजन निकलना शुरू हो जाएगा। यह हाइड्रोजन बचाव के साधनों को फुलाने लगेगा, जैसे लाइफ-बोट, लाइफ-जाकेट, ऐण्टेना वाला बैलून आदि।

लीथियम यौगिकों में अपार जल-अवचूषण की क्षमता होने के कारण इनका विस्तृत उपयोग पनडुब्बियों, हवाई जहाजों के रेस्पिरेटरों तथा कंडिशनरों में हवा की सफाई करने के लिए किया जाता है।

लीथियम के औद्योगिक उपयोग का प्रथम प्रयास इस शताब्दी के आरम्भ में किया गया। इससे पहले लगभग सौ साल तक इसका प्रयोग मुख्यतः गाऊट

के इलाज के लिए किया जाता था।

प्रथम विश्व युद्ध के दौरान जर्मनी को औद्योगिक प्रयोग के लिए टिन की बहुत सख्त जरूरत पड़ रही थी। देश में ऐसा कच्चा माल भी नहीं था जिससे टिन प्राप्त किया जा सके। अतः वैज्ञानिकों को इसके बदले में जल्दी से दूसरी धातु की खोज करनी थी। लीथियम ने उनकी समस्या पूरी तरह से हल कर दी। एक लेड-लीथियम ऐलॉय बेहतरीन घर्षणरोधी धातु सिद्ध हुआ, इसका नाम बाह्न धातु (Bahn-metal) था। तब से तकनीकी कार्यों में विभिन्न लीथियम ऐलॉय लगातार प्रयुक्त किए जा रहे हैं, जैसे—ऐलुमिनियम, बेरिलियम, ताम्र, जिंक तथा रजत ऐलॉय। एक अन्य हल्की धातु मैग्नीशियम के साथ लीथियम के ऐलॉय से भविष्य मे काफी आशा की जा रही है। मैग्नीशियम में बहुत सारी उपयोगी विशेषताएं तो हैं। निर्माण-कार्यों मे इसके प्रयोग की बात उल्लेखनीय है। वे बहुत उपयोगी सिद्ध हो रहे है। एक लीथियम-मैग्नीशियम ऐलॉय, जिसमें लीथियम की मात्रा 50% से अधिक है, जल से हल्का होता है। इस प्रकार के संयोजन से कई ऐलॉय बनाए जा चुके हैं, परंतु दुर्भाग्यवश वे सभी अस्थाई सिद्ध हुए हैं; वायु मे तुरंत उपचयित हो जाते हैं। धातु-विशेषज्ञ ऐसी टेक्नालाजी विकसित करने का प्रयास करते रहे जिसकी बदौलत लीथियम के ऐलॉय दीर्घकालीन रहें। सोवियत संघ की विज्ञान-अकादमी के अंतर्गत बाइकोव नामक अनुसंधान-संस्थान के वैज्ञानिक इस समस्या के हल में सफल हुए है। उन्होंने निर्वातरहित पिघलाऊ विद्युत भट्ठी में निष्क्रिय गैस आर्गन की मदद से लीथियम और मैग्नीशियम का ऐलॉय प्राप्त किया जो वायु में धुंधला नहीं होता और न ही जल में डूबता है।

उच्च प्रतिक्रिया-क्षमता, निम्न गलनांक (केवल 180 5°c) तथा अपने यौगिकों के निम्न घनत्व के कारण लौह व अलौह धातुकर्म में लीथियम का प्रयोग एक उत्तम विगैसर, विऑक्सीकारक के रूप में किया जाता है। वह धातु में पिघली गैसों, जैसे ऑक्सीजन और नाइट्रोजन, को निकाल देता है। लीथियम की सहायता से कुछ ऐलॉयों की संरचना अल्पकणीय बन जाती है जिससे उनके यांत्रिक गुण बेहतर हो जाते हैं। ऐलुमिनियम के उत्पादन में लीथियम एक प्रक्रमी उत्प्रेरक के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। विद्युतविश्लेषण में लीथियम यौगिक मिलाने से ऐलुमिनियम विद्युत-अपघटनी सेल का संवेग प्रवाह बढ जाता है तथा अवगाह ताप और विद्युत की खपत कम करने में भी सफलता प्राप्त होती है।

पहले जो क्षारीय बैटरियां बनाई जाती थीं उनके विद्युतविश्लेषक में केवल सोडियम हाइड्रॉक्साइड विलयन प्रयुक्त किया जाता था। जैसे ही इसमें लीथियम हाइड्रॉक्साइड की थोड़ी-सी मात्रा (कुछ ग्राम) मिलाई जाने लगी, इन बैटरियों की

कार्य-अवधि तीन गुना बढ़ गई। इसके साथ-साथ बैटरियों की तापीय परास- भी काफी बढ़ गई ' 40°c ताप पर भी बैटरी डिसचार्ज नही होती और स 20°c नीचे तापमान होने पर भी सही सलामत रहती है। एक लीथियम अपघटित्र में इतने ज्यादा या कम ताप को सहने की क्षमता नही होती ही में जापान मे हाथ की घड़ियों के लिए ऐसे सेल बनाए गए है। इन से ऐनोडों मे लीथियम प्रयुक्त किया गया है जिसका वजन केवल 34 माइक्रो यह ऐनोड मनुष्य के बाल से भी बारीक है। एक सेल से घडी 200-30 चल सकती है। अमरीकी फर्मे भी लीथियम से काफी आशा लगाए बैठ

कुछ कार्बनिक लीथियम यौगिकों (स्टिऐरेट, पामिऐट तथा अन्य) के भ गुण विस्तृत ताप-परिसरण में वैसे के वैसे ही रहते है जिसकी वजह से प्रयोग सैनिक मशीनों के स्नेहक के रूप मे किया जाता है। यह लीथियमयुक्त स्नेहक ही तो है जिसकी वजह से ऐण्टार्कटिक महाद्वीप मे भारी जीपे ऐसे-ऐसे इलाकों में पहुंच जाता है जहा तापमान –80°c तक गिर जाता है। लीथियम-स्नेहक कारो में भी बहुत विश्वसनीय सिद्ध हुआ है। सोवियत कार 'लादा' के मालिक इसे 'शाश्वत स्नेहक' कहते है। इस कार के कुछ घर्षणरत पुर्जो को सिर्फ एक बार इस स्नेहक की जरूरत पडती है।



हालीवुड की हिट फिल्मों पर बनी चेकोस्लोवाकियन पैरोडी का एक पात्र फिल्म मे 'शैतानी काकटेल' लेता है। वह कई सारे गिलास खा जात भारतीय योगी भी तो अक्सर ऐसा करिश्मा दिखाते है। वे पहले गिलास है और फिर उसकी किरचे इतने स्वाद के साथ निगलते है जैसे कि इससे स्वादिष्ट कोई और चीज है ही नही। अगर हम पाठकों से यह पूछें : "क्या कभी कांच खाया है?" जवाब मिलेगा—"कैसा बेहूदा सवाल कर रहे हैं? नि रूप से कभी नहीं खाया।" परंतु पाठक भ्रम में हैं। साधारण कांच जल मे हो जाता है। यह बात जरूर है कि वह चीनी की तरह नहीं घुलता, पर जरूर है। सर्वाधिक सुग्राही वैश्लेषिक तुला यह बताती है कि गरम चाय गिलास के साथ हम 1/1000 ग्राम कांच खा जाते हैं। लेकिन काच बनाते अगर उसमें लैन्थेनम, जिर्कोनियम तथा लीथियम के लवण मिला दिए जा

उसकी विलेयता सौ गुना कम हो जाती है। इस तरह के काच पर गन्धकीय अम्ल तक का कोई असर नहीं पड़ता।

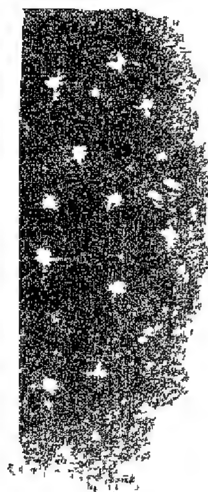
काच के उत्पादन में लीथियम की उपयोगिता केवल काच की विलेयता कम करने तक ही सीमित नही रह गई है। लीथियम से रूपांतरित काच में महत्त्वपूर्ण आप्टिकल गुण होते हैं। इस काच में उन्नत ताप-सह्यता उच्च विशिष्ट प्रतिरोधकता तथा निम्न परावैद्युत हानि जैसे बहुमूल्य गुण होते हैं। टेलीविजन ट्यूब के काच मे लीथियम विशेष रूप से मिलाया जाता है। अगर एक साधारण खिड़की ग्लास के ऊपर लीथियम लवणो का घोल पोत दिया जाए तो उन पर एक घनी सख्त परत जम जाएगी जो ग्लास की मजबूती दुगुनी कर देगी। उच्च तापमानों का भी अब इस ग्लास पर कोई असर नही पडेगा। लीथियम की बहुत थोड़ी मात्रा (0 5-1.5%) मिलाने से ही काच की ढलाई का तापमान काफी कम किया जा सकता है।

प्राचीन काल से ओस की बूंद को पारदर्शकता का प्रतीक माना जाता है। परंतु आधुनिक टेक्नालाजी में सिर्फ ओस की बूंद जैसे पारदर्शक काच से काम नही चलाया जा सकता। आज ऐसी प्रकाशकीय चीजों की जरूरत है जो प्रकाश की दृश्य किरणे ही नहीं बल्कि अदृश्य किरणें भी प्रेषित कर सकें, उदाहरण के लिए, पराबैंगनी किरणे। साधारण टेलीस्कोपों से खगोलज्ञ दूरस्थ मंदाकिनी के विकिरण का अध्ययन नहीं कर सकते। सभी ज्ञात प्रकाशकीय पदार्थों के मुकाबले में लीथियम फ्लोराइड मे पराबैंगनी किरणों की पारदर्शकता अधिक होती है। लीथियम फ्लोराइड के मोनोक्रिस्टलों से बने लेंस खगोलज्ञों के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं। इनकी सहायता से वे ब्रह्मांड के रहस्यों का पता चला रहे हैं।

कुछ विशेष प्रकार के ग्लेज, इनैमल, पेंट, बढ़िया किस्म की चीनी-मिट्टी तथा फेएन्स के उत्पादन में लीथियम बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। वस्त्र उद्योग में लीथियम के कुछ यौगिक कपड़ों के श्वेतन, रंगबंधन तथा रंजन में प्रयुक्त किए जाते है।

लीथियम लवणो की बदौलत आतिशबाजी की गोलियां तथा गोले अपने पीछे चमकीला हरे-नीले रंग का निशान छोड़ जाते हैं।

निम्न प्रयोग द्वारा लीथियम के पाइरोटेक्निकल गुणों का प्रदर्शन किया जा सकता है। चीनी की एक डली लें और उसे आग से जलाने की कोशिश करें। डली पिघलनी शुरू हो जाएगी पर जलेगी नहीं। लेकिन जलाने से पहले अगर डली पर तंबाकू की राख लगा दी जाए तो वह बड़ी सरलता से जलने लगेगी और जलते समय एक अतिसुंदर नीली ज्वाला निकलेगी। इसकी वजह यह है कि





बहुत सारे पौधों की तरह तबाकू में भी लीथियम की काफी मात्रा विद्यमान होती है। जिस समय तबाकू की पत्तिया जलती है कुछ लीथियम यौगिक राख में रह जाते है जिनके कारण चीनी की डली में से नीली ज्वाला निकलती है।

अभी तक हमने जितनी भी बाते बताई हैं वे लीथियम के गौण उपयोगो पर प्रकाश डालती है। आइए, हम अब इसके असली गुणों व उपयोगो की चर्चा शुरू करते है। हमारा इशारा परमाणु और्जिकी की ओर है जिसमें लीथियम निकट भविष्य में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता रहेगा। वैज्ञानिकों ने यह स्वीकार किया है कि न्यूट्रानो की सहायता से समस्थानिक लीथियम-6 के नाभिक बड़ी आसानी से नष्ट किए जा सकते हैं। लीथियम का नाभिक जैसे ही न्यूट्रॉन अवशोषित करता है वह अस्थाई प्रकृति का हो जाता है तथा दो नए परमाणुओ में विभाजित हो जाता है · हल्की निष्क्रिय गैस हीलियम तथा दुर्लभतम अतिभारी हाइड्रोजन, इसे ट्राइटियम कहते हैं। बहुत अधिक उच्च ताप होने पर ट्राइटियम परमाणु तथा हाइड्रोजन के एक अन्य भारी समस्थानिक-ड्यूटीरियम के परमाणुओ का सयोजन हो जाता है जिसके परिणामस्वरूप ऊर्जा की बृहत् मात्रा बनती है (तापनाभिकीय ऊर्जा)।

लीथियम-6 के समस्थानिक तथा ड्यूटीरियम के यौगिक पर जब न्यूट्रानो की वर्षा की जाती है तो तापनाभिकीय

प्रतिक्रियाएं पूरे जोर पर होती हैं। इसका प्रयोग लीथियम रिएक्टर में नाभिकीय ईंधन के रूप मे किया जाता है। यह यूरेनियम ईंधन से बेहतर रहता है। लीथियम सुगमता से प्राप्त हो जाता है, यूरेनियम से सस्ता पड़ता है तथा रेडियोऐक्टिव विघटन पदार्थ भी नहीं बनाता है। इसके अलावा इस प्रक्रिया का नियंत्रण भी सरल होता है।

लीथियम-6 में मंद गति वाले न्यूट्रानों को पकड़ने की क्षमता होने के कारण इसका प्रयोग यूरेनियम रिएक्टरों में प्रतिक्रियाओं की तीव्रता के नियंत्रक के रूप मे भी किया जाता है। इस गुण के कारण यह समस्थानिक विकिरण संबंधी स्क्रीन तथा अतिदीर्घ अवधि वाली नाभिकीय बैटरियों मे इस्तेमाल किया जाता है। आशा है कि निकट भविष्य में लीथियम-6 परमाणु उड्डयन-यन्त्रों में मंद न्यूट्रानों के अवशोषक की तरह प्रयुक्त होने लगेगा।

अन्य क्षारीय धातुओं की भांति लीथियम भी नाभिकीय मशीनों में ताप-वाहक के रूप मे प्रयुक्त होता है। इस काम के लिए कम दुर्लभ समस्थानिक लीथियम-7 ठीक रहता है (प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले लीथियम में इसकी मात्रा 93% होती है)। अपने हल्के 'भाई' की तरह लीथियम-7 ट्राइटियम के उत्पादन के लिए कच्चे माल का काम नहीं कर सकता, इसलिए तापनाभिकीय तकनीक के लिए इसका कोई महत्त्व नहीं है। लेकिन यह तापवाहक की भूमिका बड़ी सफलता से निभाता है। इस कार्य मे लीथियम-7 के निम्न गुण इसकी सहायता करते हैं: उच्च ताप-धारिता तथा ताप-चालकता, द्रवावस्था का बृहत् तापीय परास, नगण्य श्यानता तथा निम्न घनत्व।

पिछले कुछ समय से राकेट तकनीक में लीथियम का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। पृथ्वी के गुरुत्वीय बल से मुक्त होकर अंतरिक्ष में पहुंचने के लिए ऊर्जा की बहुत बड़ी मात्रा की आवश्यकता पड़ती है। विश्व के प्रथम अंतरिक्ष यात्री यूरी गागरिन ने जिस अंतरिक्ष यान पर यात्रा की थी उसे अंतरिक्ष मे ले जाने वाले राकेट में 6 इंजन लगे हुए थे जिनकी कुल क्षमता 2 करोड़ अश्व-शक्ति थी। दूनीपर पनबिजलीघर जैसे 20 बिजलीघरों की शक्ति मिलाकर इसके बराबर होगी।

इस बात में कोई शक नहीं कि राकेट के ईंधन का चुनाव एक महत्त्वपूर्ण समस्या है। अभी तक सबसे उपयुक्त ईंधन मिट्टी का तेल साबित हुआ है (जी हां, हम उसी मिट्टी के तेल की बात कर रहे है जो जमाने से मनुष्य के काम आ रहा है)। इस ईंधन के लिए उपचायक की भूमिका द्रव ऑक्सीजन निभाता है। इसके दहन में इतनी ऊर्जा निकलती है जो नाइट्रोग्लिसरीन की ऐसी ही मात्रा के दहन से उत्सर्जित ऊर्जा से ढाई गुना अधिक होती है। नाइट्रोग्लिसरीन



विस्फोटक पदार्थ माना जाता है।

ईंधन का भविष्य काफी उज्ज्वल दिखाई दे रहा है। 50 से अधिक
: को राकेटों के ईंधन के रूप मे प्रयुक्त करने के सिद्धांत तथा
ापना सर्वप्रथम दो अद्वितीय सोवियत वैज्ञानिको ने की। वे थे--यू
फे. त्सान्देर। इस काम के लिए सबसे अधिक उपयुक्त धातुओ
महत्त्वपूर्ण स्थान है (केवल बेरिलियम की ताप-वाहन क्षमता इससे
ुक्त राज्य अमरीका में राकेटों के लिए ऐसे ठोस ईंधन के पेटेण्ट
के हैं जिसमे लीथियम की मात्रा 51 से 68% तक रहती है।
बात यह है कि राकेट-इंजनो के काम के दौरान लीथियम लीथियम
करता है। एक तरफ तो ईंधन का घटक होने के कारण लीथियम
पैदा कर देता है। दूसरी ओर मृत्तिका-पदार्थों की उच्च तापरोधकता
: के तुंडों तथा दहन-कक्ष पर लीथियम का लेप चढ़ा दिया जात
थियम ईंधन के नष्टकारी प्रभाव का मुकाबला कर सकते हैं। इस
लीथियम मृत्तिका-पदार्थ 'स्पूमेलाइट' है।

जमाना आ गया है जब तकनीक मे इस्पात, पीतल तथा काच
न्न सश्लिष्ट बहुलक पदार्थ प्रयुक्त किए जा रहे हैं। लेकिन जब
इस प्रकार के बहुलकों को आपस में मिलाना चाहते है या किसी
साथ उनका सयोजन कराना चाहते हैं उन्हें बड़ी कठिनाई क

क्योंकि यह धातु के साथ ठीक तरह से संयोजित नहीं हो पाता था। सोवियत वैज्ञानिकों ने बहुलकों की विभिन्न पदार्थों के साथ नाभिकीय वेल्डिंग की एक बिल्कुल नई विधि ढूंढ़ निकाली है। जिन पदार्थों या बहुलकों को जोड़ना होता है उनकी सतह पर लीथियम या बोरान के यौगिकों की पतली सी परत लगा दी जाती है। ये यौगिक एक किस्म से 'नाभिकीय गोंद' का कार्य करते हैं। अब इन सतहों पर न्यूट्रानों की वर्षा की जाती है, जो नाभिकीय अभिक्रियाएं उत्पन्न करती हैं। जिनके दौरान ऊर्जा बहुत बड़ी मात्रा में उत्सर्जित होती है। इसके फलस्वरूप बहुत अल्प समय के लिए (सेकेंड के 10 अरबवें हिस्से से भी कम समय) इन बहुलकों या पदार्थ के कुछ सूक्ष्मस्थानों पर तापमान सैकड़ों तथा हजारों डिग्री तक पहुंच जाता है लेकिन ये कुछ क्षण ही वेल्डिंग के लिए काफी होते हैं। इनके दौरान स्पर्शक-तलों के अणुओं का विस्थापन हो जाता है।

साधारणतया मेंडेलीफ की आवर्त सारणी के शीर्ष वामपक्ष के आरंभिक तत्त्व प्रकृति में प्रचुर मात्रा मे पाए जाते हैं, उदाहरण के लिए, सोडियम, पोटैशियम, मैग्नीशियम, कैल्सियम तथा ऐलुमिनियम। परंतु इनका पड़ोसी लीथियम एक बहुत ही विरल धातु है। प्रकृति में लगभग 30 खनिज ऐसे हैं जिनमें यह बहुमूल्य धातु विद्यमान है। इनमे सबसे मुख्य खनिज स्पोडुमीन (ट्राइफेन) है। इस खनिज के क्रिस्टल देखकर रेल की पटरी पर बिछे स्लीपरों या वृक्ष-स्तंभों की याद आ जाती है। कभी-कभी इन क्रिस्टलों का आकार बहुत ही बड़ा होता है। अमरीका के दक्षिणी डकोटा राज्य में इस खनिज का एक ऐसा क्रिस्टल मिला है जिसकी लंबाई 15 मीटर से भी अधिक है तथा वजन दसियो टन है। अमरीकी भंडारों में स्पोडुमीन की दो अतिसुंदर किस्में पाई गई है—अल्पमूल्य खनिज हिडनाइट तथा कुंजाइट, जिनका रंग क्रमशः पन्नी हरा तथा गुलाबी-बैंजनी है।

लीथियम के उत्पादन के लिए आवश्यक आधारभूत कच्चे माल का काम ग्रेनाइट पेग्माटाइट कर सकता है जिसके प्रकृति में अनगिनत भंडार हैं। अनुमान है कि एक घन किलोमीटर ग्रेनाइट में 1,00,000 से अधिक टन लीथियम होता है। आज दुनिया के सभी देशों मे जितने लीथियम का उत्पादन हो रहा है वह सब मिलाकर भी इस संख्या से कई गुना कम है। लीथियम के अलावा ग्रेनाइट निक्षेपों में नियोबियम, टैण्टेलम, जिर्कोनियम, थोरियम, यूरेनियम, नियोडिमियम, सीजियम, सीरियम, प्रोजियोडिमियम तथा अन्य कई विरल तत्त्व उपस्थित हैं। परंतु समस्या यह है कि इन मूल्यवान तथा विरल तत्त्वों को ग्रेनाइट में से निकाला कैसे जाए?

आज वैज्ञानिक ऐसे तरीके खोजने में व्यस्त हैं जो 'खुल जा सिम-सिम'

की तरह ग्रेनाइट के खजाने खोल देंगे। इसमे कोई शक नहीं कि उन्हे इस कार्य मे सफलता प्राप्त होगी।

लीथियम की कहानी समाप्त करने से पहले हम अमरीका के सुप्रसिद्ध भोतिकविद् राबर्ट वुड के जीवन की एक मजेदार घटना का वर्णन करना चाहेगे। इस घटना मे लीथियम ने वहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। 1891 मे हार्वड विश्वविद्यालय के स्नातक वुड सुप्रसिद्ध प्रोफेसर रेमसे से रसायन पढने के लिए बाल्टीमोर आए। वे विश्वविद्यालय के नजदीक एक बोर्डिंग-हाउस मे ठहरे। कुछ दिनो में दूसरे विद्यार्थियो से उन्हें पता चला कि उनकी मकान-मालकिन नाश्ते मे अक्सर जूठी चीजें देती हे। जो चीजें शाम को डिनर के समय लडके प्लेटो मे छोड देते थे, उनको वह सुवह नाश्ते में रख देती थी। लेकिन समस्या यह थी कि इस बात को सिद्ध कैसे किया जाए?

वुड कठिन-से-कठिन समस्या का हल ढूढने के लिए प्रसिद्ध थे। इस बार भी उनकी बुद्धि ने लड़कों की समस्या हल कर दी। एक दिन शाम को डिनर के समय उन्होंने प्लेट मे मास के कई सारे टुकड़े छोड दिए तथा चुपके से उन पर लीथियम क्लोराइड छिड़क दिया। इस यौगिक का आकार तथा स्वाद नमक जेसा होता हे तथा इसके खाने से कोई नुकसान नही होता। अगले दिन सुबह जब लडके नाश्ता करने बैठे, उन्होने मांस के कुछ टुकड़े उठा लिये और फिर स्पेक्ट्रोस्कोप मे उनका अध्ययन किया। उन्होंने स्पेक्ट्रम मे लाल रेखा देखी जो लीथियम के कारण उत्पन्न हो गई थी। मकान-मालकिन की चोरी पकड़ी गई। बहुत सालों बाद वुड ने बडे मजे के साथ लोगो को बताया कि किसी जमाने मे उन्होंने जासूस का काम भी किया था।

अंतरिक्ष-युग की धातु

कहानियां सच सिद्ध हो रही हैं–महारानी क्ल्योपेट्रा की पन्ने की खानें–रोमन सम्राट् का शौक–'यह हरा, शुद्ध, चमकीला तथा कोमल होता है'–'इनका' जाति के रेड-इंडियनों का रहस्य–अधिकारी बिना पूर्व सूचना के निरीक्षण करने आ गए–अनमोल पत्थर रूस में वापस आ जाता है–'हरी सुबह और खूनी शाम'–शिलदा नाम का कुत्ता बेरिलियम खोजता है–'घायल' क्रिस्टल की नुमाइश–एक सनसनीखेज खबर–परेशान करने वाला तत्त्व–झूठा आरोप–'राजा' रद्द कर दी गई–अंतरिक्ष में–संदेहजनक आर्डर–विस्फोट नहीं होगा–सबसे हल्के तत्त्वों का गुट–एक महत्त्वपूर्ण खोज–न्यूट्रॉन धीरे चलने लगते हैं–ध्वनि की विजय–परमाणु 'सूई'–कृत्रिम रत्न

"बेरिलियम की गिनती सर्वाधिक सैद्धांतिक तथा प्रायोगिक महत्व रखने वाले विशिष्ट तत्त्वो में की जाती है।

...आकाश पर विजय, हिम्मत से भरी जहाजी तथा बैलूनी उड़ानें हल्की धातुओं के बिना असभव हैं। आधुनिक वैमानिकी में मुख्यतः दो धातुओं का प्रयोग किया जा रहा है–ऐलुमिनियम तथा मैग्नीशियम, पर हमें दिखाई दे रहा है कि शीघ्र ही बेरिलियम भी इस कार्य में प्रयुक्त किया जाने लगेगा।

और तब हमारे हवाई जहाजों की गति हजारों किलोमीटर प्रति घंटा हो जाएगी।

भविष्य में बेरिलियम से बहुत आशाएं है!

भूरसायनज्ञ–आप लोगों को बेरिलियम के नए भंडार ढूंढ़ने चाहिए। रसायनज्ञ–आप लोग इस हल्की धातु को इसके साथी ऐलुमिनियम से अलग करने का तरीका सीख लें। शिल्पविज्ञानी ऐसी हल्की मिश्रधातुएं बनाएं, जो पानी में

न डूबे, जो इस्पात की तरह भारी हो, रबड़ जैसी लचीली हो, प्लेटिनम की भाति मजबूत हो तथा रत्नो की तरह शाश्वत हो...

हो सकता है कि आज ये शब्द कहानी-सी लगते हो। लेकिन आपको पता ही है कि हमारे देखने-ही-देखने कितनी कहानियो ने वास्तविकता का रूप ले लिया है, वे हमारी दिनचर्या का एक अग बन गई हैं। क्या आपको याद नहीं है कि कुछ अर्से पहले रेडियो तथा सवाक् चलचित्र भी एक कहानी ही तो समझे जाते थे।''

ये शब्द महान् सोवियत वैज्ञानिक अकादमीशियन आ. फेरस्मान (1883-1945) ने कहे थे जिन्होंने कुछ दशको पूर्व ही बेरिलियम का महत्त्व समझ लिया था।

निस्संदेह, बेरिलियम का असली उपयोग आने वाले दिनो में किया जाएगा। फिर भी आवर्त सारणी मे कुछ ऐसे तत्त्व है जिनका इतिहास बेरिलियम के इतिहास की तरह बहुत पुराना है।

2000 से भी ज्यादा साल पहले महारानी क्ल्योपैट्रा के गुलामों ने पन्ने की विख्यात खानो की खुदाई करके हरे रग के पत्थर के प्यारे-प्यारे क्रिस्टल ढूढ निकाले। ये खाने न्यूबी के रेगिस्तानी इलाको मे थी। ऊटो के काफिले इन पन्नों को लाल सागर ले आए, जहा से वे यूरोप, मध्य तथा सुदूरपूर्व के महलों में पहुच गए ओर बाइजेण्टीनी के सम्राटों, फारस के शाहों, चीन के बादशाहो तथा हिदुस्तानी महाराजाओं की शोभा बन गए।

पन्नो की चमक, शुद्धता तथा रगदीप्ति की सुंदरता ने इंसान को हमेशा मोहित किया है। पन्नो के रग अतिसुदर होते हैं—गहरा हरा, चमकीला हरा, झिलमिला हरा। रोमन सम्राट् नीरो तलवारबाजी देखने के लिए पन्ने के एक विशाल क्रिस्टल का इस्तेमाल करता था। सुप्रसिद्ध रूसी लेखक अ कुपरिन ने निम्न शब्दो मे इस पत्थर की व्याख्या की है : "पन्ने वसंती घास की तरह हरे, शुद्ध, चमकीले तथा कोमल होते है।''

अमरीका की खोज से पन्ने के इतिहास मे एक नई घटना घटी। स्पेनिश हमलावरों को मैक्सिको, पेरू तथा कोलबिया के मकबरों और मदिरों में गहरे हरे रंग के बडे-बडे पन्ने मिले।

कुछ सालो के दौरान उन्होंने बहुमूल्य खजाने को लूट लिया, परतु भरसक प्रयत्नों के बावजूद उन्हें यह नही पता चला कि इन रत्नो की खाने कहां हैं। केवल 16वीं शताब्दी के मध्य मे अमरीका के हमलावरो को 'इका' जाति के रहस्य का पता लगा और उनको कोलंबिया के पन्नो की खानों का रास्ता मालूम हो गया।

यूराल की एक छोटी नदी के पास जगल मे झाड़-झखाड इकट्ठा करते समय



एक मजदूर मैक्सिम कोझेव्नीकोव को 1831 में पहला पन्ना ... ही यूराल के बड़े-बडे चमकीले पन्ने विश्व में विख्यात हो...

1834 में यूराल की जैम-कटिंग फैक्टरी के मैनेजर ... अतिसुंदर विशाल पन्ना मिला जिसका वजन 2 किलोग्राम से ... ने इस अद्वितीय पत्थर की कटिंग खुद करने का फैसला कि... मालूम होता कि इस सुंदर रत्न की भूमिका उसके नसीब में ... होगी! परंतु यह घटना छिपी न रह सकी और इसकी खबर ... पहुच गई। शीघ्र ही अधिकारियो का एक दल उसके घर आ... ढूंढ़ निकाला और उसे राजधानी पहुंचा दिया। मैनेजर जेल ... उसने आत्महत्या कर ली।

पीटर्सबर्ग में भी यह पन्ना सरकारी खजाने तक नही ... वह काउंट पेरोव्स्की के पास रहा और उसके बाद ड्यूक कोचु... मे कोचुबेई की भू-संपत्ति लुटने के बाद पन्ना वियेना पहुच... सरकार ने एक बड़ी कीमत देकर इसे खरीद लिया। आज यह ... संघ की विज्ञान अकादमी के खनिजीय संग्रहालय की शोभ...

---

* लेनिनग्राद का पहला नाम।

पन्ने की गिनती बेरिलियम के खनिजो मे की जाती है। बेरिलियम परिवार के कुछ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सदस्य निम्न रत्न हैं नीला-हरा समुद्री जल जेसा ऐक्वामेरीन, गुलाबी वोरोब्येवीत, शराबी-पीला हेलिओदोर, पीला-हरा बेरिल, पानी जेसा शुद्ध फिनेकाइड, कोमल नीला यूक्लेस, पारदर्शी हरा क्रिसोबेरिल तथा इसकी आश्चर्यजनक विविधता-एलेग्जैण्ड्राइट, जो दिन में गहरा हरा तथा कृत्रिम प्रकाश मे किरमिजी रंग का हो जाता है। रूसी लेखक नि. लेस्कोव ने एलेग्जैण्ड्राइट की व्याख्या इन शब्दों मे की है : 'हरी सुबह और खूनी शाम।'

भू-पर्पटी मे बेरिलियम विरल धातु नही है, हालांकि ऐसा माना जाता है। इसका कारण यह है कि बेरिलियम खनिज का पता लगाना कठिन होता है। इसमे मानव का पुराना दोस्त कुत्ता उसका सहायक हो सकता है।

पिछले कुछ समय से अखबारों मे अक्सर यह खबर छपने लगी है कि भूविज्ञानी खनिज ढूढने में कुत्तों की मदद ले रहे हैं। प्राचीन काल से मनुष्य कुत्तो की अद्‌भुत घ्राणशक्ति से लाभ उठाता आ रहा है। लेकिन इनकी 'भूवैज्ञानिक प्रतिभा' किस श्रेणी की है? ये झबरे 'अयस्क अन्वेषक' कौन-कौन से खनिज ढूढ सकते है? 'इन प्रश्नो का उत्तर ढूंढने में सोवियत विज्ञान अकादमी के खनिजीय सग्रहालय ने हमारी मदद की।' ये शब्द डॉ. गे. वासील्येव के है जो बहुमूल्य खनिज ढूढने के इस नए तरीके के प्रारंभक है। वे जीव विज्ञान में डी एस-सी. की डिग्री से सम्मानित हैं। उन्होंने बताया कि धात्विक बेरिलियम के साथ किए गए प्रयोग मे उन्हें आशातीत सफलता मिली। उन्होने झिलदा नाम के एक कुत्ते को बेरिलियम सुघाया और फिर उसे इसे ढूढने का इशारा किया। असंख्य खनिजो में से कुत्ते ने केवल निम्न खनिज चुने : पन्ना, ऐक्वामेरीन, वोरोब्येवीत, फिनेकाइड, बर्ट्रेण्डाइट अर्थात् केवल वे खनिज जिनमें बेरिलियम विद्यमान है। अगली बार बेरिलियमयुक्त सभी पत्थर डॉ. वासील्येव ने अन्य पत्थरों में मिला दिए। इस बार भी कुत्ते ने उन्हें ढूढ लिया।

अब वैज्ञानिक ने फिर कुत्ते को इशारा किया। कुत्ते ने संग्रहालय का एक चक्कर लगाया और एक स्टैंड के सामने खड़े होकर भौंकना शुरू कर दिया। उस स्टैड पर एक विशाल पन्ना रखा हुआ था।

वनस्पति-जगत् के कुछ नमूने भी बेरिलियम की खोज में अपना योग दे सकते हैं। इनमें एक है—मामूली चीड का वृक्ष। इसकी विशेषता यह है कि वह मिट्टी से बेरिलियम का चूषण करते हुए अपनी छाल में उसको सांद्रित करता रहता हे। अगर चीड़ का वृक्ष बेरिलियम की खान के कहीं पास उगता है तो उसकी छाल में बर्च-वृक्ष या किसी दूसरे पेड की तुलना में दर्जनो गुना और मिट्टी की

तुलना में सैकड़ों गुना अधिक बेरिलियम पाया जाता है।

सभी बेरिलियमयुक्त खनिजों में केवल बेरिल ही ऐसा है जो औद्योगिक महत्त्व रखता है। प्रकृति में बेरिल अतिविशाल क्रिस्टलों के रूप में पाया जाता है। इनका वजन हजारों किलोग्राम तक पहुंच सकता है और इनकी लम्बाई कई मीटरों की हो सकती है। कुछ समय पहले मेडागास्कर द्वीप पर 380 टन वजन वाला बेरिल का क्रिस्टल पाया गया है जिसकी लंबाई 18 मीटर और चौड़ाई 3.5 मीटर है।

लेनिनग्राद के खनन संग्रहालय में एक क्रिस्टल रखा हुआ है जिसकी लंबाई 1.5 मीटर है। 1943 में द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान संग्रहालय की छत पर बम गिर जाने से इस क्रिस्टल को बहुत क्षति पहुंची। तब किसी ने इस बात को सोचा तक नहीं था कि भविष्य में यह क्रिस्टल फिर संग्रहालय की शोभा बढ़ाएगा। कुछ वर्षों बाद जौहरियों के कठिन परिश्रम से इसका पुनरुद्धार हो गया। आज इस संग्रहालय में क्रिस्टल के पास गोले की 2 किरचें रखी हुई हैं तथा एक अंतलेख पर इसकी गाथा लिखी हुई है। केवल यही चीजें बाकी रह गई हैं जो इस क्रिस्टल के 'ऑपरेशन' की याद दिलाती हैं।

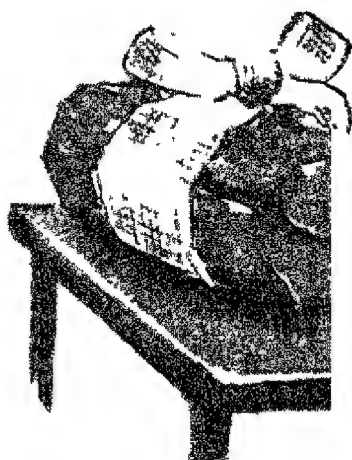
यह कोई अचंभे की बात नहीं कि जौहरियों के साथ-साथ रसायनज्ञ भी प्राचीन काल से बेरिलियम रत्नों में रुचि रखते आ रहे हैं।

अठारहवीं शताब्दी में, जब आवर्त सारणी में चौथे नम्बर का तत्त्व अभी अज्ञात था, कई वैज्ञानिकों ने बेरिल का विश्लेषण करने का प्रयास किया परन्तु उनमें से किसी को भी इसके अंदर उपस्थित नई धातु ढूंढ़ने में सफलता नहीं मिली। ऐसा लगता था जैसे कि यह तत्त्व ऐलुमिनियम तथा इसके यौगिकों के पीछे छिप गया है। इस तत्त्व के गुण ऐलुमिनियम से बहुत मिलते-जुलते थे लेकिन फिर भी दोनों में कुछ-न-कुछ फर्क जरूर था। इस अंतर की पुष्टि करने वाले सर्वप्रथम व्यक्ति थे—फ्रेंच रसायनज्ञ लुई निकोला वोक्लेन। फ्रेंच क्रांति के कैलेण्डर के छठे साल के छब्बीसवें वृष्टिमय दिन अर्थात् 15 फरवरी 1798 के दिन फ्रेंच विज्ञान अकादमी की बैठक में वोक्ले ने यह सनसनीखेज खबर दी कि बेरिल तथा पन्ने में एक नई 'मृदा' उपस्थित है जिसके गुण ऐलुमिना या ऐलुमिनियम ऑक्साइड से भिन्न हैं।

इस नए तत्त्व के लवणों का स्वाद मीठा था, अतः वोक्लेन ने इसका नाम 'ग्लूसिनियम' रखा (यूनानी शब्द ग्लूसि से, जिसका अर्थ है मीठा)। परंतु अब यह नाम केवल फ्रांस तक सीमित रह गया है। सुप्रसिद्ध रसायनज्ञों म. क्लाप्रोत तथा अ. एकेबेर्ग ने इसका नाम 'बेरिलियम' रखा और इसी नाम से यह तत्त्व

अन्य देशो मे जाना जाता है।

बेरिलियम तथा एलुमिनियम के गुणों में समानता होने के कारण आवर्त सारणी के जन्मदाता द. मेंडेलीफ को काफी मुश्किलों का सामना करना पडा। बात यह थी कि उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य मे इस समानता के कारण बेरिलियम 13.5 परमाणु भार वाली त्रिसंयोजक धातु समझी जाती थी, अतः सारणी मे इस धातु को कार्बन तथा नाइट्रोजन के बीच में होना चाहिए था। इसकी वजह से तत्त्वो के गुणों की निश्चित



क्रमबद्धता गलत साबित होने लगी तथा लोगो को आवर्त नियम की सत्यता सदेह होने लगा। परन्तु मेंडेलीफ अपनी बात पर डटे रहे। उन्हें बेरिलियम के पर भार पर शक था तथा उनके हिसाब से यह तत्त्व त्रिसंयोजक की जगह द्विसंयो था तथा इसमे मैग्नीशियम के गुण थे। इन बातों के आधार पर उन्होंने बेरिलि का परमाणु भार 9 मानकर इसे द्वितीय ग्रुप मे रख दिया। शीघ्र ही स्वी रसायनज्ञो ल. नेल्सन तथा ओ. पीटरसन ने मेंडेलीफ की बात स्वीकार कर हालाकि कुछ समय पहले यही दोनो वैज्ञानिक बेरिलियम को एक त्रिसंयोजक बता रहे थे। इस प्रकार आवर्त सारणी की 'शाति भंग करने वाले' तत्त्व बेरिलि से एक अतिमहत्त्वपूर्ण रासायनिक नियम को मान्यता प्राप्त हुई।

इस तत्त्व की किस्मत भी अपने भाई-धातुओं जैसी रही। हालाकि 1. मे ही जर्मन रसायनज्ञ फ. व्योलेर और उनसे स्वतंत्र रूप से फ्रांसीसी रसाय अ ब्यूसी ने यह धातु प्राप्त कर ली थी परंतु इसका शुद्ध धात्विक रूप प्र करने मे सफलता केवल 70 साल बाद मिली। फ्रेंच वैज्ञानिक प. लेबो ने सर्ग लवणों के विद्युत अपघटन से बेरिलियम को शुद्ध रूप में प्राप्त किया। यह अचंभे की बात नही है कि इस शताब्दी के आरंभ मे रासायनिक निदर्शिक मे इस धातु को 'निकम्मा'—'किसी काम का नही' बताया गया है।

बीसवी सदी में विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र में बहुत ज्यादा तरक्की है। इस उन्नति ने रसायनज्ञों को मजबूर कर दिया कि वे बेरिलियम को दी सजा पर पुनर्विचार करें। शीघ्र ही शुद्ध बेरिलियम के अध्ययन से उन्हें यह

चला कि इस धातु में बहुसंख्यक मूल्यवान गुण विद्यमान हैं।

बेरिलियम की गिनती सबसे हल्की धातुओं में की जाती है। इसके साथ साथ यह बहुत ज्यादा मजबूत धातु होता है। [illegible] निर्माण कार्य में प्रयुक्त इस्पात से भी ज्यादा मजबूत होता है। अगर 1 वर्ग मिलीमीटर [illegible] वाला ऐलुमिनियम का तार 10 किलोग्राम से कुछ ज्यादा वजन की चीज बर्दाश्त कर सकता है (उदाहरणतया पानी से भरी बाल्टी) तो इतनी ही मोटाई का बेरिलियम तार इससे भी छः गुना अधिक वजन सह सकता है जो एक वयस्क व्यक्ति के वजन के लगभग है। साथ-ही-साथ इसका गलनांक ऐलुमिनियम तथा मैग्नीशियम की तुलना में काफी उच्च होता है। इतने सारे उपयोगी गुणों के कारण आज बेरिलियम वैमानिकी की मुख्य धातु है। हवाई जहाजों में बेरिलियम के बने पुर्जे ऐलुमिनियम के पुर्जों से ज्यादा हल्के होते हैं।

उत्तम ताप-चालकता, उच्च ताप-धारिता तथा ताप-प्रतिरोधकता जैसे महत्त्वपूर्ण गुणों के कारण बेरिलियम तथा इसके यौगिक अंतरिक्ष तकनीक में ताप-संरक्षक के रूप में प्रयुक्त किए जाते हैं। अमरीकी समाचारपत्रों के अनुसार अंतरिक्ष यान 'मर्करी' के केबिन के ताप-संरक्षक तत्त्व बेरिलियम से बनाए गए थे।

बेरिलियम के बने पुर्जे उच्च परिशुद्धता तथा विमीय स्थायित्व वाले होते है। इनका प्रयोग घूर्णदर्शी-उपकरणों के निर्माण में किया जाता है जो रॉकेटों, अंतरिक्ष यानों तथा कृत्रिम भू-उपग्रहों के अभिविन्यास तथा स्थिरीकरण-तंत्रों में प्रयुक्त किए जाते हैं।

अंतरिक्ष तकनीक में बेरिलियम के एक अन्य गुण से बहुत आशाएं हैं। इसके दहन के दौरान ताप का बहुत बड़ी मात्रा में उत्सर्जन होता है। इस गुण की दृष्टि से कोई दूसरी धातु बेरिलियम का मुकाबला नहीं कर सकती। इसीलिए अंतरिक्ष-तकनीक के निर्माता बेरिलियम को चंद्रमा तथा पृथ्वी से ज्यादा दूर स्थित ग्रहों की ओर उड़ान के समय राकेटों के उच्चतम और्जिकीय ईंधन का संभावित पूरक समझते हैं। इसके अलावा बेरिलियम से राकेट-व्यवस्थाओं के ईंधन-टैंकों का निर्माण करने का प्रस्ताव भी है। इस हालत में अगर ईंधन खत्म हो जाएगा तो कुछ नहीं बिगड़ेगा क्योंकि इसके बाद टैंक ईंधन के रूप में जलाया जा सकेगा।

वैमानिकी में ताम्र तथा बेरिलियम के ऐलॉयों—बेरिलियम कांस्य का उपयोग काफी विस्तृत है। श्रांति व संक्षारण के प्रति उत्तम प्रतिरोधकता, बृहत् ताप परिसर में प्रत्यास्था तथा उच्च वैद्युत और ताप चालकता रखने वाले पुर्जों के निर्माण में इन ऐलॉयों का प्रयोग किया जाता है। ये पुर्जे बहुत ज्यादा मजबूत भी होते

इन गेलाया के वन होने है उच्च तन्यता के कारण बरिलियम कास्य का प्रयोग बहुत बढ़िया किस्म क स्प्रिग वनाने मे किया जाता है। ये स्प्रिग कभी नही टूटते, इनमें करोडों लोड-चक्र सहने की क्षमता होती है।

इस मौके पर हम द्वितीय विश्व युद्ध की एक रोचक घटना बताना चाहेगे, जिसका स्प्रिगों के साथ सवध रहा है। हिटलर के दिनों जर्मनी को वेरिलियम का कच्चा माल मिलना बंद हो गया था। सामरिक महत्त्व की इस धातु का खजाना अमरीका के पास था। तब जर्मन लोगों ने एक चालाकी खेली। उन्होंने तटस्थ देश स्वीटजरलेड को बेरिलियम कास्य की तस्करी का क्षेत्र बनाना चाहा। शीघ्र ही अमरीकी फर्मों को स्वीटजरलेड के 'घड़ीसाजों' से इतने अधिक आर्डर मिले कि इतने बेरिलियम कास्य से आने वाले 500 साल में विश्व की सारी घडियो के स्प्रिंग बनाए जा सकते थे। परंतु जर्मनों की चालाकी पकड़ी गई और अमरीका ने इन आर्डरो का माल नहीं भेजा। परंतु फिर भी जर्मन लोग कही-न-कहीं से बेरिलियम कास्य ले रहे थे क्योंकि नई उच्चवेगी मशीनगनों से लैस फासिस्टों के हवाई जहाजों मे बेरिलियम कास्य के स्प्रिंगों का प्रयोग किया जा



रहा था

अधिकांश धातुओं तथा ऐलॉयों का अक्सर एक ... जाता है जिसके फलस्वरूप वे धीरे-धीरे नष्ट होने जाते हैं। ... है—श्रांति। इस्पात में अगर बेरिलियम की थोड़ी सी मात्रा मिला ... श्रांति तुरंत दूर हो जाती है। मोटरकारों में कार्बन स्टील ... आठ या साढ़े आठ लाख झटकों के बाद टूट जाते हैं परंतु अगर इस स्टील में 'विटामिन Be' मिला दिया जाए तो स्प्रिंग इस रोग से सुरक्षित रहते हैं और करोड़ों झटके सह सकते हैं।



स्टील पर जब पत्थर या अन्य किसी धातु से चोट मारी जाती है तो चिंगारिया निकलने लगती हैं परंतु बेरिलियम कांस्य के साथ ऐसा नही होता। इस गुण के कारण यह ऐलॉय विस्फोट कार्यो के लिए आवश्यक औजारों के निर्माण मे प्रयुक्त किया जाता है। ये औजार खनन कार्यो, बारूद फैक्टरियों तथा तेल भंडारों मे अति उपयोगी सिद्ध होते हैं।

बेरिलियम मैग्नीशियम के गुणों पर बहुत ज्यादा असर डालत... के कुछ हजारवें अंश मिलाने से प्रगलन और ढालन (700° के आ... होने पर) के समय मैग्नीशियम ज्वलन से सुरक्षित रहता है। इ... बेरिलियम ऐलॉयो की वायु तथा जल में संक्षारणता भी बहुत ज्याद... है।

अपने रासायनिक गुणों की बदौलत बेरिलियम स्टील का एक ... हो सकता है। यह स्टील में उपस्थित ऑक्सीजन से इसको मुक्... अफसोस है कि यह धातु बहुत महंगी है जिसके कारण धात्विकी... मात्रा मे उपयोग असंभव है। परंतु धातुकर्मियों ने बेरिलियम को... मे अतिउपयोगी पाया है। स्टील की चीजों, पुर्जो की ऊपरी सतह... धातु का गाढ़ा लेप चढ़ा दिया जाए (बेरिलिकरण) तो उनकी मज... तथा प्रतिरोधकता बहुत ज्यादा बढ़ जाती है। यह काम बेरिलियम

मात्रा से संभव है।

एक्स-रे टेक्नीशियन बेरिलियम के बहुत ज्यादा पक्ष में है क्योंकि जितनी भी धातुएं वायु में आक्सीकृत नही होती हैं। उनमें से एक्स-रे किरणें प्रेषित करने की सर्वाधिक क्षमता बेरिलियम में है। आज सारी दुनिया मे इस धातु का प्रयोग एक्स-रे ट्यूबों की 'खिडकियों' के निर्माण मे किया जाता है। इन 'खिडकियो' की पारदर्शकता पुरानी 'खिडकियों' से लगभग 20 गुना अधिक है जिनमें बेरिलियम की जगह एलुमिनियम का इस्तेमाल किया जाता था।

बेरिलियम ने परमाणु तथा इसके नाभिक के संरचना सिद्धांत के विकास मे अतिमहत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। तीसरे दशक के आरंभ मे जर्मन भौतिकविदो व. बोटे तथा ग. बैकर ने बेरिलियम पर एल्फा-कणो की बमबारी करके 'बेरिलियम विकिरण' ढूढ निकाला। यह काफी क्षीण था परंतु इसकी वेधन-क्षमता उच्च थी, किरणे लेड की कई सेंटीमीटर मोटी चादर के आरपार निकल गई। इस विकिरण की प्रकृति सन् 1932 में एक अंग्रेज वैज्ञानिक जेम्स चेडविक ने ज्ञात की। उन्होने बताया कि यह विकिरण विद्युत निष्क्रिय कणो के प्रवाह से बना है तथा प्रत्येक कण का द्रव्यमान प्रोटॉन के द्रव्यमान के लगभग बराबर होता है। इन कणो का नाम 'न्यूट्रॉन' रखा गया।

विद्युत आवेश के अभाव के कारण न्यूट्रॉन अति सरलता से अन्य तत्त्वो के परमाण्विक नाभिकों में प्रवेश कर जाते हैं। इस गुण के कारण न्यूट्रॉन परमाण्विक आर्टिलरी के निर्माण मे एक अतिमहत्त्वपूर्ण स्थान ग्रहण कर चुका है। आज न्यूट्रॉन तोपे नाभिकीय प्रतिक्रियाओं के प्रेरण में विस्तृत रूप मे प्रयुक्त की जाती है।

बेरिलियम की परमाण्विक संरचना के अध्ययन से पता चला है कि इसमे न्यूट्रॉनों की प्रगहण-क्षमता निम्न हे परंतु उनकी प्रकीर्णता की क्षमता उच्च है। इस गुण के कारण बेरिलियम न्यूट्रॉनो को तितर-बितर कर देता है, उनकी दिशा बदल देता है तथा उनकी गति इस हद तक मंद कर देता है कि शृखला प्रतिक्रियाए अधिक प्रभावशाली ढंग से घटने लगती हैं। न्यूट्रॉनो की गति मंद करने वाले सभी कठोर पदार्थो मे बेरिलियम सबसे उत्तम माना जाता है। बेरिलियम न्यूट्रॉनों का एक अतिश्रेष्ठ परावर्तक है। यह उन्हें रिएक्टर के सक्रिय क्षेत्र में लौटा देता है तथा स्रवन नहीं होने देता है। इसके अतिरिक्त बेरिलियम में उच्च विकिरण रोधकता भी होती है। वहुत अधिक उच्च तापमान होने पर भी इसका यह गुण कायम रहता है।

इन अद्वितीय गुणों के कारण बेरिलियम की गणना परमाणु इंजीनियरी के सर्वाधिक आवश्यक तत्त्वों मे की जाती है।

इस बात में कोई शक नहीं कि बेरिलियम की ध्वनिप्रस के लिए बहुत महत्त्व रखती है। वायु में ध्वनि का वेग 330 होता है तथा जल में--1500 मीटर प्रति सकेंड। बेरिलियम ने सारे रिकार्ड तोड़ दिए हैं। इस धातु के माध्यम में ध्वनि का प्रति सेकेंड हो जाता है (अन्य धात्विक पदार्थों की तुलना में 2

बेरिलियम ऑक्साइड में भी बहुत उपयोगी गुण होते है। उच्च तापसह (गलनांक 2500° C से अधिक), उत्तम रासायनिक प्रतिरोधक तथा उत्तम ताप चालक होने के कारण इसका प्रयोग प्रेरण भट्टियों तथा क्रूसिबलों के उत्पादन में किया जाता है। ये क्रूसिबलें धातुओं तथा ऐलॉयों के गलन में प्रयुक्त की जाती है। उदाहरण के लिए, निर्वात मे बेरिलियम के गलन के लिए केवल बेरिलियम ऑक्साइड की बनी क्रूसिबलों का प्रयोग किया जा सकता है क्योंकि वे इसके साथ किसी भी प्रकार की प्रतिक्रिया नहीं करती हैं। बेरिलियम ऑक्साइड परमाणु रिएक्टरो के ताप-विलगन तत्त्वों में प्रयुक्त होता है।



आशा की जाती है कि बेरिलियम ऑक्साइड के तापरोध पृथ्वी की गहराइयों के अध्ययन में भी किया जाएगा। वैज्ञानिकों बनाई है जिसके अंतर्गत पृथ्वी के अंदर 32 किलोमीटर की गह मृदा के नमूने लिये जा सकेंगे। इस कार्य में वे एक 'परमाण करेंगे। यह सूई एक परमाणु रिएक्टर जैसी होगी जिसे बेरिलि तापरोधक डिब्बे के अंदर रखा जाएगा और जिसका नुकीला सि ऐलॉयों से बना होगा।

कांच-उद्योग में भी बेरिलियम के प्रयोग का काफी अर मिलाने से कांच की दृढता, प्रकाश आवर्तन-क्षमता और रासाय बढ जाती है। बेरिलियम ऑक्साइड और इसके दूसरे ऐलॉयों के

की सभी किरणों—पराबैंगनी से लेकर इफ्रारेड तक—के लिए उच्च पारदर्शी विशेष कांच बनाए जाते है।

बेरिलियम ऑक्साइड कृत्रिम पन्नों और दूसरे रत्नों के उत्पादन के लिए भी कच्चे माल की भूमिका निभाता है। ऐसे रत्न उच्च दाब और ताप के वातावरण मे बनाए जाते है। यह प्रक्रिया आज न केवल प्रयोगशालाओं में बल्कि औद्योगिक परिस्थितियों मे भी अपनाई जा रही है।

अद्वितीय वैज्ञानिक तथा स्वप्नदर्शी अ फेर्समान की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हो गई है। बेरिलियम ने अल्प समय मे ही वैज्ञानिकों की आशाएँ पूरी कर दीं। किसी जमाने मे यह एक तुच्छ धातु थी, इसे बहुत कम लोग जानते थे परंतु आज इसकी गिनती बीसवी शताब्दी की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण धातुओ में की जाती है।



भ्रांति का मुकाबला करने वाला योद्धा

कीमियागरों का [illegible]-खजाना पानी में [illegible]—आतिशबाजी नहीं की गई—माचिस की तीली से ही जल जाता है—पृथ्वी की निचली परतों में—'पहाड़ी चमड़ा'—कौन-सा तरीका बेहतर है?—वरुण देवता आराम की नींद सो सकते हैं—सबकी साझेदारी समान है—कठिन परिस्थितियों में—धात्विकी की दुनिया में—पानी के नीचे की दुनिया—कवच तैयार है—'एक...दो...तीन, फोटो खींच रहा हूं'—इससे ज्यादा जरूरी काम भी हैं—केले खाने चाहिए—हृद्रोग का खतरा—'लड़का चाहते हैं या लड़की?'—एक नया दुर्गलनीय यौगिक—ग्रिगनार्ड का योगदान—ब्यूटोलिन की तरह—इसका असली उपयोग भविष्य में होगा—चंद्रमा की यात्रा

मध्ययुग में कीमियागरों पर एक ही धुन सवार था, वे दिन-रात पारस-मणि की खोज में व्यस्त थे। उन्होने यह उम्मीद लगा रखी थी कि जैसे ही पारस-मणि मिल जाएगी, वे इसकी मदद से घटिया किस्म की धातुओं को स्वर्ण में बदल सकेंगे।

'अनुसंधानकर्ता' इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अलग-अलग तरीके अपना रहे थे। कुछ लोगों का विचार था कि लेड को इतना गरम किया जाए कि वह 'रेड सिंह' में परिवर्तित हो जाए (अर्थात् गलनाक नक) तथा फिर अगर इसे अंगूरो की खट्टी शराब मे उबाला जाए तो पारस-मणि प्राप्त हो जाएगी। दूसरे लोगों का खयाल था कि जानवरो का मूत्र पारस-मणि का सर्वोत्तम स्रोत है। ऐसे भी लोग थे जो यह कहते थे कि पारस-मणि जल में छिपी है।

अठारहवी शताब्दी के अत मे एक अंग्रेज़ कीमियागर ने, जो शायद तीसरी धारणा का समर्थक था, एप्सम शहर के पास बहते एक झरने का खनिज जल उबालकर देखा। उसे पारस-मणि तो मिली नहीं, हां एक नया लवण जरूर प्राप्त

हो गया। इस लवण का स्वाद कड़वा था और यह मृदु विरेचक था। कुछ सालों बाद पता चला कि जब इस लवण की 'स्थायी क्षारक'* से प्रतिक्रिया कराई जाती है तो एक सफेद रंग का भुरभुरा, हल्का पाउडर प्राप्त होता है। यूनान के एक शहर मैग्नेजी के पास एक ऐसा खनिज मिला जिसके तापानुशीतन से भी बिल्कुल ऐसा ही पाउडर प्राप्त हुआ। इस समानता के कारण एप्सम में पाए गए लवण का नाम श्वेत मैग्नीशिया रखा गया।



1808 में एक अंग्रेज वैज्ञानिक हेम्फ्री डेवी ने श्वेत मैग्नीशिया के विश्लेषण से एक नया तत्त्व प्राप्त किया जिसका नाम मैग्नीशियम रखा। इस नए तत्त्व के आविष्कार की खुशी में आतिशबाजी नहीं की गई क्योंकि उस वक्त तक किसी को भी यह पता नहीं था कि इस नए तत्त्व में उत्तम आतिशबाजी गुण विद्यमान है।

मैग्नीशियम सफेद-चांदी जैसे रंग की एक बहुत हल्की धातु है। यह धातु ताम्र या लौह से 5 गुना हल्की है। ऐलुमिनियम जैसी हल्की धातु भी इससे डेढ गुना भारी है। मैग्नीशियम का गलनांक ज्यादा उच्च नहीं है—केवल 650° C, परंतु साधारण परिस्थितियों में इसका गलन काफी कठिन कार्य है। वायु में 550°C तक गरम किए जाने पर यह भभक उठता है तथा इसमें से चमकीली, झिलमिली ज्वाला निकलने लगती है (इस महत्त्वपूर्ण गुण के कारण आतिशबाजी में मैग्नीशियम का उपयोग बहुत प्रचलित है)। इस धातु को जलाने के लिए माचिस की एक तीली ही काफी रहती है। क्लोरीनयुक्त वातावरण में यह साधारण ताप पर ही जलने लगती है। इसके दहन के समय बहुत बड़ी संख्या में पराबैंगनी किरणें निकलती हैं तथा ऊष्मा का बहुत बड़ी मात्रा में उत्सर्जन होता है : इस ईंधन की कुछ ग्राम मात्रा से एक गिलास बर्फीले पानी को उबाला जा सकता है।

वायु में यह धातु शीघ्रता से धुंधली पड़ जाती है क्योंकि इसके ऊपर

* उन दिनों सोडे तथा पोटैश को इस नाम से जाना जाता था।

ऑक्साइड की परत जम जाती है इस ऑक्साइड के। [illegible] में धातु का इससे अधिक उपचयन नहीं हो पाता

मैग्नीशियम एक बहुत आक्रमणशील धातु है। यह कई आगामी में अधिकांश धातुओं को ऑक्सीजन तथा क्लोरीन से वंचित कर देती है। इस धातु पर कई अम्लो, सोडों, कास्टिक क्षारो, पेट्रोल, मिट्टी के तेल, खनिज तेलों आदि का कोई प्रभाव नहीं पडता परतु समुद्री जल के सामने यह बेबस है; इसके अंदर यह तुरन्त घुल जाती है। ठडे जल के साथ मैग्नीशियम आमतौर पर किसी भी तरह की प्रतिक्रिया नही करता परतु गरम जल में से यह बड़ी तेजी से हाइड्रोजन निकाल देता है।

भू-पर्पटो में मैग्नीशियम प्रचुर मात्रा मे विद्यमान है। मेंडेलीफ की आवर्त सारणी मे इस धातु के जितने भी 'साथी' है उनमे से केवल सात प्रकृति मे इससे अधिक मात्रा में मिलते हैं। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि विशेषतया पृथ्वी की निचली परतो मे इस धातु के विशाल भडार मिलने चाहिए। मैग्नीशियम लगभग 200 ज्ञात खनिजो में विद्यमान है। इनमें से एक खनिज में विशेष गुण होता है एक रूमाल की तरह इसकी तह की जा सकती है, कागज की भांति इसके अदर कोई भी चीज लपेटी जा सकती है और इसकी धज्जियां भी बड़ी आसानी से उडाई जा सकती हैं।

ऐसे खनिज का एक अद्वितीय नमूना 1953 में सुदूर पूर्व में मिला। एक बार जब मजदूर लोग खानों में बहुधातुओं के अयस्क ढूंढ रहे थे, उन्हें एक छोटी-सी गुफा दिखाई दी। इस गुफा के अंदर एक भूरे-सफेद रग का दोहरा 'पर्दा' लटक रहा था जिसकी लंबाई 1.5 मीटर के आसपास और चौड़ाइ लगभग 1 मीटर थी। खनिकों ने जब इस 'पर्दे' को छूकर देखा तो वह स्वेड चमड़े की तरह नर्म तथा लचकदार लगा। वे इस पर्दे के 'धागों' का हल्कापन देखकर आश्चर्य में डूब गए थे।

इस अनोखी चीज को मास्को भेज दिया गया। रासायनिक विश्लेषण से पता चला कि इस खनिज का मुख्य अवयव मैग्नीशियम का ऐलुमिनियमसिलिकेट था तथा यह ऐस्बेस्टॉस ग्रुप का खनिज था। इसे सर्वप्रथम सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक फेर्समान ने बीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक में यूराल पर्वतमाला के पाली गोर्स्क नामक भंडार में खोजा। इसी वजह से इसका नाम पालीगोर्स्काइट रखा गया। इन अनोखे गुणों के कारण इस खनिज को अक्सर 'पहाडी चमड़ा' कहते हैं। सुदूर पूर्व में मिला यह खनिज अब सोवियत विज्ञान अकादमी के खनिजीय संग्रहालय की शोभा बना हुआ है। विशेष बात यह है कि इतने बड़े आकार का 'पहाडी

पहली बार पाया गया है।

डालामाइट तथा कार्नेलाइट मैग्नीशियम के उत्पादन के मुख

के उत्पादन की दो विधियां है—विद्युत-तापीय तथा विद्युत-अपघटनी
धातु सीधी मैग्नीशियम ऑक्साइड से प्राप्त की जाती है। इस
भी अपचायक का प्रयोग किया जा सकता है, जैसे, कार्बन
। यह विधि काफी सरल है तथा पिछले कुछ समय से इसक
रहा है परंतु फिर भी अभी तक विद्युत-अपघटनी विधि मैग्नीशियम
दन की मुख्य विधि है। इस विधि के अंतर्गत गलित मैग्नीशियम
अपघटन किया जाता है, मुख्यतः क्लोराइड लवणो का। इस
अतिशुद्ध होती है, उसमें 0.01% से कम अवसाद होते है
केवल भू-पर्पटी में ही प्रचुर मात्रा में उपलब्ध नहीं है। महासागरों
इसके विपुल भंडार विद्यमान हैं। आपको जानकर आश्चर्य
लीटर समुद्री जल में 4 किलोग्राम मैग्नीशियम होता है। महासागरों
ल में इस तत्त्व की कुल मात्रा 6×10^{16} टन है। जिन लोगों
कुल वास्ता नहीं पडता, वे भी इस संख्या की विशालता का
ते है। फिर भी सुविधा के लिए हम यह बात निम्न उदाहरण
गे कालक्रम के आरंभ होने से अब तक मानवजाति 6 अरब



सेकंड (6×10^{10}) से ज्यादा हो चुकी है। अगर हमारे युग के प्रथम दिनों से ही मनुष्य ने समुद्री जल से मैग्नीशियम प्राप्त करना शुरू कर दिया होता तो यह धातु तब खत्म होती जब मनुष्य प्रति सेकंड रसरी 10 लाख टन मात्रा समुद्र से निकालता।

लेकिन वरुण देवता को चिंता करने की जरूरत नहीं है। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान इस धातु का उत्पादन अपनी चरम सीमा पर पहुंच गया था परंतु फिर भी साल-भर में (सेकंड में नहीं!) केवल 80 हजार टन धातु प्राप्त की गई। इस धातु को समुद्री जल से प्राप्त करने की विधि काफी सरल है। सबसे पहले समुद्री जल विशाल टैंकों में भर लेते हैं। फिर इस जल में समुद्री सीपों का बनाया बुझा चूना मिलाते हैं। इस मिश्रण को 'मैग्नीशियम दुग्ध' कहते हैं, जो बाद में मैग्नीशियम क्लोराइड में परिवर्तित हो जाता है। इसके उपरांत विद्युत अपघटन द्वारा मैग्नीशियम को क्लोरीन से अलग कर दिया जाता है। आजकल बहुत सारे देशों में, विशेषकर, जिन देशों में मैग्नीशियम खनिज के अपने बड़े भंडार नहीं हैं, समुद्री जल से प्राप्त करने वाले मैग्नीशियम कारखाने हैं। मैग्नीशियम के अलावा समुद्री किनारों पर स्थित इन कारखानों में नमक और सज्जी (Glauber salt) बड़ी मात्रा में मीठा पानी तथा कास्टिक सोडे का उत्पादन भी किया जा रहा है।

खारी झीलों से भी मैग्नीशियम प्राप्त किया जा सकता है क्योंकि इनके जल में भी मैग्नीशियम क्लोराइड उपस्थित होता है जिसे प्राकृतिक लवण जल भी कहते हैं। सोवियत संघ में मैग्नीशियम के भंडार क्रीमिया (साकी तथा सासिक-इवाश झीलें), क्रीमिया (साकी तथा सासिक-इवाश झीलें) वोल्गा नदी के आसपास के इलाकों (एल्टन झील) तथा कुछ अन्य क्षेत्रों में हैं।

हां, तो आपको पता चल गया है कि मैग्नीशियम क्या चीज है और इसे प्राप्त कैसे किया जाता है। परंतु क्या आप जानते है कि इस धातु तथा इसके यौगिकों का उपयोग क्या है?

बहुत अधिक हल्का होने के कारण मैग्नीशियम निर्माण-कार्य के लिए एक अच्छे पदार्थ का काम कर सकता है। परंतु दुर्भाग्यवश शुद्ध रूप में यह धातु बहुत ही कोमल तथा अस्थायी होती है। इसी कारण इंजीनियर लोग इसको अन्य धातुओं के साथ मिलाकर विभिन्न ऐलॉय बनाते हैं। मैग्नीशियम के ऐलुमिनियम, जिंक तथा मैंगनीज ऐलॉयो का उपयोग विस्तृत है। इस गुट के हर सदस्य की साझेदारी समान है : ऐलुमिनियम तथा जिंक ऐलॉय की मजबूती बढ़ाते हैं, मैंगनीज ऐलॉय की सक्षारण-प्रतिरोधता उच्च करता है और मैग्नीशियम ऐलॉय का वजन हल्का बनाए रखता है। मैग्नीशियम ऐलॉयों के बने पुर्जे ऐलुमिनियम के पुर्जों के

मुकाबले 20-30% हल्के तथा ढलवे लोहे और इस्पात के पुर्जो की तुलना मे 50-75% हल्के होते है। हाल मे कई देशो मे निर्माण-कार्य मे प्रयुक्त मेग्नीशियम ओर लीथियम के ऐलाय से बने ढाचों का उपयोग करने का विचार है। कोई सदेह नही कि यह ऐलॉय 'बेरोजगार' नही रहेगा।

हवाई जहाजों के निर्माण मे मैग्नीशियम ऐलॉयो के हल्के वजन के कारण इनका बहुत बड़े पैमाने पर प्रयोग किया जा रहा है। 1934 मे ही सोवियत सघ मे एक हवाई जहाज 'सेर्गो आर्झोनिकीद्जे' बनाया गया, जिसमे करीब सारे-के-सारे पुर्जे मेग्नीशियम ऐलॉयो के बने थे। यह जहाज सभी परीक्षणों मे सफल रहा तथा लम्बे अर्से तक कठिन उडानें भरता रहा। दूसरे महायुद्ध के समय मेग्नीशियम ऐलॉयों से हवाई जहाजों के पहिए, उपकरणों की बॉडी और दूसरे पुर्जे बनाए जाते थे।

राकेटों के निर्माण मे भी मैग्नीशियम बहुत प्रचलित है। मैग्नीशियम ऐलॉय की तापरोधकता की बदौलत अंतरिक्ष-यानों मे इससे बने बाहरी हिस्से स्टील के बने हिस्सों की तुलना में कम गरम होते है।

मोटरकारों के निर्माण, कपड़ा-उद्योग, पुस्तकों के प्रकाशन, रेडियो-तकनीक, प्रकाशिकीय उपकरणों मे हल्के ऐलॉयों का उपयोग किया जा रहा है। मेग्नीशियम धात्विकी में भी बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। विभिन्न धातुओ (वैनेडियम, क्रोमियम, टाइटेनियम, जिर्कोनियम आदि) के उत्पादन मे इस धातु का प्रयोग एक अपचायक के रूप में किया जाता है। गलित लौह मे मैग्नीशियम मिलाने से लौह की सरचना तथा यान्त्रिकीय गुण उत्तम हो जाते है। इसके अलावा मैग्नीशियम इस्पात तथा ऐलॉयो के अपचयन मे भी सहायक सिद्ध होता है (यह उनके अदर ऑक्सीजन की मात्रा कम कर देता है जिसकी उपस्थिति हानिकारक होती है)।

सोवियत संघ में इंजीनियर पेट्रोल-उद्योग मे भी मैग्नीशियम का इस्तेमाल कर रहे हैं। कैस्पियन सागर मे तेल की निकासी के उद्देश्य से जो प्लेटफार्म लगाए गए है, उनके स्टील के ढांचों पर मैग्नीशियम की संरक्षी परत चढ़ाई गई है। इंग्लेड के इंजीनियरों ने मेग्नीशियम के लिए एक और नया काम ढूंढ़ लिया है। उन्होने इस धातु के ऐलॉयो से एक विशेष प्रकार का कवच बनाया है जो पानी के अदर बहुत अधिक जल-स्थैतिक दाव सहने की क्षमता रखता है।

मैग्नीशियम (पाउडर, तार या रिबन) के जलने पर तीव्र, चमकीला, झिलमिली ज्वाला निकलती है। इस अद्वितीय गुण के कारण युद्ध-सामग्री के निर्माण मे मैग्नीशियम का बहुत बड़े पैमाने पर प्रयोग किया जाता है। मैग्नीशियम से सिग्नल देने वाले राकेट, ट्रेसर बुलेट, गोले तथा अग्नि-बम बनाए जाते है। कुछ समय

पहले फोटोग्राफर लोग इस तत्त्व का बहुत प्रयोग करते थे . "एक दो. तीन फोटो खींच रहा हू।" उनके इतना कहते ही मेग्नीशियम पाउडर भक स जल उठता था और उसका प्रकाश फोटो के इच्छुकों के चेहरे स्पष्ट कर देता था। परतु अब इस कार्य में मेग्नीशियम पाउडर प्रयुक्त नही किया जाता, उसकी जगह शक्तिशाली विद्युत बल्ब इस्तेमाल किए जाते हैं।



लेकिन इससे मेग्नीशियम की सेहत पर कोई असर नहीं पड़ा। उसके पास इससे भी ज्यादा जरूरी काम हैं। वह सौर ऊर्जा के संचयन जैसे महत्त्वपूर्ण काम मे भाग लेता है। यह धातु क्लोरोफिल का एक घटक जादूगर की तरह सौर ऊर्जा का अवशोषण करता रहता है। क एसिड तथा जल को सम्मिश्रित कार्बनिक पदार्थों में परिवर्तन स्टार्च आदि, जो मनुष्यों तथा जतुओ के पोषण के लिए, है। कार्बनिक पदार्थो के संघटन की इस प्रक्रिया को प्रकाश synthesis) कहते हैं। इसके दौरान पत्तियां आक्सीजन नि क्लोरोफिल के बिना जीवन असभव है तथा मेग्नीशियम के असंभव है क्योकि इसके अंदर हमेशा इस तत्त्व की 2% म है। यह क्या बहुत ज्यादा है? आप खुद ही इस बात का ऐ वनस्पतियों के क्लोरोफिल मे कुल मिलाकर 10 खरब टन म है। वनस्पतियों के अतिरिक्त सभी प्राणियों में भी क्लोरोफि आपका वजन 60 किलोग्राम है तो आपके शरीर के अदर मैग्नीशियम होना चाहिए।

कुछ वर्ष पहले अमरीका में मिनेसोटा विश्वविद्यालय के वै प्रयोगों के आधार पर यह सिद्ध कर दिया कि अडे के छिल मैग्नीशियम होगा, वह उतना ही ज्यादा मजबूत होगा। इससे कि अगर मुर्गियो का दाना बदल दिया जाए तो उनके अंडों जा सकती है। यह खोज मुर्गीपालन उद्योग के लिए कितना उ

ह इसकी कल्पना आप निम्न आंकड़ा से कर सकते है—अकेले मिनेसोटा राज्य मे हर साल 10 लाख डालर से ज्यादा मूल्य के अंडे टूटकर व्यर्थ जाते है।

मैग्नीशियम का चिकित्सा में विस्तृत उपयोग किया जाता है। ऊपर हम एप्सम लवण-गन्धकाम्लिक अम्ल के मैग्नीशियम लवण (मैग्नीशियम सल्फेट) का वर्णन कर चुके हैं जो एक प्रभावकारी मृदु विरेचक के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। उच्च जठर अम्लता, हृद्दाह तथा अम्ल विषाक्तन के उपचार में शुद्ध मैग्नीशियम ऑक्साइड (भर्जित मैग्नीशियम) का प्रयोग किया जाता है। मैग्नीशियम पर ऑक्साइड पेट की गडबड़ी दूर करने की बेहतरीन दवा के नाम से प्रसिद्ध है।



आंकड़ा से यह पता चला है कि गरम जलवायु वाले देशो के लोगों की रुधिर वाहिकाएं ठंडे देशों के वासियों की रुधिर वाहिकाओ के मुकाबले कम ऐंठती हैं। मालूम है कि मैग्नीशियम के कुछ लवणो के अन्तर्शिरीय या अंतर्पेशीय इंजेक्शन से रुधिर वाहिकाओ की ऐंठन दूर की जा सकती है। फल और सब्जियां खाने से मनुष्य के शरीर के अदर इन लवणों की आवश्यक मात्रा जमा हो जाती है। खुमानी, आड़ू तथा फूल गोभी मे मैग्नीशियम की भरपूर मात्रा होती है। एशिया के लोगो के भोजन में मैग्नीशियम काफी होता है, इसी कारण से इन लोगों को यूरोप व अमरीका के लोगों के मुकाबले ऐथिरोस्क्लेरोसिस तथा अन्य हृद्रोग कम होते हैं। अंग्रेज़ डॉक्टरों की सिफारिश है कि शरीर के लिए मैग्नीशियम की आवश्यक आधी दैनिक मात्रा (0.3-0 5 ग्राम) को पूरा करने के लिए मनुष्य को दिन में चार केले खाने चाहिए।

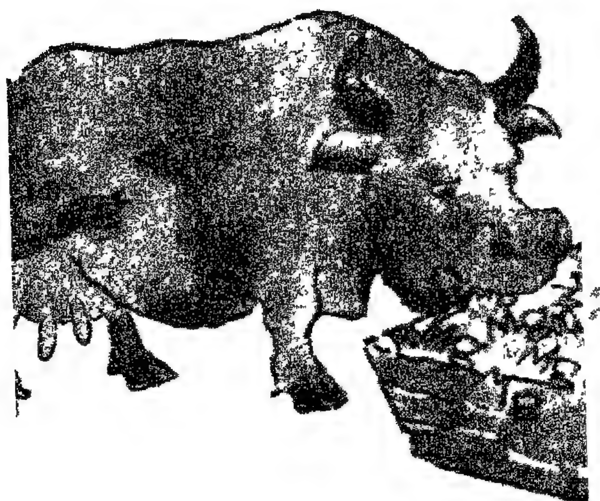
हगरी के वैज्ञानिको ने जानवरों पर प्रयोग करके यह सिद्ध किया है कि अगर जीव के अदर मैग्नीशियम की कमी है तो उसे हृद्रोग होने की ज्यादा सभावना है। कुछ कुत्तों को मैग्नीशियम की भरपूर मात्रा वाले लवणों का भोजन खिलाया गया और दूसरे कुत्तों को मैग्नीशियम की बहुत कम मात्रा दी गई। परिणाम यह हुआ कि जिन कुत्तों ने मैग्नीशियम कम खाया था वे हृद्रोग के शिकार हो गए।

चिडचिडे तथा आसानी से उत्तेजित हो जाने वाले लोगों को शांत प्रकृति

वाले लोगों के मुकाबले हृदयरोग ज्यादा होते हैं इसका कारण समय वे उत्तेजित होते हैं उनके अंदर उपस्थित मैग्नीशियम

फ्रेंच जीवविज्ञानियों का विचार है कि बीसवीं सदी समस्या—श्रांति के इलाज में भी मैग्नीशियम सहायक सिद्ध हो सक कार्यों से यह पता चला है कि पूर्णतया स्वस्थ लोगों की तुलना के रुधिर में मैग्नीशियम की मात्रा कम होती है। नार्मल मात्र अगर जरा-सा भी विचलन आ जाता है तो मनुष्य पर इसका असर जरूर पड़ता है।

हाल में ही फ्रांस के जीवविज्ञानियों ने एक बड़ी रोचक उनका कहना है कि संतान का लिंग कुछ तत्त्वों पर निर्भर कर के लिए, अगर एक भावी मां पोटैशियम की अधिक मात्रा वाले है तो उसके लड़का पैदा होने की ज्यादा संभावना है परंतु अग मे कैल्सियम तथा मैग्नीशियम की बहुतायत है तो लड़की पैदा हो है। आशा है कि डॉक्टर लोग शीघ्र ही भावी माताओं के लिए विशे कर लेंगे जिसके आधार पर 'इच्छानुसार' लड़का या लड़की पैदा हो परंतु इससे पहले यह देखना पड़ेगा कि इन तत्त्वों का यह असर भी है या नहीं। क्योंकि फिलहाल ये प्रयोग...गायों तक सीमित



मैग्नीशियम यौगिकों का उपयोग केवल चिकित्सा तक ही सीमि दाहरण के लिए, मैग्नीशियम ऑक्साइड रबड़ उद्योग में, सीमेंट तथ

ईंटों के उत्पादन में प्रयुक्त किया जाता है। मैग्नीशियम पराक्साइड का प्रयोग कपडों के श्वेतन में किया जाता है। मेग्नीशियम सल्फेट वस्त्र तथा कागज उद्योग मे तीक्ष्ण रजक के रूप मे प्रयुक्त किया जाता है। इसका कार्बाइट तापरोधक-सामग्रियो के निर्माण मे प्रयुक्त होता है।

मेग्नीशियम की गतिविधियों का एक और विस्तृत क्षेत्र है—कार्बनिक रसायन। स्प्रिट तथा एनिलीन जेसे महत्त्वपूर्ण कार्बनिक पदार्थो के निर्जलीकरण मे मेग्नीशियम पाउडर के रूप मे प्रयुक्त किया जाता है। कार्बन-मैग्नीशियम योगिक बहुत महत्त्व रखते हैं (इनके अदर मैग्नीशियम का परमाणु सीधा कार्बन के परमाणु के साथ आबधित होता है)। इन पदार्थो का संश्लिष्ट रसायन मे बहुत अधिक सख्या मे प्रयोग किया जाता है। क्षारीय मैग्नीशियम हैलाइड इनका एक बढिया उदाहरण है। इनमें हैलोजेन (क्लोरीन, ब्रोमीन, आयोडीन) भी शामिल हैं। इन यौगिकों का महत्त्व समझाने के लिए इतना बताना ही काफी है कि 1912 मे फ्रेंच रसायनज्ञ ग्रिगनार्ड को क्षारीय मैग्नीशियम हैलाइड तथा कार्बनिक यौगिको के संश्लेषण की विधि खोजने के उपलक्ष्य मे नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

.इस प्रकार हमने यह देख लिया है कि प्रकृति तथा राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था मे मेग्नीशियम विस्तृत भूमिका निभाता है। लेकिन हमारे विचार से अभी यह कहने में जल्दी नही करनी चाहिए कि हमे इस तत्त्व की हर बात पता चल गई है।

मैग्नीशियम ऐलॉय चद्रमा पर पहुंच चुके है। स्टेशन 'लूना 24' पर चद्रमा की मिट्टी का नमूना प्राप्त करने के लिए जो स्वचलित ड्रिल लगाया गया था उसके पुर्जो के निर्माण में इन ऐलॉयो का प्रयोग किया गया था। इस ड्रिल रूपी रोबोट मे कई विशेषताएं होनी चाहिए थीं। पहली बात तो यह कि वह हल्का होना चाहिए था क्योकि अगर एक किलोग्राम वजन भी फालतू होता तो इसके लिए बडी मात्रा में अतिरिक्त ईधन की जरूरत पड़ती। दूसरी बात यह कि उसके पुर्जे पूर्णतया मजबूत होने चाहिए थे। अगर इस बात मे जरा-सा भी संदेह होता कि वक्त पर वे खराब हो सकते है तो उन्हे इतनी जिम्मेदारी का काम नही सौंपा जा सकता था। इस बात में कोई शक नहीं कि चंद्रमा की सतह पर ड्रिलिंग का काम बहुत ही उत्तरदायी तथा कठिन था।

इंजीनियरों ने स्वचलित ड्रिल के निर्माण-कार्य में अति हल्के तथा अति मजबूत टाइटेनियम तथा मैग्नीशियम ऐलॉय प्रयुक्त करने का निश्चय किया। इस ड्रिल को अंतरिक्ष में भेजने से पहले पृथ्वी पर विभिन्न प्रकार की मिट्टी तथा अत्यधिक कठोर पर्वती चट्टानो की ड्रिलिग करके इसकी परीक्षा की गई। आरभ मे यह कार्य

साधारण जलवायुवी परिस्थितियों म और [illegible] गभार निवात म चंद्रमा जैसा ताप [illegible] को 120 C) किया गया [illegible] सफलतापूर्व[illegible] ही स्वचालित स्टेशन की उड़ान भी सफलतापूर्वक [illegible] मिट्टी का नमूना पृथ्वी पर पहुंच गया।

मृदा से 'रजत'

रोमन सम्राट् टिबेरियस 'खतरे' की जड़ ही मिटा देता है–पेरिस की प्रदर्शनी में सनसनी–सम्राट् के महल में भोजन का आयोजन–एक 'सांठगांठ'–चीन के एक मकबरे का रहस्य–इंजीनियर की दूरदर्शिता–ऐलुमिनियम के 'साथियों' की खोज–वैज्ञानिक विल्म को सफलता में विश्वास नहीं आता–'रैकों' का निर्माण बंद कर दिया जाता है–संग्रहालय में रखी एक चीज की वास्तविकता कुछ और ही निकली–हर बुराई में कुछ अच्छाई भी होती है–उपग्रह 'डको' रेडियो-संकेत प्रतिबिंबित करता है–'ऐलुमिनौट' समुद्र में डूब रहा है–मास्को और लेनिनग्राद के बीच–'सेण्ट ऐलुमिनियम नामक गिरजा'–बियर-बार खुल जाएगा?–घड़ी पर और छाती में–गिटार की धुन हो जाए–कंबल एक सिगरेट-केस के अंदर आ जाता है–चंद्रमा की जगह मंगल ग्रह की हालत क्या है?–ऐलुमिनियम कूड़े-कचरे से बनाया जाता है।

प्राचीन इतिहासकार प्लीनी ज्येष्ठ ने 2000 वर्ष पुरानी एक अनोखी घटना का वर्णन किया है। एक बार रोमन सम्राट् टिबेरियम के दरबार में एक अनजान व्यक्ति हाजिर हुआ। उसने सम्राट् को एक चादी जैसा चमकीला परतु वजन मे बहुत हल्का प्याला भेंट किया ओर बताया कि यह धातु उसने मृदा से प्राप्त की है और इस धातु का अभी तक किसी और को पता नही है। सम्राट् को उस कारीगर का धन्यवाद करना चाहिए था परतु वह दूरदर्शी नही था। उसे डर लगा कि कही यह धातु उसके खजाने में भरे सोने-चांदी का महत्त्व न खत्म कर दे, अतः उसने कारीगर का सिर कटवा दिया तथा उसकी वर्कशाप भी नष्ट करवा दी जिससे कि भविष्य मे इस 'खतरनाक' धातु को कोई और न बना सके।

यह कहना कठिन है कि [illegible] 'सुनार' [illegible] तथा और [illegible] ने [illegible] में [illegible] के लगभग [illegible] तथा प्रकृतिविद् [illegible] के इतिहास में एक नया पृष्ठ 1754 [illegible] ने यह स्थापित किया कि [illegible] तथा किसी अज्ञात धातु का ऑक्साइड [illegible] इस ऑक्साइड का नाम ऐलुमिना रखा गया।

पारासेलसस ने जिन ऐलमों का [illegible] किया [illegible] में भी ज्ञात थे। यूनानी इतिहासकार हेरोडोटस, जो ईसा से [illegible] पूर्व जीवित थे, के कथनानुसार प्राचीन काल में लोग कपड़ों के रंगने के लिए एक खनिज यौगिक का प्रयोग करते थे जिसे वे 'ऐलुमेन' कहते थे। यह वही 'ऐलम' था जिसका अध्ययन जर्मन वैज्ञानिक ने किया।

जहां तक ऐलम की बात है तो इसका [illegible] आठवीं-नौवीं शताब्दियों के इतिहास में मिलता है। यहां भी ऐलम का प्रयोग कपड़ों के रंगने तथा मोरक्को चमड़े के उत्पादन में किया जाता था। [illegible] यूरोप में कई ऐलम प्लांट चालू हो गए थे।

1754 में जर्मन रसायनज्ञ मार्गग्राफ को ऐलम मृदा प्राप्त करने में सफलता मिल गई जिसकी चर्चा 200 साल पहले पारासेलसस ने की थी। कई वर्षों बाद अंग्रेज़ वैज्ञानिक हेम्फ्री डेवी ने ऐलम में छिपी धातु को प्राप्त करने का प्रयास किया। 1807 में उन्हें क्षारों के विद्युत-अपघटन से सोडियम तथा पोटैशियम प्राप्त करने में सफलता मिल गई परंतु इसी ढंग से वह ऐलम का अपघटन नहीं कर पाए। कुछ सालों बाद इसी तरह का प्रयास स्वीडिश वैज्ञानिक बेर्ज़ेलियस ने किया परंतु वह भी असफल रहे। यह सब होते हुए भी वैज्ञानिकों ने उनके 'काबू से बाहर' इस धातु का नाम रखने का फैसला किया। बेर्ज़ेलियस ने इसका नाम बदल कर ऐलुमिनियम रख दिया।

प्राचीन रोम के उस अज्ञात कारीगर की तरह धात्विक ऐलुमिनियम प्राप्त करने मे सर्वप्रथम सफलता एक डेनिश वैज्ञानिक एर्स्टेड को मिली। 1825 में एक रासायनिक पत्रिका में उनका एक लेख छपा जिसमें यह बताया गया था कि प्रयोगों के परिणामस्वरूप वैज्ञानिक ने 'एक ऐसी धातु का टुकड़ा प्राप्त किया है जिसका रंग तथा चमक टिन जैसी है।' परंतु यह पत्रिका बिल्कुल भी लोकप्रिय नहीं थी जिसके कारण वैज्ञानिकों को एर्स्टेड की खोज का पता नहीं चला। उन दिनों एर्स्टेड

खुद विद्युतचुबक संबधी अनुसधान-कार्य में इतने ज्यादा व्यस्त थे कि उन्होंने अपनी इस खोज पर तनिक भी ध्यान नही दिया।



इस घटना के 2 साल बाद युवा परतु पहले से ही विख्यात जर्मन रसायनज्ञ व्योलर अपने मित्र एर्स्टेड से मिलने कोपेनहेगन आए। एर्स्टेड ने उन्हे बताया कि वे ऐलुमिनियम की प्राप्ति पर आगे और कोई प्रयोग नही करने जा रहे है। परतु व्योलर की इस धातु में बहुत ज्यादा दिलचस्पी थी, अतः जैसे ही जर्मनी लौटे, उन्होने तुरत इस समस्या पर कार्य शुरू कर दिया। 1827 के अत मे उनका एक लेख छपा जिसमें उन्होंने इस नई धातु को प्राप्त करने की विधि का वर्णन किया था। सच कहें कि व्योलर की इस विधि द्वारा ऐलुमिनियम को केवल दानो के रूप में प्राप्त किया जा सकता था जिनका आकार एक पिन की टोपी से ज्यादा बड़ा नही था। परंतु वैज्ञानिक ने प्रयोग जारी रखे और अत में उन्हें ऐलुमिनियम को द्रव्य के रूप मे प्राप्त करने मे सफलता मिल ही गई। परतु इस कार्य मे .. 18 साल लग गए।

उस समय तक यह नई धातु काफी प्रसिद्ध हो गई थी, परंतु बहुत कम मात्रा में प्राप्त होने के कारण इसका मूल्य स्वर्ण से भी अधिक था तथा इसे प्राप्त करना कोई सरल कार्य नहीं था।

यह कोई अचंभे की बात नही कि यूरोप के एक राजा ने जब ऐलुमिनियम के बटनो वाला कुरता पहनना शुरू कर दिया, वह अन्य राजाओ को तुच्छ नजरों से देखने लगा। ये राजा और तो कुछ नहीं कर सके, बस, इस धनी राजा से जलने जरूर लगे और उस दिन का इंतजार करने लगे, जब वे भी ऐसा कुरता बनवा सकेंगे।

खुशकिस्मती से उन्हें ज्यादा इतजार नहीं करना पडा : 1855 मे पेरिस में आयोजित एक विश्व प्रदर्शनी में 'मृदा से प्राप्त रजत' दिखाया गया, जिसने सारे

दुनिया में सनसनी पैदा [illegible] तथा मिल्लिया दिखाए गए थे जिन्हें [illegible] डेविल ने प्राप्त किया था

इस प्रदर्शनी में [illegible] फ्रांस का सम्राट था, जो [illegible] के नाम से प्रसिद्ध था। सम्राट को अपना ठाट-बाट दिखाने का बड़ा शौक था। [illegible] का आयोजन किया जिसमें सम्राट के परिवार के सदस्यों तथा [illegible] मेहमानों को ऐलुमिनियम की छुरियां तथा कांटे दिए गए और बाकी [illegible] को सम्राट की ज्यादती बहुत चुभ रही थी तथा खाने की [illegible] था, परन्तु किया क्या जाता। उन दिनों सम्राट का भी इतनी [illegible] नहीं था कि हर एक मेहमान के लिए ऐलुमिनियम की छुरी और कांटे का प्रबंध कर सके।

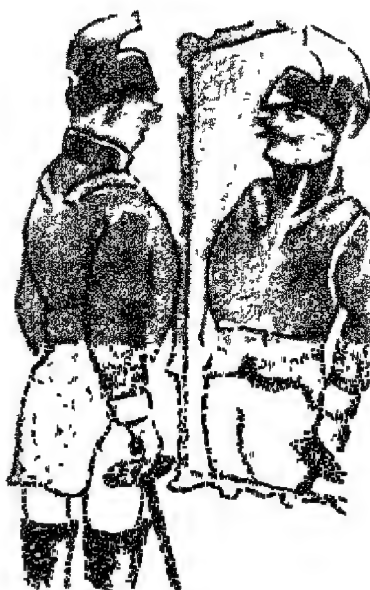
शीघ्र ही नेपोलियन ने एक ऐसी योजना बनाई जिससे उसकी ख्याति दूर-दूर तक फैल जाती। परंतु सम्राट का मुख्य उद्देश्य यही था कि अन्य राजाओं को कैसे नीचा दिखाया जाए। उसने अपने सैनिकों को ऐलुमिनियम के कवच पहनाने का फैसला किया। सम्राट ने सैण्ट-क्लेर डेविल को बहुत बड़ी धनराशि देकर ऐलुमिनियम की बड़ी मात्रा तैयार करने का आदेश दिया। डेविल ने व्होलर की विधि के आधार पर ऐलुमिनियम बनाने की आधुनिक तकनीक तो निकाली परंतु फिर भी धातु का मूल्य कम नहीं हुआ।

यही कारण था कि फ्रेंच सैनिकों को ऐलुमिनियम के कवच पहनकर घूमने का मौका नहीं मिला परन्तु सम्राट ने अपने निजी अंगरक्षकों का ख्याल फिर भी रखा। शीघ्र ही नेपोलियन के अंगरक्षकों ने ऐलुमिनियम के कवचों में परेड करनी शुरू कर दी।

फ्रांस के बोनापार्टवादी क्षेत्रों ने सैण्ट-क्लेर डेविल द्वारा शुद्ध ऐलुमिनियम की प्राप्ति की बात से लाभ उठाकर यह प्रचार करने की कोशिश की कि इस धातु के आविष्कार का श्रेय फ्रांस का है। परन्तु सैण्ट-क्लेर डेविल ने एक वास्तविक वैज्ञानिक होते हुए इस झूठ दावे का एक अनोखा उत्तर दिया। उन्होंने अपने ऐलुमिनियम से एक तमगा बनाकर इस पर फ्रेड्रिख व्होलर का चेहरा तथा 'सन् 1827' अंकित किया और जर्मन वैज्ञानिक को उपहारस्वरूप भेंट किया।

इन्ही दिनो विश्व प्रदर्शनी में 'डेविल का रजत' दिखाया गया। हो सकता है कि प्रदर्शनी के आयोजकों ने ऐलुमिनियम को विस्तृत उपयोग वाली धातु मान कर प्रदर्शनी मे रख दिया था परंतु इससे धातु की विरलता कम नहीं हुई। हां, यह बात जरूर है कि दूरदर्शी लोग तभी यह समझ गए थे कि बटन तथा कवच

के रूप में ऐलुमिनियम का उपयोग इस धातु के इतिहास की बहुत छोटी घटनाएं है। सुप्रसिद्ध रूसी लेखक नि चेरनीशेव्स्की (1828-1889) ने जब ऐलुमिनियम की बनी चीजों को पहली बार देखा तो उन्होंने निम्न शब्दों में इस धातु की प्रशंसा की . "इस धातु का भविष्य उज्ज्वल है। दोस्तो, आपके सामने समाजवाद की धातु रखी हुई थी।" 1863 में प्रकाशित उनके उपन्यास 'क्या करना है?' में निम्न शब्द मिलते हैं : ' इस अंदरूनी घर की वास्तुकला कितनी सरल है, खिडकियों के बीच की दीवार के हिस्से कितने छोटे-छोटे



है, खुद खिड़कियां कितनी विशाल, चौड़ी तथा छत तक ऊंची हैं।...पर ये फर्श तथा छतें किस चीज की बनी हैं? ये दरवाजे तथा खिडकियों की चौखटें किस चीज की बनी हैं? यह है क्या चीज? रजत? प्लेटिनम?. .हा, अब मैं समझ गया। साशा* ने मुझे इस धातु का बना एक तख्ता दिखाया था जो कांच की तरह हल्का था। अब तो औरतें इस धातु के बने कान के बुंदे तथा जडाऊ पिन प्रयोग करने लग पडी हैं। और हां, साशा यह भी कह रहा था कि वह दिन दूर नहीं, जब ऐलुमिनियम लकड़ी की जगह ले लेगा और संभव है कि पत्थर की जगह भी इस धातु का प्रयोग होने लगेगा। कितनी अमीरी दिखाई दे रही है! जिधर देखो, उधर ऐलुमिनियम...। इस हाल मे आधा फर्श नंगा है और आप देख ही रहे है कि वह ऐलुमिनियम का है...।'

उपर्युक्त भविष्यवाणी के बावजूद उन दिनों ऐलुमिनियम पहले की तरह जौहरी की धातु समझा जाता था। मजे की बात तो यह है कि 1889 में जब मेंडेलीफ लंदन मे थे, रसायन के विकास में अद्वितीय योगदान के उपलक्ष्य मे उन्हें एक मूल्यवान उपहार दिया गया : उन्हें स्वर्ण तथा ऐलुमिनियम की बनी एक तराजू भेंट की गई।

---

* उक्त उपन्यास का एक पात्र।

इस बीच फ्रांस में सेंट क्लेयर देविल ने इस दिशा में बड़े जोर-शोर से काम शुरू कर दिया। शीघ्र ही उन्होंने ला ग्लासियर नामक एक शहर में विश्व का प्रथम ऐलुमिनियम कारखाना खोल दिया। परंतु ऐलुमिनियम के उत्पादन के दौरान इतनी ज्यादा विषाक्त गैस निकली कि सारा शहर ही अस्वास्थ्यकर घोषित हो गया। शहर के निवासियों ने तकनीकी प्रगति की परवाह नहीं की और अपने स्वास्थ्य को प्राथमिकता देते हुए सरकार से इस बात का निवेदन किया। सरकार ने कारखाना हटाने का आदेश दे दिया। पहले कारखाना पेरिस के पास एक इलाके में लगाया गया पर बाद में वहां से भी इसे हटा दिया गया और फ्रांस के दक्षिण में ले जाया गया।

इस समय तक अधिकांश वैज्ञानिक यह समझ गए थे कि देविल के भरसक प्रयास के बावजूद उनकी विधि का कोई भविष्य नहीं है। विभिन्न देशों में रसायनज्ञों ने इस दिशा में अनुसंधान कार्य जारी रखा। 1865 में विख्यात रूसी वैज्ञानिक बेकेतोव ने ऐलुमिनियम के उत्पादन की एक नई रोचक विधि प्रस्तुत की जिसे शीघ्र ही फ्रांस तथा जर्मनी के ऐलुमिनियम कारखानों में अपना लिया गया।

ऐलुमिनियम के इतिहास की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना सन् 1886 में घटी जब एक अमरीकी मार्टिन हाल तथा एक फ्रेंच हेरूल्ट ने एक-दूसरे से स्वतंत्र रूप में कार्य करके विद्युत-अपघटन द्वारा इस धातु के उत्पादन की विधि खोज निकाली। इन दोनों की विधि कोई नई विधि नहीं थी। इससे पूर्व 1854 में एक जर्मन वैज्ञानिक बुन्सेन ने ऐलुमिनियम के लवणों के विद्युत-अपघटन से ऐलुमिनियम प्राप्त करने का सुझाव प्रस्तुत किया था। परंतु उनके इस प्रस्ताव का औद्योगिक प्रयोग केवल 30 साल बाद किया गया। चूंकि विद्युत-अपघटन विधि में ऊर्जा की बहुत बड़ी मात्रा में आवश्यकता थी अतः यूरोप में इस विधि से ऐलुमिनियम प्राप्त करने का सर्वप्रथम कारखाना न्यूहाउजन (स्वीटजरलैंड) में लगाया गया। इस जगह के चुनाव का मुख्य कारण रेईन नदी का जलप्रपात था जिससे विद्युत बनाने में बहुत कम खर्चा लग रहा था।

और आज 100 से भी ज्यादा साल बीत जाने पर ऐलुमिनियम उत्पादन की बात विद्युत-अपघटन के बिना सोची भी नहीं जा सकती। यही वजह है कि वैज्ञानिक एक अजीब चीज देखकर अचंभे में पड़ गए हैं। चीन में सुप्रसिद्ध सेनापति चाऊ-चू का मकबरा है जिसकी मृत्यु तीसरी शताब्दी के आरंभ में हुई थी। कुछ समय पहले जब वैज्ञानिकों ने इस मकबरे पर रखे एक आभूषण का स्पेक्ट्रमी

इतना विचित्र था कि वैज्ञानिकों को कई बार प्रयोग दोहराने पड़े। हर बार स्पेक्ट्रम यह बता रहा था कि आभूषण में 85% धातु ऐलुमिनियम है अर्थात् प्राचीन कारीगरों ने जिस ऐलॉय से इसे बनाया था उसमें मुख्यतः ऐलुमिनियम का इस्तेमाल किया था। परंतु क्या तीसरी शताब्दी मे यह संभव था? उन दिनों मनुष्य विद्युत से बिल्कुल भी परिचित नहीं था और अगर वह जानता भी था तो केवल आकाश की बिजली के रूप मे। परंतु इस बात पर विश्वास नहीं किया जा सकता कि मनुष्य ने इस बिजली का प्रयोग किया होगा। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि प्राचीन काल मे ऐलुमिनियम प्राप्त करने की कोई दूसरी ही विधि थी।



पिछली शताब्दी के अंत में ऐलुमिनियम का उत्पादन काफी बढ़ गया जिसके फलस्वरूप इसकी कीमत गिर गई। यह स्वाभाविक था कि जौहरियों की अब इस धातु में कोई रुचि नहीं रही थी परंतु औद्योगिक संसार तुरंत इसकी ओर आकर्षित हुआ। उन दिनों उद्योग के क्षेत्र में बड़ी-बड़ी घटनाएं घट रही थीं : मशीनरी के निर्माण में बहुत तेजी से विकास हो रहा था, मोटर-कारों का निर्माण शुरू हो गया था और इनसे भी ज्यादा



महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि वैमानिकी के क्षेत्र में जिसमें ऐलुमिनियम एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाला था, पहले कदम उठाने का प्रयास किया जा रहा था।

1895 में मास्को में एक रूसी इंजीनियर ने 'प्रकृति का ऐलुमिनियम तथा इसकी धात्विकी' नामक पुस्तक प्रकाशित की, जिसमें निम्न शब्दों में इस धातु के महत्त्व का वर्णन किया गया था : 'भविष्य में ऐलुमिनियम महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाएगा और अगर सभी धातुओं का नहीं तो अधिकांश परम्परागत धातुओं का स्थान जरूर ले लेगा.' इस कथन के पीछे कारण थे, उस समय 'मृदा से प्राप्त रजत' के अद्वितीय गुणों का पता चल चुका था। ऐलुमिनियम सर्वाधिक हल्की धातुओं में से एक है। यह धातु ताम्र तथा लोहे से लगभग तीन गुना हल्की होती है। साधारण परिस्थितियों में धातु रासायनिक रूप से काफी स्थायी रहती है। उच्च सुघट्यता होने के कारण ऐलुमिनियम को लपेटकर 3 माइक्रोन तक मोटी पन्नी बनाई जा सकती है, इससे मकड़ी के जालों जितने बारीक तार खींचे जा सकते हैं : 1999 मीटर लंबाई होने पर इसका भार केवल 27 ग्राम होता है तथा इसे माचिस की एक डिब्बी के अंदर रखा जा सकता है। इतने सारे गुण होते हुए भी इस धातु में एक कमी फिर भी थी, इसकी मजबूती काफी कम थी। इसी कारण वैज्ञानिकों ने अब इस धातु की मजबूती की ओर ध्यान देना शुरू कर दिया।

पुराने जमाने से यह बात सबको पता है कि धातुओं के मुकाबले उनके ऐलॉय ज्यादा मजबूत होते हैं। इसी कारण धातुकर्मी अब उन 'साथियों' की खोज में जुट गए जो ऐलुमिनियम से मिलकर उसे 'ताकतवर' बना देंगे। शीघ्र ही उन्हें इस उद्देश्य में सफलता मिल गई। जैसाकि विज्ञान के इतिहास में कई बार होता है इस बार भी एक आकस्मिक घटना ने इस खोज में निर्णायक भूमिका निभाई...

यह बीसवीं शताब्दी के आरंभ की बात है। एक बार जर्मन रसायनज्ञ विल्म ने एक ऐसा ऐलॉय बनाया जिसमें ऐलुमिनियम के अलावा कई अन्य धातुएं घटक के रूप में प्रयुक्त की गई थीं : ताम्र, मैग्नीशियम, मैंगनीज आदि। यह ऐलॉय ऐलुमिनियम से ज्यादा मजबूत था परंतु वैज्ञानिक को ऐसा आभास हो रहा था कि कठोरीकरण से इसकी मजबूती और भी ज्यादा बढ़ाई जा सकती है। उन्होंने इस ऐलॉय के कई नमूने लगभग 600°C तापमान तक गरम किए और फिर उन्हें पानी में डाल दिया। वैज्ञानिक ने देखा कि कठोरीकरण से प्राप्त परिणामों में असमानता थी जिसके कारण विल्म को अपने उपकरण की परिशुद्धता तथा मापन पर संदेह होने लगा।

वैज्ञानिक कई दिनों तक अपने उपकरण की जांच करते रहे। इस दौरान

ऐलॉय के नमूने मेज पर पड़े रहे, उन्हें किसी ने नहीं छेड़ा। जब यंत्र दोबारा कार्य के लिए तैयार हो गया तब विल्म ने नमूनों की ओर ध्यान दिया। उन्होंने देखा कि ऐलॉय की मजबूती तो बढ़ गई थी। वैज्ञानिक ने प्रयोग जारी रखे और अब जो परिणाम प्राप्त हुए उन्हें देखकर विल्म को अपनी आंखों पर विश्वास नही हो रहा था : उपकरण बता रहा था कि नमूनों की मजबूती दुगुनी बढ़ गई है।

वैज्ञानिक ने अपने प्रयोगों को बार-बार दोहराया और हर बार उन्हें इस बात पर विश्वास करना पड़ा कि कठोरीकरण के कुछ दिनों बाद ऐलॉय की मजबूती बढनी शुरू हो जाती है। इस प्रकार विल्म ने एक अद्वितीय परिघटना की खोज कर डाली; उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि कठोरीकरण के पश्चात् ऐलुमिनियम के ऐलॉयो का खुद-ब-खुद जरण होता रहता है।

विल्म को इस बात का खुद भी पता नहीं था कि जरण प्रक्रिया के दौरान धातु के अंदर क्या प्रतिक्रिया घटती थी परंतु उन्होंने अपने प्रयोगों के आधार पर ऐलॉय के सर्वोत्तम संयोजन तथा उसके ताप उपचार की सर्वोत्तम परिस्थितियां निश्चित कर लीं और अपनी इस विधि का एकस्व अधिकार ले लिया। शीघ्र ही उन्होंने एक जर्मन फर्म को अपना पेटेंट बेच दिया। 1911 में नए ऐलॉय का पहला लाट बाजार में आ गया। इसका नाम डूरैलऐलुमिनियम रखा गया परंतु

आगे चलकर इस [illegible] नाम से [illegible] जाने लगा

सन् 1910 में ऐलुमिनियम [illegible] पर उड़ने लगे और [illegible] ऐलुमिनियम [illegible] के साथ संबंध जोड़ लिया। शीघ्र ही इसकी [illegible] फैल गई। यह पदवी इस [illegible] आ रही 'मिका' [illegible] परन्तु इन दिनों इस धातु की कमी थी और इसी कारण [illegible] विशेष रूप से हल्के जहाजों के निर्माण में [illegible] किया जाता था।

उन दिनों सोवियत संघ में [illegible] का एक कारखाना था जहां ऐलुमिनियम के एक [illegible] था। इसकी संरचना तथा गुण [illegible] वैज्ञानिकों के सामने मुख्य समस्या यह थी कि ऐलुमिनियम का [illegible] पैमाने पर उत्पादन कैसे किया जाए।

1929 के आरंभ में लेनिनग्राद में '[illegible]' नामक कारखाने में ऐलुमिनियम प्राप्त करने के प्रयास किए जा रहे थे। इन प्रयासों का निर्देशन एक अद्वितीय वैज्ञानिक प्रो. फेदोतीव कर रहे थे। उन्होंने इस "[illegible]" के इतिहास में बहुत सारी महत्वपूर्ण घटनाएं लिखीं। 27 मार्च [illegible] का दिन वैज्ञानिक के लिए शुभ साबित हुआ। इस दिन उन्हें [illegible] ऐलुमिनियम प्राप्त करने में सफलता मिली। बाद में फेदोतीव ने इस घटना का महत्व निम्न शब्दों में व्यक्त किया : 'इस दिन को सोवियत संघ में ऐलुमिनियम के उत्पादन का जन्मदिन समझना चाहिए क्योंकि इस दिन देश में पहली बार देशी माल से ऐलुमिनियम प्राप्त किया गया। इस कार्य में वोल्खोव पनबिजलीघर की विद्युत का प्रयोग किया गया।' उन दिनों लेनिनग्राद के अखबारों ने इस बात की ओर ध्यान दिलाया कि 'ऐलुमिनियम की पहली सिल्ली को संग्रहालय की एक स्मरणीय-वस्तु समझना चाहिए तथा सोवियत तकनीक की महान् उपलब्धि होने के कारण इसकी एक स्मारक की तरह सुरक्षा करनी चाहिए।' कुछ समय बाद लेनिनग्राद के वासियों ने सोवियत संघ की सोवियतों की पांचवीं कांग्रेस को क्रास्नी विबोर्झेत्स कारखाने में प्राप्त ऐलुमिनियम के कुछ नमूने तथा इस धातु की बनी कई चीजें भेंट कीं। औद्योगिक प्रयोग की सफलता देखकर देश में वोल्खोव और द्नीपर नदियों के पास कारखाने लगाए गए। पहला कारखाना 1932 में चालू हो गया तथा दूसरा इसके एक साल बाद।

इन्हीं सालों में यूराल के इलाकों में ऐलुमिनियम अयस्कों के विशाल भंडार

खोजे गए। इस खोज का इतिहास बहुत रोचक है। 1931 मे एक युवा भूविज्ञानी नि. कारझाविन ने यूराल में पाए गए अयस्कों के संग्रहालय में रखे एक नमूने पर ध्यान दिया जिसे अन्य वैज्ञानिकों ने लोह की निम्न मात्रा वाला अयस्क समझ रखा था। कारझाविन को यह देखकर बहुत आश्चर्य हुआ कि इस अयस्क तथा बॉक्साइड (एक पहाड़ी मृदा, जिसमें ऐलुमिनियम बहुत अधिक मात्रा मे विद्यमान होता है) में बहुत अधिक समानता थी। उन्होंने इस खनिज का विश्लेषण किया और यह देखा कि 'गरीब लोह अयस्क' वास्तविकता मे एक बेहतरीन ऐलुमिनियम अयस्क था। जिस जगह यह अयस्क मिला था वहा भूविज्ञानी इसकी खोज में लग गए और शीघ्र ही उन्हें इस कार्य मे सफलता मिल गई।

इन नए भंडारो के मिलते ही यूराल ऐलुमिनियम कारखाना लगाया गया और इसके कुछ सालों बाद (द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान) बोगोस्लोव्स्की कारखाना। विजय दिवस—9 मई 1945 के ऐतिहासिक दिन इस कारखाने ने ऐलुमिनियम का पहला लाट तैयार किया।

आज सोवियत संघ में बहुत सारे कारखानों में इस 'पंख वाली धातु' का उत्पादन हो रहा है परन्तु इसकी मांग बढ़ती जा रही है। निस्संदेह, पहले की तरह आज भी ऐलुमिनियम मुख्यतः वैमानिकी मे प्रयुक्त किया जा रहा है। हवाई जहाजो तथा राकेटों के निर्माण मे प्रयुक्त सभी धातुओं में प्रथम स्थान ऐलुमिनियम का है। सोवियत संघ में पृथ्वी के प्रथम कृत्रिम उपग्रह का आवरण ऐलुमिनियम ऐलॉयों से बनाया गया था।

1960 में अमरीका ने रेडियो संकेतो के परावर्तन के लिए एक कृत्रिम उपग्रह 'इको-I' छोड़ा। यह एक विशाल उपग्रह था जिसका व्यास 30 मीटर था। इसका निर्माण पोलिमेर की झिल्ली से किया गया था। जिसके ऊपर ऐलुमिनियम की बहुत पतली परत चढ़ी हुई थी। इतना बडा आयाम होने पर भी उपग्रह का वजन केवल 60 किलोग्राम था। संयुक्त राज्य अमरीका के 'सेटरन' नामक राकेट मे द्रव हाइड्रोजन और द्रव ऑक्सीजन के टैंकों की निर्माण-सामग्री के रूप में भी ऐलुमिनियम ऐलॉय चुने गए क्योंकि वे विशाल ताप-परास (परम शून्य से 200°C तक) में विश्वसनीय रूप से काम में लाए जा सकते हैं।

अतिशुद्ध ऐलुमिनियम की पन्नी ने एक कृत्रिम उपग्रह में प्रतिदीप्तिशील पर्दे का कार्य किया जिससे सूर्य द्वारा उत्सर्जित आवेशित कणो का अध्ययन किया गया। जब अमरीकी अंतरिक्ष यात्री नील आर्मस्ट्रांग तथा एडविन ऑल्ड्रिन चंद्रमा पर उतरे, उन्होंने इसकी सतह पर इसी तरह की एक पन्नी बिछा दी और 2 घंटे तक इस बात का अध्ययन करते रहे कि सूर्य द्वारा उत्सर्जित गैसो का इस

पन्नी पर क्या प्रभाव पड़ा चंद्रमा से वापस लौटते समय अंतरिक्ष यात्री यह पन्नी तथा चंद्रमा की मृदा के कुछ नमूने उठा लाए इन सब चीजों को उन्होंने ऐलुमिनियम के बने विशेष प्रकार के डिब्बों में रखा था।

ऐलुमिनियम अंतरिक्ष उड़ानों के साथ-साथ समुद्र की गहराइयों के अध्ययन में भी प्रयुक्त किया जा रहा है। कुछ साल पहले अमरीका ने एक ऐसी समुद्रविज्ञानीय पनडुब्बी 'ऐलुमिनॉट' बनाई है जो 4600 मीटर की गहराई तक जा सकती है। आमतौर पर समुद्री जहाजों तथा पनडुब्बियों के निर्माण में इस्पात का इस्तेमाल किया जाता है परंतु यह विशेष पनडुब्बी ऐलुमिनियम से बनाई गई है।

यातायात साधनों में भी ऐलुमिनियम को बड़े शौक से प्रयोग किया जा रहा है। आजकल सोवियत संघ में एक सुपरएक्सप्रेस रेलगाड़ी बनाई जा रही है। देखने में यह गाड़ी एक आधुनिक हवाई जहाज के फ्यूजिलेज जैसी है और इसकी गति भी तो 'टू' हवाई जहाज जैसी है। इंजीनियरों ने सुझाव दिया है कि इस एक्सप्रेस का निर्माण ऐलुमिनियम से किया जाए। इस प्रकार की एक गाड़ी बनाकर उसका परीक्षण भी किया गया है। परीक्षण के दौरान गाड़ी पर 300 टन दबाव डाला गया तथा इसका अचंद कंपनों तथा अन्य 'आयामों' से सामना कराया गया। इतना सब कुछ होते हुए भी धातु का कुछ नहीं बिगड़ा। अब सोवियत संघ के वासी ऐसी गाड़ी पर सफर कर रहे हैं।

ऐलुमिनियम में उच्च संक्षारण प्रतिरोधता होती है। इसका श्रेय इस धातु की ऊपरी सतह पर जमी एक अति पतली परत को जाता है। यह एक कवच की तरह धातु की ऑक्सीजन से रक्षा करती है। अगर यह परत रूपी कवच न हो तो ऐलुमिनियम वायु में ही भभक उठेगा और चमकीली ज्वाला के साथ जलने लगेगा। इसी सुरक्षा कवच के कारण ऐलुमिनियम दसियों सालों तक रासायनिक उद्योग जैसे खतरनाक कार्यों में सफलतापूर्वक कार्य करता रहता है जबकि अन्य धातुओं के 'स्वास्थ्य' पर ऐसे उद्योगों का बहुत बुरा असर पड़ता है।

वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध किया है कि ऐलुमिनियम में एक और कीमती गुण है यह धातु विटामिनों को नष्ट नहीं करती है। यही कारण है कि इस धातु से मक्खन के उत्पादन तथा चीनी के परिष्करण के लिए आवश्यक उपकरण तथा मिठाई व बियर उद्योग का साज-सामान भी बनाया जाता है। इसलिए यह संयोग की बात नहीं कि अंतरिक्ष-यात्रियों का भोजन और फलों का रस ऐलुमिनियम ट्यूबों में रखा जाता है। पृथ्वी पर भी खाद्य-उद्योग के लिए टिनों का निर्माण ऐलुमिनियम से ही किया जाता है।

निर्माण-कार्य में इस धातु की स्थिति बहुत मजबूत है। आज से बहुत साल

पहले सन् 1890 में अमरीका में इस धातु का प्रयोग एक घर के निर्माण में किया गया। 50 साल बाद भी इस घर में लगी ऐलुमिनियम की सभी चीजें सही सलामत दिखाई दीं। 1897 में पहली बार इस धातु से एक बिल्डिंग की छत बनाई गई जिसको आज तक एक भी बार मरम्मत की जरूरत नहीं पड़ी है।

मास्को में क्रेमलिन के अंदर स्थित कांग्रेस का भव्य प्रासाद ऐलुमिनियम तथा प्लास्टिक से बनाया गया है। 1958 में ब्रसेल्स में आयोजित विश्व प्रदर्शनी में सोवियत संघ का मण्डप ऐलुमिनियम तथा कांच से बनाया गया था। यह मण्डप इतना सुंदर था कि बेल्जियम के अखबारों ने इसका नाम 'समाजवाद का महल' रख दिया। पुलों, बिल्डिंगों, डामों, पनबिजलीघरों आदि के ढांचों, हैंगरों—हर चीज के निर्माण में इस अद्भुत हल्की धातु का प्रयोग किया जा रहा है।

वैद्युत इंजीनियरी इस धातु की मुख्य उपभोक्ता है। ऐलुमिनियम का उपयोग उच्चवोल्टता लाइनों, मोटरों व ट्रान्सफॉर्मरों की कुंडलियों, केबलों, कंडेंसरों व बल्बों के बेसों के निर्माण में किया जाता है।

स्टील पर जमी ऑक्सीजन हटाने के लिए धातुविज्ञानी ऐलुमिनियम का प्रयोग करते हैं। बहुत सारे ऐलॉय ऐलुमिनोतापीय विधियों द्वारा प्राप्त किए जाते हैं। इन प्रक्रियाओं में थर्मिट मिश्रण का मुख्य घटक ऐलुमिनियम ग्रिट होता है। पोलियुरिटेन और ऐलुमिनियम मनुष्य के कृत्रिम हृदय के निर्माण में प्रयुक्त हुए हैं। 1982 में एक अमरीकी बार्नी क्लार्क के हृदय पर किए गए ऑपरेशन के परिणामस्वरूप यह कृत्रिम उपकरण उसके वक्ष में कई महीनों के दौरान धड़क रहा था।

डाकटिकट संग्रहकर्ताओं के संग्रह में भी ऐलुमिनियम देखा जा सकता है 1955 में हंगरी ने एक विचित्र डाकटिकट निकाली। यह टिकट एक ऐलुमिनियम की पन्नी पर छपी हुई थी जिसकी मोटाई 0.009 मिलीमीटर थी। बाद में अन्य कई देशों ने भी ऐसी टिकटें छापीं।

अब ऐलुमिनियम का धागा भी बन गया है (इस धागे पर ऐलुमिनियम की बहुत पतली परत चढ़ी होती है)। इस धागे में अद्वितीय गुण होते हैं : यह शीतन और तापन—दोनों कार्यों में प्रयुक्त किया जा सकता है। इस धागे के बने पर्दे अगर खिड़कियों पर इस तरह टांग दिए जाएं कि धात्विक परत बाहर की ओर रहे तो ये पर्दे प्रकाश की किरणों को तो गुजरने देंगे, परंतु गरम किरणों को रोक देंगे, जिसकी वजह से गर्मियों के दिनों में भी कमरा ठंडा रहेगा। जाड़ों के दिनों में पर्दों को पलट दें—तब कमरा गरम रहेगा। इस धागे की बनी बरसाती पहनकर न गर्मी का डर रहेगा और न सर्दी का। अगर इसकी धात्विक परत बाहर की ओर रखेंगे तो गर्मियों में सूर्य की तीव्र किरणों से बचे रहेंगे और अगर इसको

उलटा पहन लें तो आईने न [illegible] से बचे रहेंगे [illegible]
के कंबलों का उत्पादन शुरू हो गया है। [illegible]
है और सर्दियों में भी। मोटे कंबल [illegible]
का वजन केवल 5% ग्राम [illegible]
है। इस बात में कोई शक नहीं कि पुलिसवालों, [illegible]
जिन लोगों को धूप या ठंड में काम करना पड़ता है, [illegible]
जाकेटों तथा टेन्टों की आवश्यकता [illegible]
ऐलुमिनियम की टोपियाँ, पेटी, गाउन तथा [illegible]
वर्दी एक इस्पात प्रमाणक का काम करेगी [illegible]
बुझाने वालों को भी काफी सहूलियत मिलेगी।

पिछले कुछ समय से वैज्ञानिक तथा इंजीनियर [illegible]
निर्माण पर बहुत ज्यादा ध्यान दे रहे हैं। इन्होंने [illegible]
परिवार के प्रथम सदस्य फोमऐलुमिनियम के बनाने का [illegible]
यह नया पदार्थ हद से ज्यादा हल्का है। फोमऐलुमिनियम
1 घन सेंटीमीटर का वजन केवल 0.19 ग्राम है। [illegible]
का मानक समझी जाती है, इस पदार्थ का [illegible]
यह इससे 25-30% भारी होती है। फोमऐलुमिनियम के बा
फॉमबेरितियम, फोमटाइटेनियम तथा अन्य अद्वितीय पदार्थ

सुप्रसिद्ध कथाकार ह. वेल्स ने बीसवीं शताब्दी के आ
लिखा—'संसारों की लड़ाई'। इसमें लेखक ने एक ऐसी पश



था, जिसकी सहायता से मंगल ग्रह के वासी ऐलुमिनियम बना रहे थे। 'सुबह से लेकर शाम तक यह त्रस्त मशीन मृदा से ऐलुमिनियम की कम से-कम सो सिल्लियां जरूर बना देती थी।'

जिन दिनों लोगों को चद्रमा की केवल चाक्षुप जानकारी थी, एक अमरीकी अतरिक्ष वैज्ञानिक ने गणना करके यह बताया कि चद्रमा की सतह पर प्रति हेक्टेयर क्षेत्र मे लगभग 100 टन शुद्ध ऐलुमिनियम मिल सकता है। वैज्ञानिक का यह मत था कि चद्रमा एक अतिविशाल प्राकृतिक फैक्टरी की तरह है जहा 'सूर्यी हवा' (सूर्य से निकल रहे प्रोटोनों का प्रवाह) लोह, मेग्नीशियम, ऐलुमिनियम अयस्को को शुद्ध धातुओं मे परिवर्तित कर देती है। अभी तक इस परिकल्पना की पुष्टि नहीं हुई है परंतु अमरीकी अतरिक्ष-यात्रियों तथा सोवियत स्वचलित स्टेशनो से चद्रमा की मिट्टी के जो नमूने प्राप्त हुए है उनके विश्लेषण से यह बात जरूर सिद्ध हो गई है कि चद्रमा की मृदा में ऐलुमिनियम ऑक्साइड काफी मात्रा मे विद्यमान है। फिर भी अमरीकी वैज्ञानिको का मत काफी हद तक सही सिद्ध हुआ। सोवियत स्वचलित स्टेशन 'लूना-20' चंद्रमा की मिट्टी का जो नमूना पृथ्वी पर लाया इसमें शुद्ध ऐलुमिनियम के तीन कण पाए गए। इन कणों का आकार मिलीमीटर के दसवें अंश से कम है। विश्वास किया जाता है कि पृथ्वी पर ऐलुमिनियम शुद्ध रूप मे विद्यमान नही है।

ऐसा लगता है कि मंगल तथा चद्रमा पर 'ऐलुमिनियम की समस्या' नही है। अच्छा, पृथ्वी पर इसकी क्या स्थिति है? कह सकते हैं कि यहां भी स्थिति ठीक ही है। यह बात जरूर है कि अभी हमारे ग्रह पर मगल ग्रह पर जैसी ऐलुमिनियम बनाने की मशीने नही है तथा पृथ्वी पर ऐलुमिनियम की टनों मात्रा बिखरी नही पडी है, परतु पृथ्वीवासियो को शिकायत नही होनी चाहिए। प्रकृति ने खुद ही इस बात का ध्यान रखा है कि लोगों को इस अद्‌भुत धातु की कमी महसूस न हो। भू-पर्पटी में ऐलुमिनियम की मात्रा केवल ऑक्सीजन तथा सिलिकन की मात्रा से निम्न है, परतु अन्य सभी धातुओं से अधिक है।

प्रकृति वास्तव मे बहुत धनवान है परतु मनुष्य को यह 'धन' सभालकर खर्च करना चाहिए। इंजीनियरों ने अब ऐसी कई परियोजनाएं बनाई हैं, जिनके अनुसार शहरो के कूड़े में से उपयोगी घटको को निकालकर अलग किया जा सकता है। कूड़े से ऐलुमिनियम प्राप्त करने के लिए इस मशीनरी मे एक विशेष प्रकार का विद्युतचुंबकीय यंत्र लगाया गया है। आप कहेगे कि ऐलुमिनियम पर चुबकीय क्षेत्र का तो कोई असर ही नही पड़ता फिर इसकी सहायता से ऐलुमिनियम कैसे अलग की जा सकती है? बात यह है कि अगर ऐलुमिनियम की किसी चीज मे

प्रत्यावर्ती धारा प्रवाहित [illegible] आए तो कुछ समय के लिए धातु [illegible] धातु को पकड़ लेते हैं।

संक्षेप में [illegible] कमी नहीं है। यह काम [illegible] 'पंख वाली धातु' के उत्पादन की विधियाँ [illegible] तथा [illegible] प्रयोग के नए क्षेत्र खोजें।

पृथ्वी का बेटा

राकेट आकाश में स्थिर हो जाता है–'क्या आपने अपना नाम कभी बदला है?'–पृथ्वी के बेटों के सम्मान में–लगभग असंभव कार्य–गलती पर गलती–विस्तृत प्रतिध्वनि–दूध में मक्खी गिर पड़ी–मजाक उड़ाने की कोई जरूरत नहीं है–कैद से छुटकारा–'काला पक्षी'–कितना अधिक सहनशील!–नाविक नावों की अदला-बदली करते हैं–पटैरा जहाज 'रा'–बेतुकी बात–हजार साल बाद–महासागरों की गहराइयों में–दोष दूर किया जा सकता है–और आप इसे विरल कहते हैं!–आइए, थोड़ी-सी कल्पना करते हैं!–खुले प्रशांतक में टाइटेनियम की पहली खान–ऑक्सीजन के आलिंग में–कठिन परीक्षण

18 अगस्त 1964 के प्रभातकालीन घंटों में मास्को के शांतिपथ में (प्रोस्पेक्त मीरा–एक लंबी और चौड़ी सड़क) अंतरिक्ष यान की 'उड़ान' शुरू हुई। यह अंतरिक्ष यान न तो चद्रमा पर पहुंचा और न ही शुक्र पर। परंतु फिर भी इसके भाग्य में कोई कम इज्जत नहीं लिखी थी। चादी जैसी एक धातु का बना यह स्मरण-स्तभ सदा के लिए मास्को के आकाश में स्थिर हो गया था। इस राकेट ने उस सोवियत व्यक्ति की यादगार अमर की है जिसने अतरिक्ष के द्वार खोले है।

इस राकेट के निर्माणकर्ता बहुत दिनों तक इस बात का निश्चय नहीं कर पा रहे थे कि यह शानदार स्मारक किस चीज से बनाया जाए। पहले उन्होने इसका डिजाइन काच से बनाना चाहा, फिर प्लास्टिक से और उनके बाद जगरोधी स्टील से। अंत में उन्होंने तीनो चीजों को खुद ही अस्वीकार कर दिया। लबे प्रयोगों के बाद वे इस निश्चय पर पहुंचे कि राकेट के निर्माण के लिए सबसे अच्छी धातु टाइटेनियम रहेगा।

भावी पीढ़ियो को हमारे समकालीनों के वीरतापूर्ण कारनामों के बारे में बताने

[illegible] टाइटेनियम [illegible]

टाइटेनियम का [illegible] इसके गुणों का वर्णन करने से पहले [illegible]

[illegible] टाइटेनियम को [illegible] आपने अपना नाम [illegible] नाम 'मेनाकिन' था [illegible] ग्रेगर को खनिज [illegible]

लगता है कि [illegible] भी उसने अपने लिए एक [illegible] इस [illegible] का ऐसा मौका सन् 1795 में मिला [illegible] एक अन्य खनिज [illegible] में भी [illegible] से बनाया गया। [illegible] नाम से पुकारा जाता था।

दो साल बाद [illegible] पता चला कि [illegible] था। उस समय से तत्त्व का नाम 'टाइटेनियम' [illegible]

वैज्ञानिक ने कोई [illegible] हुआ कि उसने तत्त्व को शुद्ध रूप में प्राप्त कर लिया। ग्रेगर तथा क्लाप्रोथ को भी शुद्ध टाइटेनियम नहीं मिला था। उन्हें ऑक्सीजन के साथ इसका एक यौगिक टाइटेनियम ऑक्साइड (श्वेत रवेदार पाउडर) प्राप्त हुआ था। टाइटेनियम को इसके यौगिकों से अलग करना असंभव-सा लग रहा था। पिछली शताब्दी के प्रायः सारे प्रसिद्ध रसायनज्ञों ने इस समस्या का हल ढूंढने के प्रयास किए पर सफलता किसी को भी नहीं मिली।

एक बार ऐसा लगा कि अंग्रेज वैज्ञानिक वोलेस्टोन को शायद इस कार्य में सफलता मिल गई है। 1823 में उन्हें धातुमल में कुछ क्रिस्टल मिले। उनका अध्ययन करने पर वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि ये क्रिस्टल शुद्ध टाइटेनियम के बने थे। इसके 33 साल बाद जर्मन रसायनज्ञ व्होलर ने सिद्ध किया कि ये क्रिस्टल शुद्ध टाइटेनियम न होकर इसके नाइट्रोजन तथा कार्बन यौगिक थे अर्थात् वोलेस्टोन को गलतफहमी हो गई थी।

बहुत सालों तक यह समझा जाता रहा कि धात्विक टाइटेनियम प्राप्त करने में सर्वप्रथम सफलता विख्यात स्वीडिश वैज्ञानिक बर्जेलियस को मिली थी जब उन्होंने पोटैशियम फ्लुओरोटाइटेनेट का धात्विक सोडियम द्वारा अपचयन किया था। परंतु आज जब हम टाइटेनियम तथा बर्जेलियस के उत्पाद के गुणों की तुलना

करते हैं तो इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि स्वीडिश विज्ञान अकादमी के सचिव को भी गलतफहमी हो गई थी क्योंकि अन्य अम्लों के मुकाबले हाइड्रोफ्लुओरिक अम्ल में टाइटेनियम शीघ्रता से घुल जाता है जबकि बर्जेलियस के टाइटेनियम पर इसका कोई असर नहीं पड़ा था।

केवल 1875 में रूसी वैज्ञानिक द. किरीलोव को धात्विक टाइटेनियम प्राप्त करने में सफलता मिल गई। उन्होंने अपने अनुसंधान कार्यों के परिणाम 'टाइटेनियम पर अनुसधान' नामक पुस्तिका में छापे परंतु ज़ार के रूस में इस अद्वितीय खोज पर किसी ने भी ध्यान नहीं दिया और इस प्रकार उनकी इस खोज से ससार अपरिचित रह गया।

1887 में बर्जेलियस के देशभाइयों नील्सन तथा पीटरसन ने एक वायुरोधी स्टील सिलिंडर में टाइटेनियम टेट्राक्लोराइड का धात्विक सोडियम द्वारा अपचयन करके लगभग शुद्ध टाइटेनियम (लगभग 95%) प्राप्त की।

1895 में फ्रेंच रसायनज्ञ हेनरी मोईसान ने शुद्ध टाइटेनियम प्राप्त करने की दिशा में अगला कदम उठाया। उन्होंने एक आर्क भट्ठी में टाइटेनियम डाइऑक्साइड का हाइड्रोजन द्वारा अपचयन किया और इस प्रकार प्राप्त धातु का दो बार शोधन किया। इस टाइटेनियम में केवल 2% अशुद्धियां थीं।



आखिरकार 1910 में अमरीकी रसायनज्ञ हंटर ने नील्सन तथा पीटरसन की विधि में कुछ सुधार लाकर कुछ ग्राम शुद्ध टाइटेनियम प्राप्त कर लिया। इस घटना की चर्चा बहुत सारे देशों में हुई। यही कारण है कि अधिकांश लोग शुद्ध टाइटेनियम की प्राप्ति का श्रेय गलती से इनके पहले हुए आविष्कारकों को नहीं, बल्कि हंटर को देते हैं।

खैर, किसी ने भी सही, शुद्ध टाइटेनियम तो प्राप्त हो ही गई थी। परतु इसे पूर्णतया शुद्ध टाइटेनियम फिर भी नहीं कहा जा सकता था क्योंकि अभी भी इसमें एक प्रतिशत के दसवें भाग से भी कम अशुद्धियां रह गई थीं। यह दूध में मक्खी गिरने जैसी बात थी। इन अशुद्धियों ने धातु को भंगुर, अदृढ तथा

म-ार्नो शाप्त में ने प्रयोग, मैं बना रखा था । ऐसा ने टाइटेनियम के ने अन्वेषण किया था और इस एक ...जीन समझी जाती थी । यह स्वाभाविक था कि इस घटनाओं से दबके ने टाइटेनियम ने महत्त्वपूर्ण कार्यो में भाग लेने की चाल तक नहीं मार्गी और वह इधर-उधर के कामों से संतुष्ट होता रहा।



1908 में ही अमरीका में दो वैज्ञानिकों रोजे और बारटान तथा नार्वे में वैज्ञानिक फाम्स ने यह सुझाव दिया था कि श्वेत वर्णक प्राप्त करने के लिए लेड और जिंक के यौगिकों के स्थान पर ... का प्रयोग करना चाहिए। लेड और जिंक के वर्णकों की तुलना में ... वर्णक से अधिक क्षेत्र रंगा जा सकता है। इसके अलावा टाइटेनिय... भी नहीं था क्योंकि टाइटेनियम ऑक्साइड मानव के लिए ... नहीं है। चिकित्सा इतिहास में एक ऐसी घटना का उल्लेख है, ... ने एक ही बार में आधा किलो टाइटेनियम ऑक्साइड खा लिया ... कुछ नहीं बिगड़ा था।

धीरे-धीरे टाइटेनियम ऑक्साइड चमड़े तथा कपड़ों के रंज... कांच और पोर्सलिन के उत्पादन में प्रयुक्त होने लगा। कृत्रिम ... में भी इसका प्रयोग शुरू हो गया।

बाद में टाइटेनियम के दूसरे यौगिक टाइटेनियम टैट्राक्लो... मिल गया। यह यौगिक बहुत साल पहले 1826 में फ्रेंच रसायन... किया था। इसमें घना धुआं पैदा करने का अद्वितीय गुण होने... विश्व युद्ध के दिनों इसका विस्तृत प्रयोग किया गया। शांति... यौगिक वसंत में पेड़-पौधों की पाले से रक्षा करने में प्रयुक्त...

परंतु आगे चलकर हम देखेंगे कि टाइटेनियम की यह ... कि उसे इससे भी ज्यादा गंभीर तथा रोचक कार्य दिए जाए...

आखिर वह दिन आ ही गया। 1925 में हॉलैंड के वैज्ञा...

तथा डि बोहर ने टाइटेनियम टेट्राक्लोराइड का टंगस्टन के एक तप्त तार पर विघटन करके अतिशुद्ध टाइटेनियम प्राप्त किया। तब पता चला कि यह विचार बिल्कुल गलत था कि टाइटेनियम एक अति भंगुर धातु है। वान आर्केल और डि बोहर द्वारा प्राप्त टाइटेनियम बहुत सुघट्य लचीला था। इसकी लौह की तरह फोर्जिंग की जा सकती थी, इसकी शीटें, पत्तिया और तार बनाए जा सकते थे और इसकी बारीक पन्नी भी बनाई जा सकती थी।

अब इसके शानदार नाम का कोई मजाक नहीं उडा रहा था। इस धातु के लिए तकनीक के दरवाजे खुल गए थे।

ऐसा लगता है कि टाइटेनियम कृतघ्न नही था। वैज्ञानिकों ने अशुद्धियो से इसका पीछा छुडवाया तो इसके बदले टाइटेनियम ने अपने अद्वितीय गुणों द्वारा उन्हें मोहित करना शुरू कर दिया। उदाहरण के लिए, वैज्ञानिको को पता चला कि लौह से दुगुनी हल्की होने पर भी यह धातु स्टील की बहुत सारी किस्मो से अधिक मजबूत है। औद्योगिक धातुओं में टाइटेनियम से अधिक मजबूत कोई धातु नहीं है। ऐलुमिनियम जैसी बहुमुखी धातु भी टाइटेनियम का मुकाबला नही कर सकती। हालांकि टाइटेनियम इससे डेढ़ गुना भारी है, परतु मजबूती मे यह धातु ऐलुमिनियम से छः गुना श्रेष्ठ है। टाइटेनियम का सबसे महत्त्वपूर्ण गुण यह है कि उच्च ताप पर भी इसकी मजबूती कायम रहती है (650°C तक और अगर इसमे कुछ ऐलॉय मिला दिए जाए तो 500°C तक), जबकि ऐलुमिनियम के बहुत सारे ऐलॉयों की मजबूती 300°C ताप पर ही कम होनी शुरू हो जाती है।

टाइटेनियम एक अति कठोर धातु है। यह ऐलुमिनियम, लौह और ताम्र से ज्यादा मजबूत है। धातु का तरलता-बिंदु जितना उच्च होता है, उसके पुर्जो की मजबूती उतनी ही ज्यादा होती है तथा उनका आकार व रूप भी लंबे अर्से तक कायम रहता है। ऐलुमिनियम के मुकाबले टाइटेनियम का तरलता बिंदु पांच गुना उच्च है तथा लौह से तिगुना।



यह कोई आश्चर्य की बात नही कि हवाई जहाज के निर्माणकर्ताओं

[illegible] टाइटेनियम ही था [illegible]

[illegible]

के वाले टाइटेनियम [illegible] में टाइटेनियम की स्थिति [illegible] के विभिन्न [illegible] (दिक्‌निर्देशक, [illegible])।

टाइटेनियम के प्रयोग का [illegible] उदाहरणस्वरूप इंजन में स्टील [illegible] तो जहाज के इंजन का [illegible] का अनुमान है कि आने वाले वर्षों में ध्वनि की गति से दो-तीन गुना तेज उड़ने वाले हवाई जहाजों के निर्माण में टाइटेनियम तथा इसके एलायों का प्रयोग [illegible] से [illegible]% तक बढ़ जाएगा।



अंतरिक्ष तकनीक को भी टाइटेनियम की जरूरत पड़ेगी। इस धातु के बने टैंक द्रवित ऑक्सीजन तथा हाइड्रोजन के संचय के लिए श्रेष्ठ हैं : अति निम्न तापमान होने पर टाइटेनियम अन्य धातुओं की तरह विघटित नहीं होता बल्कि और भी ज्यादा मजबूत हो जाता है। ऐसा लगता है कि भविष्य में अंतरिक्ष में जितने भी स्टेशन बनाए जाएंगे, उन सबके निर्माण में टाइटेनियम मुख्य भूमिका निभाएगा। 1969 में सोवियत अंतरिक्ष यात्रियों गिओर्गी शोनिन तथा वालेरी कुबासोव

द्वारा अंतरिक्ष में किए गए प्रयोगों से यह पता चला कि अंतरिक्ष निर्वात में टाइटेनियम की वेल्डिंग तथा कर्तन सरल होते हैं।

टाइटेनियम का महत्त्व केवल अंतरिक्ष यान के निर्माता ही नहीं बल्कि अन्य लोग भी समझ रहे हैं। उदाहरणतया इसका उपयोग घड़ियों तथा कैमरों के निर्माण में किया जा रहा है। एक विदेशी कंपनी इस धातु का प्रयोग साइकिल की बॉडी के निर्माण में भी कर रही है। इस प्रकार की बॉडी का वजन लगभग 1 किलोग्राम होता है तथा ऐसी साईकिल का कुल वजन 7 किलोग्राम से भी कुछ कम ही होता है।

टाइटेनियम ने रसायनज्ञों को भी आकर्षित किया है। एक कारखाने में निम्न प्रयोग किया गया : ढलवें लोहे, जंगरोधी स्टील तथा टाइटेनियम से तीन पम्प बनाए गए और फिर इन पम्पो से आक्रामी द्रव की निकासी की गई। पहला पम्प सिर्फ 3 दिन चला, दूसरा 10 दिन परंतु तीसरा (टाइटेनियम वाला) 6 महीने लगातार इस्तेमाल होने के बाद भी ठीक तरह से काम करता रहा और बिलकुल सही सलामत रहा।

हालांकि टाइटेनियम अभी भी बहुत ज्यादा महंगा है, परंतु सस्ती धातुओं की जगह अगर इसका प्रयोग किया जाए तो आखिर में बचत जरूर होगी। उदाहरण के लिए, एक रासायनिक संयंत्र के रिएक्टर का निर्माण अगर जंगरोधी स्टील से किया जाए तो वह टाइटेनियम के मिश्रधातुओं से बने रिएक्टर से चार गुना महंगा पड़ेगा। परन्तु स्टील के बने रिएक्टर की आयु केवल 6 महीने होती है और टाइटेनियम के रिएक्टर की 10 साल। इस खर्चे में अगर स्टील के रिएक्टरो को हर 6 महीने बाद बदलने में लगे व्यय को जोड़ दिया जाए तथा इस दौरान हुई काम की हानि का भी हिसाब लगा लिया जाए तो यह देखेंगे कि महंगा टाइटेनियम सस्ते स्टील से काफी सस्ता पड़ता है हालांकि बात बड़ी अजीब-सी लगती है। परंतु यह सच है।

टाइटेनियम के औद्योगिक उपयोग पर कुछ साल पहले लंदन में एक प्रदर्शनी आयोजित की गई थी जिसमें विभिन्न रासायनिक कारखानों में बने टाइटेनियम संयंत्रों के असंख्य नमूने रखे गए थे। टाइटेनियम के बने तुंड सल्फर डाइऑक्साइड तथा अन्य गरम गैसों के वातावरण में दो महीने से भी ज्यादा रहने पर भली-भांति कार्य करते रहे, परंतु जंगरोधी स्टील के बने तुंड कुछ घंटो बाद ही खराब होने लगे।

टाइटेनियम के बने पुर्जे क्लोरीन, सल्फ्यूरिक और नाइट्रिक अम्ल तथा अन्य रासायनिक 'आक्रमकों' के वातावरण में सफल सिद्ध हो रहे हैं। कुछ कारखानो

मे तो 120 मीटर ऊची सवाती पाइपो के निर्माण मे इसी धातु का प्रयोग किया गया है यह बात जरूर ह कि इतने ऊच पाइपो के निर्माण म खर्चा काफी आता है परतु ऐसे पाइपो को सो साल तक मरम्मत की जरूरत भी तो नही पडती हे

कर्तन औजारो के निर्माण मे कठोर ऐलॉयो का प्रयाग किया जाता हे। उनमे टाइटेनियम का विस्तृत प्रयोग किया जाता है। किसी भी औजार पर अगर टाइटेनियम कार्बाइड की पतली-सी परत चढा दी जाए तो उसकी कर्तन क्षमता बहुत उच्च हो जाती है।

टाइटेनियम ऐलॉयो के बने शल्य औजार बहुत प्रसिद्ध हुए हैं। सुप्रसिद्ध नार्वेजियन अन्वेषक तुर खेरदाल के नेतृत्व मे आयोजित अंतर्राष्ट्रीय समुद्री अभियान के एक सदस्य सोवियत डॉक्टर यूरी सेन्केविच अपने साथ इस यात्रा के दौरान पटेरे जहाज 'रा' पर टाइटेनियम शल्य औजारों को ले गए थे क्योंकि वे बहुत हल्के हैं, उन पर जग नही लगता और लबे अर्से तक उनका उपयोग किया जा सकता।

छठे दशक मे वैज्ञानिकों ने टाइटेनियम के साथ निकिल का एक अद्भुत ऐलॉय बनाया जिसका नाम निटिनोल है। इस ऐलॉय मे एक अद्वितीय गुण हे—इसे अपना अतीत 'याद' रहता है अर्थात् विरूपण तथा अन्य आवश्यक प्रक्रमो के बाद यह फिर से अपने पहले रूप में आ जाता है (इसका सविस्तार वर्णन निकिल वाले अध्याय 'ताम्र राक्षस' मे किया गया है)।

बीसवीं शताब्दी के आरंभ तक अधिकाश धातुकर्मी टाइटेनियम ओर लोह का सयोजन लौह के गुण के लिए हानिकारक मानते थे। उनके इस भ्रम को दूर करने में बहुत सारे साल लग गए। आज टाइटेनियम के मुख्य उपभोक्ताओ मे धात्विकी का मुख्य स्थान है। स्टील तथा ऐलॉयों की सैकड़ों ऐसी किस्मे गिनी जा सकती हैं जिनमें यह धातु कम या ज्यादा मात्रा में उपस्थित होती है। जंगरोधी स्टील में इस धातु के मिश्रण से अंतराक्रिस्टलीय संक्षारण से बचाव हो जाता है। क्रोमियम की उच्च मात्रा वाले तापरोधी ऐलॉयों में टाइटेनियम मिलाने से कण का आकार सूक्ष्म हो जाता है, धातु एकरूपी हो जाती है तथा सूक्ष्मक्रिस्टलीय बन जाती है। अन्य तापरोधी ऐलॉयों में टाइटेनियम एक प्रबल तत्त्व की भूमिका निभाता है।

टाइटेनियम की ऑक्सीजन के साथ तीव्र प्रतिक्रिया (इस बात पर हम आगे प्रकाश डालेंगे) होने के गुण के कारण इस धातु का प्रयोग स्टील के विआक्सीकरण के लिए किया जाता है अर्थात् स्टील से ऑक्सीजन अलग करने के लिए : सिलिकन

ा विआक्सीकारक समझा जाता है, परंतु टाइटेनियम की
ामता मिलिकन से भी 10 गुना अधिक होती है। टाइटेनियम
थ भा ऐसी ही प्रतिक्रिया करता है। स्टील को गैसरहित कर देने
ऽ गुण श्रेष्ठ हो जाते है तथा उसका संक्षारण प्रतिरोध भी बढ

र मे एक बहुमूल्य गुण यह है कि धातुओं के सबसे खतरनाक
इस पर कोई असर नहीं होता। इस धातु मे अद्वितीय सक्षारण
होती है। टाइटेनियम की एक प्लेट को 10 साल तक समुद्री जल
पर उस पर जरा-सा भी जंग नही लगा। अगर यही प्लेट लोहे
ा इतने अर्से बाद उसका निशान भी बाकी नही रहता। 10 साल
अर्सा है। गणना से पता चला है कि अगर ऐसा ही एक प्रयोग
ने किया गया होता, उदाहरणतया, जब रूस में ईसाई धर्म फैल
रे दिनों तक टाइटेनियम के अंदर केवल 0.02 गहराई मिलीमीटर
ता। यही वजह है कि जलपोतों व अतर्जलीय उपकरणो के निर्माता
तनी ही दिलचस्पी दिखा रहे है जितनी वायुयानों के निर्माता तथा
ोकी कंपनी 'जनरल इलैक्ट्रिक' ने ऐसे स्टेशनों को बसाने की
हे जो मनुष्य को समुद्र की 3700 मीटर की गहराई तक पहुंचा
रियोजना मे महत्त्वपूर्ण भूमिका टाइटेनियम ऐलॉयो को दी गई है।

टाइटेनियम में उच्च जगरोधी क्षमता विद्यमान होने के कारण ही तो मानव की अतरिक्ष विजय को अमर करने वाले स्तंभ के निर्माताओ ने इस धातु को प्राथमिकता दी। उन्ही सालो मे एक अन्य स्मारक के निर्माण के लिए टाइटेनियम ही इस्तेमाल करने का विचार किया गया। अतर्राष्ट्रीय विद्युत-सचार संघ की शताब्दी के उपलक्ष्य मे यूनेस्को ने एक स्मारक बनाने का फैसला किया है। इस स्मारक के प्रोजेक्ट पर एक प्रतियोगिता आयोजित की गई। विभिन्न देशो से प्राप्त 213 प्रोजेक्टो में प्रथम पुरस्कार सोवियन वास्तुकारों के प्रोजेक्ट को दिया गया। इस प्रोजेक्ट के अनुसार जेनेवा के अंदर नेशन स्क्वेअर मे 10 5 मीटर ऊचे दो कक्रीट शैलो के रूप में एक स्मारक बनाना है। ये शैल टाइटेनियम की प्लेटो से सुसज्जित होगे। इस स्मारक की विशेषता यह होगी कि जो भी आदमी एक विशेष रास्ते पर चलकर इन शैलों के बीच से गुजरेगा, उसे अपनी आवाज, कदमो की आहट तथा शहर का शोर सुनाई देगा। इसके साथ-साथ उसे इन दो गोल शैलों के केंद्र मे अपना प्रतिबिंब भी दिखाई देगा।

टाइटेनियम मे एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि शक्तिशाली चुबकीय क्षेत्र से भी इस पर कोई असर नहीं पडता है। इसका यह गुण कभी-कभी लाभदायक होता है। इस प्रकार टाइटेनियम बहुत बहुमूल्य गुणो का वाहक हैं। इसलिए अद्भुत सोवियत धातुकर्मी अकादमीशियन बार्दिन ने लिखा है · 'आजकल न केवल कच्चा लोहा और स्टील बहुमूल्य धातु माननी चाहिए...यह स्थान टाइटेनियम को भी देना चाहिए जो लोहे का एक जवान प्रतिद्वद्वी है। वह अपने 'स्वभाव' की दृष्टि से—हल्कापन, प्रबलता, तापरोधिता और जंगरोधी क्षमता की दृष्टि से—लौह से बेहतर है।' फिर सवाल उठता है कि स्टील या ऐलुमिनियम की तुलना मे उद्योग में टाइटेनियम का उपयोग अब तक कम क्यो है?

बात यह है कि इस धातु की कीमत बहुत ज्यादा है जिसकी वजह से इसका उपयोग सीमित है। सच कहे तो यह 'खराबी' जन्मजात नही है। धातु को अयस्कों से प्राप्त करना बहुत अधिक कठिन कार्य है। अगर सांद्रित रूप मे टाइटेनियम की आपेक्षित कीमत 1 ली जाए तो दीर्घकालीन तथा कठिनतम प्रक्रियाओ के बाद जो शुद्ध टाइटेनियम प्राप्त होता है उसकी कीमत सैकड़ों गुना बढ़ जाती है। परंतु अब स्थिति सुधारने के प्रयास किए जा रहे है : नई धातु के उत्पादन की विधियों में सुधार लाए जा रहे हैं और वह दिन दूर नही जब यह धातु भी ऐलुमिनियम की तरह सस्ती हो जाएगी। आपको पता ही है कि पिछली शताब्दी मे ऐलुमिनियम भी तो बहुमूल्य धातुओं में गिना जाता था। वह दिन आने वाला है जब दुकानो में टाइटेनियम तथा इसके ऐलॉयो के बने चम्मच, छुरी, कांटे बिकने

लगाग—टाइटेनियम घर-घर पहुंच रहा है।

पिछले दिनों तक बिना किसी आधार के टाइटेनियम एक विरल धातु समझा जाता था। कुछ लोगों का तो आज भी यही मत है। जबकि सच तो यह है कि प्रकृति में केवल गिनी-चुनी धातुएं ऐसी हैं जो टाइटेनियम से ज्यादा विस्तृत हैं। भू-पर्पटी में ताम्र, जिंक, लेड, स्वर्ण, रजत, प्लेटिनम, क्रोमियम, टंग्स्टन, पारद, मालिब्डेनम, बिस्मथ, एंटिमनी, निकिल तथा टिन की जितनी मात्रा है वह सब अगर जोड़ दी जाए तो भी टाइटेनियम की मात्रा इनसे कई गुना अधिक है। कितनी 'विरल' धातु है!

फिर भी कुछ हद तक 'विरल' शब्द टाइटेनियम के साथ संबंधित जरूर है। ऐसी कोई विरल ही पहाड़ी चट्टान होगी जिसमें यह धातु विद्यमान न हो।

टाइटेनियम के लगभग 70 खनिज ज्ञात हैं जिनमें यह धातु ऑक्साइड या टाइटेनियम अम्ल के लवणों के रूप में विद्यमान है। इसमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण इल्मेनाइट (पहले इसे मेनेकेनाइट कहते थे), रूटाइल, पेरोवस्काइट तथा स्फीन हैं। टाइटेनियम खनिजों की संख्या लगातार बढ़ती ही जा रही है। अभी हाल में ही टाइटेनियम का एक बिल्कुल नया खनिज (बेहतर होगा अगर हम इसे खनिज न कहकर दाना कहें क्योंकि इसका वजन केवल 0.1 ग्राम है) लोवोजेर्स्काया तून्द्रा (कोला प्रायद्वीप में) मिला है जिसका नाम 'नाटीसाइट' रखा गया है। यह नाम इसमें विद्यमान तत्वों के आधार पर रखा गया है—सोडियम, टाइटेनियम तथा सिलिकन।

कुल मिलाकर विश्व में टाइटेनियम अयस्कों के 150 निक्षेप ज्ञात हैं। परंतु पृथ्वी खनिज पदार्थों से कितनी भी समृद्ध क्यों न हो, इनके भंडार कभी-न-कभी खत्म जरूर होंगे। इसलिए वैज्ञानिकों और विज्ञान-गल्प के कथाकारों की निगाह अब महासागरों की गहराइयों और अंतरिक्ष पर लगी है जो भविष्य में मानव-जाति के लिए धातुओं की खान सिद्ध हो सकते हैं।

अमरीकी अंतरिक्ष यान 'अपोलो' तथा सोवियत स्वचलित स्टेशन 'लूना' द्वारा पृथ्वी पर चंद्रमा की मिट्टी के नमूने लाए गए। इन उड़ानों से पहले ही कुछ वैज्ञानिकों का यह मत था कि चंद्रमा की मिट्टी में टाइटेनियम भरपूर मात्रा में उपस्थित है। जो बात कल तक सिर्फ एक परिकल्पना थी वह अब सत्य सिद्ध हो गई है। हो सकता है कि निकट भविष्य में अखबारों में यह खबर छपे कि चंद्रमा की प्रथम टाइटेनियम खान से टाइटेनियम निकाला जा रहा है।

सोवियत अंतरिक्ष यान 'सोयुज-13' के कर्मीदल-अंतरिक्ष यात्री प्योत्र क्लीमूक तथा वालेन्तीन लेबेदेव पृथ्वी पर रोचक आंकड़े लाए। इन्हें एक ग्रहीय नीहारिका



नराबैंगनी स्पेक्ट्रम चित्र खीचने मे सफलता प्राप्त हुई। इस नीहा
ायो की शुरू से ही विशेष रुचि रही थी। ऐसी नीहारिका गैर
ासके केंद्र में एक गरम नक्षत्र होता है। चूंकि नीहारिकाए पृथ्वी
है, अतः वैज्ञानिको को इनकी कोई विशेष जानकारी नही है
रिकाओं का अध्ययन किया जा रहा है तब से उसमें केवल
उपस्थित पाए गए है। विशेष बात यह है कि 'सोयुज 13
साल पहले तक के समय के अंदर इस जानकारी मे तनिक
परंतु इस अंतरिक्ष यान के उपकरणो ने नीहारिका
—ऐलुमिनियम तथा टाइटेनियम की उपस्थिति सत्य सिद्ध
इस प्रकार हम देखते हैं कि न तो हमारे ग्रह पर टाइटेनिय
न ही इसके पडोसी ग्रहों तथा अन्य आकाशीय पिंडों पर।
से निकालकर उसे उस रूप मे भी तो बदलना है जिससे आ
पका उपयोग किया जा सके। और यह कोई सरल काम न
कारण यह है कि टाइटेनियम तथा ऑक्सीजन की बहुत प
न मे यह जोड़ी सबसे पक्की जोडियों में गिनी जाती है (टाइ
नी यौगिक के रूप मे पाया जाता है)।

न तो विद्युत धारा टाइटेनियम को ऑक्सीजन से अलग कर
उच्च ताप। वैज्ञानिकों को मजबूर होकर स्वतत्र रूप से टा
का कोई दूसरा ही तरीका खोजना पड़ा। 1940 में अमरीकी

ने टाइटेनियम के औद्योगिक उत्पादन की एक विधि ढूढ़ निकाली। इस विधि के अनुसार सबसे पहले क्लोरीन तथा कार्बन की सहायता से टाइटेनियम ऑक्साइड को टाइटेनियम टेट्राक्लोराइड में परिवर्तित कर लेते हे तथा इस प्रकार ऑक्सीजन की जगह क्लोरीन ले लेता है। क्लोरीन को अलग करना काफी आसान काम है। यह काम, उदाहरणतया, मग्नीशियम जैसा तत्त्व बडी सरलता से कर सकता है। टाइटेनियम टेट्राक्लोराइड मैग्नीशियम के साथ प्रतिक्रिया करके एक स्पंज बनाता है जिसमें टाइटेनियम, मग्नीशियम तथा मैग्नीशियम क्लोराइड उपस्थित होते है। शुद्ध तथा ठोस टाइटेनियम प्राप्त करने के लिए इस स्पंज का निर्वात या निष्क्रिय गैस के वातावरण मे (जिससे धातु वायु में उपस्थित नाइट्रोजन तथा ऑक्सीजन से सुरक्षित रहे) प्रगलन करते है। आजकल विशेष रूप से शुद्ध टाइटेनियम प्राप्त करने के लिए आयोडाइड प्रोसेस अपनाया जाता है। इसके आविष्कारक हमारे जाने-पहचाने वैज्ञानिक वान आर्केल तथा डि बोहर थे।

टाइटेनियम को ज्यादा सस्ता और इस तरह उपयोगी बनाना एक बडी समस्या है जिसकी ओर विशेष अनुसंधान-संस्थानों का ध्यान संकेंद्रित है। इन संस्थानो की संख्या बढ़ती जा रही है। कुछ समय पहले क्लीवलैंड (सं. रा अमरीका) मे हल्की धातुओं के अध्ययन का एक नया संस्थान खोला गया। मजेदार बात यह थी कि इस संस्थान के उद्घाटन का फीता...टाइटेनियम का बनाया गया था। इस फीते को काटने के लिए शहर के मेयर का कैंची की जगह गैस बर्नर इस्तेमाल करना पडा और संरक्षी चश्मा भी पहनना पडा।

हमारे दिनों हजारो वैज्ञानिकों का ध्यान टाइटेनियम पर केंद्रित है। असख्य प्रयोगशालाओं मे इस धातु के नमूनों पर रोज हजारो ‘अत्याचार’ किए जाते हैं, उनके टुकड़े किए जाते है, उन्हें तोड़ा-मोडा जाता है, अम्लो व क्षारों मे ‘उबाला’ जाता है, अतिनिम्न तापमानों तक शीतित किया जाता है, उच्च आवृत्ति वाली विद्युत धारा तथा पराध्वनि से तड़फाया जाता है।

और टाइटेनियम मनुष्य को अपने रहस्य बता रहा है।

विटामिन V

दुर्घटना स्थल पर एक नई चीज पाई गई—विचार वास्तविकता का रूप ले लेता है—दरवाजे पर दस्तक का देवी कोई जवाब नहीं देती—एक गलती का परिणाम—जब व्होलर बीमार थे—'मैं असली गधा था!'—40 वर्ष बाद—वैनेडियम का मूल्य!—गगनचुंबी चट्टानों पर स्थित खान—अनोखा पेट्रोल—क्या शुक्र ग्रह से अयस्क प्राप्त किया जा सकता है?—इस्पात की अश्रांति का रहस्य—तोप आकाश में पहुंच गई—आक्रमण और रक्षा—'राजनीतिक' चालाक बनने की कोशिश कर रहे थे—सुदूर पूर्व के इलाके में—स्याही का इंद्रधनुष—प्लेटिनम जैसी अच्छी एक धातु—सूअर भी खुश हैं—समुद्री संग्रहकर्ता—समुद्र की सतह पर बागवानी—बहुत ही पुरानी बात—भविष्यवाणी कैसे की जाती है?

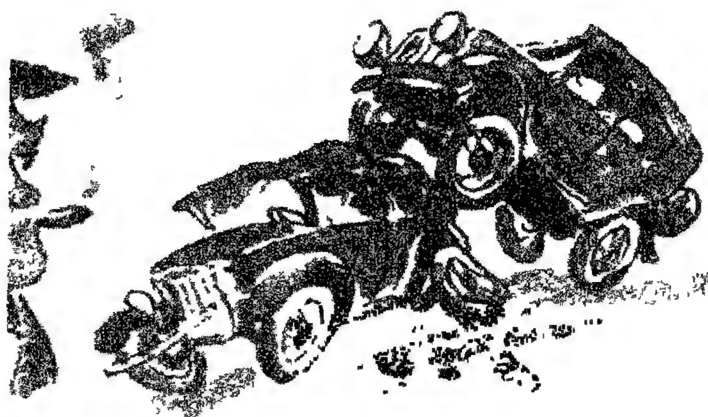
'अगर वैनेडियम न होता तो मेरी मोटरकारें भी न होतीं।' ये शब्द मोटर उद्योगपति हेनरी फोर्ड ने कहे थे। 1905 में एक बार वे कारों की दौड़ देख रहे थे। हमेशा की तरह इस दौड़ मे भी एक दुर्घटना घटी, दो कारें आपस में टकरा गईं। कुछ समय बाद जब फोर्ड दुर्घटनास्थल पर पहुंचे तो उन्हे जमीन पर दुर्घटनाग्रस्त कार के पुर्जे का एक टुकड़ा पडा दिखाई दिया। फोर्ड ने उसे उठा लिया। यह फ्रेंच कार के वाल्व स्पिंडल का टुकड़ा था। देखने में वह आम वाल्व स्पिडल जैसा था परंतु आकार मे काफी छोटा था। फोर्ड वैसे ही मोटर-कारों के बहुत बड़े विशेषज्ञ थे। उन्होंने उस पुर्जे को रासायनिक विश्लेषण हेतु प्रयोगशाला भेज दिया। वहा यह पता चला कि उस पुर्जे का स्टील बहुत मजबूत था और इसमें वैनेडियम मिला हुआ था।

फोर्ड ने अपनी मोटर-कारों के निर्माण मे भी ऐसा स्टील इस्तेमाल करने का फैसला किया। उनका ऐसा सोचना स्वाभाविक था। अगर इस विचार को

दिया जाए तो कारें काफी हल्की हो जाएंगी, जिससे धातु की
ो। इसका मतलब यह हुआ कि कार पर लागत कम लगेगी
ो मजदूरी घट जाएगी और मालिक की चांदी हो जाएगी। फोर्ड
काम शुरू कर दिया। उनके सामने काफी कठिनाइयां आईं परंतु
अपने उद्देश्य में सफलता मिल गई। कई सालों बाद मोटरों की
ट फ्रांस सरकार के व्यापार विभाग ने जब फोर्ड की नई कार
क्षण किया तो पता चला कि अमरीकी स्टील हर लिहाज में फ्रेंच
बेहतर था।

यह जरूरी है कि मोटर उद्योग में क्रांति लाने वाला वेनेडियम
ता है?

स्वीडिश रसायनज्ञ बर्जेलियस ने वेनेडियम की कहानी इस प्रकार
समय पहले सुदूर उत्तर में एक अतिसुंदर देवी रहती थी जिसका
। सब लोग उसके प्रशंसक थे। एक दिन जब देवी सिंहासन पर



रही थी किसी ने उसके महल का दरवाजा खटखटाया। देवी
सोचा, जो भी और आया है जब दूसरी बार दरवाजा खटखटाएगा,
। परंतु सामने खड़े व्यक्ति ने दूसरी बार दरवाजा नहीं खटखटाया।
गया। देवी को बड़ा आश्चर्य हुआ। वह सोचने लगी कि ऐसा
आया था जो इतना बेसब्र निकला। उसने खिड़की में जब झांक

कर देखा तो व्योलर नामक व्यक्ति का वापस जाते देखा।

'कुछ दिनों बाद फिर किसी ने देवी के महल का दरवाजा खटखटाया। परतु इस बार बाहर खडा आदमी तब तक खडा रहा जब तक कि देवी ने दरवाजा खोल नही दिया। एक अतिसुंदर नौजवान नील्स सेफस्ट्रोम देवी से मिलने आया था। दोनो को एक-दूसरे से प्यार हो गया और उन्होने शादी कर ली। कुछ समय बाद उनके एक पुत्र हुआ, जिसका नाम वैनेडियम रखा गया।' 1830 में स्वीडिश भौतिकविद् तथा रसायनज्ञ नील्स सेफस्ट्रोम ने जिस नई धातु की खोज की, उसे यही नाम दिया गया।



इस कहानी मे एक बात गलत बताई गई है और वह यह है कि देवी वेनेडिस के महल का दरवाजा जिस व्यक्ति ने खटखटाया था वे फ्रेडरिख व्योलर नहीं थे। वे थे—ए डेल रीओ। रसायनज्ञ तथा खनिजविद् डेल रीओ मैक्सिकोवासी थे बहुत पहले 1801 मे मैक्सिको मे पाए गए भूरे लेड अयस्को का अ समय रीओ ने उनके अंदर एक ऐसी धातु को उपस्थित पाया जो उस अज्ञात थी। इस धातु के यौगिक विविध रंगों के थे जिसके कारण इसका नाम 'पानक्रोमियम' रखा अर्थात् सब रगों वाली। बाद मे इसका नाम बदलकर 'एरिट्रोनियम' रख दिया जिसका अर्थ है—'ल

परंतु दुर्भाग्यवश डेल रीओ अपनी खोज की वैज्ञानिक पुष्टि नह इसके अलावा 1802 मे वे इस गलत निष्कर्ष पर पहुंचे कि यह नया त है जिसकी कुछ दिनों पहले खोज की गई थी। कुछ सालों बाद व्योलर मिलने वाली थी, पर बीमारी के कारण वह अपना अनुसधान कार्य सके। मेक्सीकी अयस्कों का विश्लेषण करते हुए वे हाइड्रोजन फ्ल विषक्त हो गए। इसलिए बर्जेलियस को यह कहने का अवसर मिल मे देवी के दरवाजे को जोर से खटखटाने की हिम्मत नहीं थी।

जब व्योलर बीमार थे वैनेडियम का दूसरा जन्म हुआ। परतु इस

तत्त्व युवा स्वीडिश वैज्ञानिक नील्स सेफस्ट्रोम की गोद में था। उन दिनों स्वीडन में धातुकर्म का विकास हो रहा था। देश के विभिन्न भागों में नए-नए कारखाने लगाए जा रहे थे। वैज्ञानिकों ने देखा कि कुछ निक्षेपों के लोह अयस्कों से प्राप्त धातु भंगुर थी परन्तु दूसरे अयस्कों से प्राप्त धातु बहुत सुघट्य थी। वैज्ञानिकों को समझ नहीं आ रहा था कि ऐसा अन्तर क्यों है? सेफस्ट्रोम ने इस प्रश्न का उत्तर ढूंढना शुरू कर दिया।

उन्होंने उच्च-कोटि की धातु वाले अयस्कों का रासायनिक अध्ययन किया। काफी प्रयासों के बाद वे यह सिद्ध कर सके कि इन अयस्कों में एक नया तत्त्व विद्यमान है और यह वही तत्त्व है जिसकी दस साल पहले डेल रीओ ने खोज की थी, परन्तु गलती से वे इसे क्रोमियम समझ बैठे थे। इस नई धातु का नाम वैनेडियम रखा गया।

डेल रीओ और व्होलर दोनों ही इस नए तत्त्व के धर्मपिता न बन सके हालांकि इस बात की काफी संभावना थी। सेफस्ट्रोम की सफलता के बाद व्होलर ने अपने मित्र को निम्न शब्दों में एक पत्र लिखा : 'मैं गधा नहीं तो और क्या था जो भूरे लेड अयस्क में इस नए तत्त्व को ही न देख पाया। बर्जेलियस मेरा मजाक ठीक ही उड़ा रहा था। मैं मानता हूं कि उस वैनेडियम के महल का दरवाजा मैंने ठीक तरह से नहीं खटखटाया है।'

वस्तुतः तब उसके कई साल बाद भी वैज्ञानिक वैनेडियम को शुद्ध रूप में नहीं प्राप्त कर सका। अन्ततः 1869 में एक अंग्रेज रसायनज्ञ हेनरी रॉस्को को बहुत प्रयासों के बाद शुद्ध धात्विक वैनेडियम प्राप्त करने में सफलता मिली। हालांकि यह शुद्धता केवल उन दिनों के लिए ठीक कही जा सकती थी क्योंकि धातु में अभी भी 4% से ज्यादा अशुद्धियां थीं जबकि यह एक ऐसा तत्त्व है जिसमें जरा सी भी अशुद्धि होने से इसके गुणों में बहुत ज्यादा परिवर्तन आ जाता है। शुद्ध वैनेडियम रजत-भूरे रंग का होता है। यह अतिसुघट्य होता है तथा इसका फोर्जन किया जा सकता



हे। नाइट्राजन, आक्साजन, हाइड्राजन जैसे तत्त्वों का तनिक-सा मा सख्त हो जाती है तथा किसी काम की नहीं रहती है। बहुत दिनों का शुद्ध रूप में प्राप्त करना बहुत मुश्किल रहा क्योंकि उच्च ताप अत्यधिक सक्रिय हो जाती है। वैज्ञानिकों को ऐसी कोई धातु नहीं जिसकी क्रूसिबल वैनेडियम में न पिघले। वैनेडियम उच्च ताप प का पिघला देता था और खुद अशुद्ध बन जाता था। वैज्ञानिक दूस पर मजबूर हो गए। इसके लिए एक विद्युत-अपघटनी विधि ढूंढी 99 99% शुद्ध वैनेडियम प्राप्त होता है। इस उपलब्धि का महत्त्व सम है, कहा 4% और कहां 0 01%।

बहुत लंबे अर्से तक वैनेडियम को औद्योगिक कार्यों में प्रय जा सका। और किया भी कैसे जाता। इस शती के आरंभ में ही विश्व का सालाना उत्पादन कुछ टन से ज्यादा नहीं था और उसकी कीम भी ज्यादा थी; एक किलोग्राम वैनेडियम का दाम 50,000 स्वर्ण

वैनेडियम का इतना कम उत्पादन तथा इसकी इतनी स्वाभाविक थी। हालांकि भू-पर्पटी में यह पर्याप्त मात्रा में विद्यम से करीब 1000 गुना अधिक), परंतु इसके भंडार बहुत कम मिलते हैं जिसके कारण यह विरल धातु समझी जाती है। जिस अयस्क मे सिर्फ 1% वैनेडियम होता है उसे बहुत ही ज्यादा मूल्यवान समझा जाता है। जिन अयस्कों में इस मूल्यवान तथा विरल धातु की केवल 0.01% मात्रा विद्यमान होती है उनका भी औद्योगिक उत्पादन मे उपयोग होता है।



विश्व मे वैनेडियम का एक सबसे बडा भंडार पेरू के पहाड़ों पर समुद्र की सतह से 4700 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है। हाल में कैस्पियन सागर के प्रायद्वीप बुजाची के तटवर्ती इलाके मे पेट्रोल का औद्यो शुरू हुआ है जिसमें वैनेडियम की मात्रा बहुत अधिक है। अब यह बात सोचनी चाहिए कि 'पेट्रोल अयस्क' से इस कीमती तत्त्व

कैसे की जाए।

दिलचस्प बात यह है कि पृथ्वी पर गिरने वाले उल्कापिंडों में वेनेडियम की मात्रा भू-पर्पटी की अपेक्षा 2-3 गुना अधिक होती है। सूर्य के स्पेक्ट्रम में भी ऐसी रेखाएं दिखाई देती हैं जो वेनेडियम के परमाणुओं की उपस्थिति बताती हैं। सूर्य पर भी इस धातु की मात्रा हमारी पृथ्वी से काफी ज्यादा है।

संभव है कि किसी दिन पृथ्वी के धातुकर्मीय कारखानों को अन्य ग्रहों से ऐसे अयस्क मिलने लगें जिनमें वेनेडियम की भरपूर मात्रा हो, उदाहरण के लिए, मंगल या शुक्र से तथा यह एक साधारण बात समझी जाए, परन्तु फिलहाल पृथ्वीवासियों को केवल अपने स्रोतों पर निर्भर रहना है।

अयस्कों से वेनेडियम अलग करने में अत्यधिक कठिनाई अनुभव होने की वजह से ही इस अद्भुत धातु को बहुत सालों तक किसी भी कार्य में प्रयुक्त नहीं किया गया। परन्तु तकनीक के तीव्र विकास ने वेनेडियम के लिए औद्योगिक जगत के द्वार खोल दिए। इस तत्त्व में स्टील को बहुमूल्य गुण प्रदान करने की अद्वितीय क्षमता होने के कारण इसका भविष्य बन गया और इसे स्टील के विटामिन के रूप में प्रयोग किया जाने लगा।

स्टील में वेनेडियम की थोड़ी-सी मात्रा (1 प्रतिशत का कुछ हिस्सा) मिलाने से ही यह लचीला, प्रत्यास्थ तथा अत्यधिक मजबूत हो जाता है। ऐसे स्टील की कर्षण तथा प्रतिघात सहने की क्षमता उच्च होती है; यह आसानी से नहीं टूटता और इसका घिसाव भी न्यूनतम होता है। यही तो वे गुण हैं जिनकी कारों के पुर्जों को बहुत सख्त जरूरत है। यही कारण है कि कारों के मुख्य अंग तथा पुर्जे जैसे इंजन, वाल्व स्प्रिंग, निलंबन स्प्रिंग, एक्सल, शैफ्ट तथा गिअर आदि वेनेडियम स्टील के बनाए जाते हैं।

प्रथम विश्व युद्ध के दौरान फ्रांसीसी इंजीनियरों ने एक ऐसा हवाई जहाज बनाया जिस पर मशीनगन की जगह तोप लगी हुई थी। इस तोप ने जर्मन पायलटों पर कहर ढा दिया था। हवाई जहाज पर तोप कैसे फिट की जा सकी? उन दिनों हवाई जहाज बहुत छोटे होते थे तथा उन पर ज्यादा वजन नहीं रखा जा सकता था। पता चला कि हवाई जहाज पर तोप को पहुंचाने वाला और कोई नहीं वैनेडियम ही था। फ्रेंच हवाई तोपें वेनेडियम स्टील की बनी थीं। कम वजन होते हुए भी उनकी मार तगड़ी थी। उन्होंने जर्मन जहाजों पर तबाही ढा रखी थी।

इसके बाद सिपाहियों के टोप भी वेनेडियम स्टील के बनाए जाने लगे। ये टोप बहुत हल्के तथा पतले थे तथा अपने मालिकों को गोलियों व हथगोलों की मार से पूर्णतया सुरक्षित रखते थे। आर्टिलरी क्रू के पक्के निशानबाजों की

गोलियों से सुरक्षा के लिए भी कवच चाहिए थे। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए शैफील्ड में एक विशेष प्रकार का कवच स्टील बनाया गया जिसमें सिलिकन तथा निकिल काफी मात्रा में मिलाए गए थे। परन्तु परीक्षण के दौरान गोलियां बड़ी आसानी से इस धातु की बनी प्लेटों को चीर गईं। तब केवल 0.2% वैनेडियमयुक्त स्टील इस्तेमाल करने का फैसला किया गया। परिणाम हद से ज्यादा अच्छे निकले कठिनतम परीक्षणों के दौरान 100 से 99 बार यह स्टील कसौटी पर खरा उतरा।

इस प्रकार वैनेडियम आक्रामक के साथ-साथ रक्षात्मक कार्यों में भी प्रयोग किया जाने लगा। बहुत सारी अमरीकी, फ्रेंच तथा अंग्रेज फर्में विभिन्न क्षेत्रों में स्वेच्छा से वैनेडियम स्टील इस्तेमाल करने लगीं। परंतु जर्मन धातुकर्मियों ने इस धातु के प्रति बड़ा रूखा रवैया रखा, हालांकि वे लोग ऐसे मामलों में बहुत बड़े विशेषज्ञ समझे जाते थे। उन्होंने वैनेडियम स्टील का प्रयोग अस्वीकार कर दिया था। एक जर्मन फर्म ने तो दावे के साथ यह कह दिया था कि इस धातु का प्रगलन किसी काम का नहीं है। जर्मन लोगों की यह धारणा विरोधाभासी थी।

शीघ्र ही इस बात का कारण पता चला गया जर्मन लोगों के खुद के पास वैनेडियम के अयस्क बिल्कुल नहीं थे, अतः वे विश्व मार्केट में इस धातु का औद्योगिक प्रयोग रोकने के लिए हर संभव प्रयास अपनाए। इस दौरान खुद वे जी-जान से ऐसी कोई दूसरी धातु खोजने में लगे रहे जो स्टील पर वैनेडियम जैसा असर डाल सके। परंतु शीघ्र ही उनकी समझ में यह बात आ गई कि कोई भी दूसरी धातु वैनेडियम का मुकाबला नहीं कर सकती और उन्हें इस धातु का महत्त्व मानना ही पड़ेगा। तब धात्विक 'राजनीतिकों' ने वैनेडियम की बदनामी करनी बंद कर दी। इस धातु का उत्पादन साल-दर-साल बढ़ने लगा।

ऐसे उद्योगों की गिनती करना मुश्किल है जिनमें आज वैनेडियम स्टील प्रयुक्त किया जाता है। वैमानिकी, रेलगाड़ियां, विद्युत व रेडियो इंजीनियरी तथा सैनिक उद्योग इसके मुख्य उपभोक्ता हैं। ढलवां लोहा भी वैनेडियम की 'सेवाएं' प्राप्त करता है। आपको याद होगा कि डेल रीओ ने इस तत्त्व का नाम पानक्रोम (सब रंगों वाला) रखा था। इसके हरे, पीले, लाल, काले और स्वर्ण रंग के लवण रंगों तथा विशेष प्रकार की स्याही के निर्माण में और कांच व चीनी-मिट्टी उद्योग में सफलतापूर्वक प्रयुक्त किए जा रहे हैं। यहां यह बताना आवश्यक है कि सेफ्स्ट्रोम द्वारा वैनेडियम के आविष्कार के बाद जिस उद्योग में पहली बार इस धातु का प्रयोग किया गया था, वह चीनी-मिट्टी उद्योग ही था। वैनेडियम यौगिकों की सहायता से पोर्सिलेन तथा मिट्टी के बर्तनों पर सोने की पालिश की जाती थी तथा कांच को हरे या आसमानी रंग में रंगा जाता था।

1812 में सुप्रसिद्ध रूसी रसायनज्ञ नि. जीनिन को एनिलीन प्राप्त करने में सफलता मिल गई। इस सफलता ने रंजक उद्योग के विकास में अतिमहत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। यहां भी वैनेडियम ही काम आया। पता चला कि सिर्फ 1 ग्राम वैनेडियम पेण्टा-ऑक्साइड से [illegible] किलोग्राम वर्णहीन एनिलीन लवण को काले एनिलीन में परिवर्तित किया जा सकता है जो कि एक तीव्र रंजक है।

हमारे समय में भी रसायन में वैनेडियम के बिना काम नहीं चल रहा है। इसका ऑक्साइड सल्फ्यूरिक अम्ल के उत्पादन में एक उत्तम उत्प्रेरक का कार्य करता है। इस अम्ल को रसायन की रोटी कहते हैं। बहुत सालों तक इस काम में प्लेटिनम एस्बेस्टॉस का प्रयोग प्रचलित था अर्थात् ऐसा एस्बेस्टॉस जिस पर प्लेटिनम का पाउडर लगा होता था। परन्तु दो कारणों से इस उत्प्रेरक का प्रयोग व्यावहारिक नहीं था- पहला यह कि प्लेटिनम बहुत महंगा था और दूसरा यह कि ऐसा उत्प्रेरक बहुत अस्थायी प्रकृति का था। विभिन्न गैस सम्मिश्रणों के 'जहर' के कारण यह अच्छा काम नहीं करता था। यही कारण है कि जब सल्फ्यूरिक अम्ल के उत्पादन में नए उत्प्रेरक वैनेडियम यौगिकों का प्रयोग करने का प्रस्ताव पेश किया गया तो सल्फ्यूरिक अम्ल की फैक्टरियों ने बड़ी खुशी से प्लेटिनम एस्बेस्टॉस का प्रयोग बन्द कर दिया। वैनेडियम ऑक्साइड पेट्रोल भंजन तथा बहुत सारे अन्य कार्बनिक पदार्थों के उत्पादन में भी प्रयुक्त किया जाता है।

अब तो पशुओं भी वैनेडियम की कदर जान गए हैं। अर्जेण्टीना में इनके चारे में वैनेडियम मिलाकर विभिन्न प्रयोग किए गए हैं। पता चला है कि ऐसे चारे से सुअरों की भूख बढ़ जाती है तथा उनका वजन बड़ी तेजी से बढ़ता है।

लॉस-एंजिल्स के अस्पताल की एक प्रयोगशाला में अमरीकी वैज्ञानिकों ने चूहों पर वैनेडियम के प्रभाव का अध्ययन किया। यह देखा गया कि जिन चूहों को वैनेडियम बिल्कुल नहीं दिया गया था उनकी वृद्धि आम चारा खाने वाले अपने साथियों के मुकाबले दुगुना कम गति से हो रही थी। परन्तु जैसे ही उनके राशन में थोड़ा-सा वैनेडियम मिला दिया गया तो कुछ दिनों बाद उनका आकार अपने साथियों जैसा हो गया था।

ऐसा लगता है कि बहुत सारे जीवित प्राणियों को अपनी कार्यगति के लिए वैनेडियम की आवश्यकता पड़ती है। मुर्गी के अंडों व मांस, गाय के दूध, जानवरों के यकृत तथा मनुष्य के मस्तिष्क में वैनेडियम उपस्थित पाया गया है।

विचित्र बात तो यह है कि कुछ समुद्री पौधे तथा जीव, जैसे, होलोथूरियन, एसीडियन, जलसाही आदि, एक विशेष तरीके से जल में से वैनेडियम 'इकट्ठा' करते रहते हैं। मनुष्य को अभी तक यह जानने में सफलता नहीं मिली है कि

यह कौन-सा तरीका है। कुछ वैज्ञानिकों का मत यह है कि के अंदर वैनेडियम वही भूमिका निभाता है जो लाल्म मनुष्य तथा के रुधिर में निभाता है अर्थात् वेनेडियम 'श्वसन' में उनकी सहायता करता है। परंतु अन्य वैज्ञानिकों का विचार यह है कि समुद्री जीवों को वेनेडियम की आवश्यकता श्वसन के लिए नहीं, बल्कि पेट भरने के लिए है। भावी अनुसंधान कार्य ही बता सकेंगे कि कौन सच कहता है। अभी तक सिर्फ यह सिद्ध किया जा सका है कि होलोथूरियनो के रुधिर मे बहुत वेनेडियम उपस्थित होता है तथा कुछ किस्मों के ऐसिडियनों के रुधिर मे इस तत्त्व की मात्रा समुद्र में इसकी मात्रा से करोडो गुना अधिक है। ये वैनेडियम बैंक नहीं तो ओर क्या हैं? स्वाभाविक है कि वैज्ञानिक इन समुद्री जीवो की सहायता से वैनेडियम प्राप्त करने के प्रयास कर रहे हैं। उदाहरण के लिए, जापान में समुद्र के किनारे कई किलोमीटरो तक



ऐसिडियन बसा दिए गए है। ऐसिडियन काफी जननक्षम होते हे क्षेत्र से जितने ऐसिडियन प्राप्त होते हैं उनका वजन 150 मिलीग्रा है। 'फसल' इकट्ठी करने के बाद यह जीवित वैनेडियम प्रयोगशालाओं में लाया जाता है जहा इसमे से औद्योगिक धा है। कुछ दिनों पहले समाचार-पत्रो से यह पता चला हे कि जापा ने ऐसा स्टील बनाने मे सफलता प्राप्त कर ली है जिसमें ऐसिडि वैनेडियम मिलाया गया है।

वैनेडियम के 'संग्रहकर्ता' भूमि पर भी हैं। इनमें से एक के तरह से परिचित है—वह है—जहरीली खुमी। फफूंदी की कई कि

ही दीवानी है। [illegible] के बिना विकसित ही नहीं हो सकती। जो पौधे किसी तत्त्व का संचयन [illegible] करते हैं, उन्हें विज्ञान जगत में 'बायोकन्सेण्ट्रेटर' कहते हैं। ऐसे पौधे भूविज्ञानियों [illegible] सहायता [illegible]। कुछ मूल्यवान धात्विक अयस्कों की खोज के [illegible] की भूमिका निभाते हैं।

1971 में [illegible] ने [illegible] पर्वत की ढालों पर एक ऐसे पौधे की खोज की [illegible] अब तक पूर्णतया अपरिचित था। उन्होंने इस पौधे का नाम '[illegible]' रखा। यह उस एक कोशिकीय शैवाल का नाम है जो पृथ्वी पर [illegible] था। अतः पाठकों के मन में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि इस शैवाल के साथ वैनेडियम का क्या संबंध हो सकता है? [illegible] संबंध है। वैज्ञानिकों का विचार है कि उन दिनों [illegible] ने पृथ्वी के वातावरण के निर्माण तथा भू-पर्पटी में वैनेडियम तथा यूरेनियम आदि [illegible] के संचयन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

हमने वैनेडियम का [illegible] भी बता दिया है और वर्तमान भी। आप पूछेंगे कि इसका भविष्य क्या है? इस [illegible] धातु की किस्मत में क्या लिखा है?

वैनेडियम का भविष्य तो हम नहीं बता सकते, परंतु इसके अद्वितीय गुणों - [illegible], [illegible], उच्च गलनांक तथा लोह के मुकाबले कम [illegible] भार - को देखते हुए हम [illegible] सकते हैं कि वह दिन दूर नहीं जब वैनेडियम [illegible] निर्माण सामग्री का कार्य करने लगेगा। परंतु यह तभी संभव होगा जब मनुष्य इसको बहुत अधिक मात्रा में प्राप्त करना सीख जाएगा। फिलहाल वह इसकी बहुत कम मात्रा प्राप्त कर रहा है। प्रकृति के पास इस धातु के असंख्य भंडार हैं, परंतु वह इनकी सावधानी के साथ सुरक्षा करती है।

रहस्यमय 'X'

चीनी लिपि–साइबेरियन लाल लेड–सब कुछ बरतन की सफाई से शुरू हुआ–क्रूसिबल में धूसर सुइयां–मित्र लोग सलाह देते हैं–सूर्य पर ज्वाला–किस्मत साथ देती है–'घटिया' व्यवहार–नया रहस्य–जंगरोधी धातु का बना स्मारक–कार्यक्रम रद्द कर दिया जाता है–क्या आप चाय आइस्क्रीम के साथ पीते हैं?–स्टील पर 'पपड़ी' जम जाती है–पहला पेटेण्ट–कछुए की चाल से–एक रोचक वार्तालाप–धातुओं का क्रोमियम का बूट–देवता अपना खून बहा रहे हैं समस्या का हल–एक नई विशेषज्ञता–बेजोड़ अप्रत्याशित कठिनाइयां–'मैं खुद मुकाबला करूंगा'–हीरे के लिए 'बख्तर'– अंकगणित पर आधारित दृष्टिकोण–अंग्रेज लोग जानते हैं कि जो कुछ भी न कर रहे हैं, ठीक ही कर रहे हैं।

आप कोई भी सोवियत धातुकर्मीय निदर्शिका खोलकर देखें, स्टील की विभिन्न ब्राडों मे आपको बहुत सारो ब्रांडें ऐसी मिलेंगी जिनमें अक्षर "X" *उपस्थित होगा। उदाहरण के लिए X18H10T, X12M, OX23IO5, IIIX15 8X4B4ϕ1, X14 14 H3T 12X2HBϕA आदि। इस विषय को न जानने वाले व्यक्ति को यह अक्षर उतना ही रहस्यमय लगेगा जितनी की चीनी चित्रलिपि। परंतु एक धातुकर्मी इन अंकों व अक्षरों का मतलब उतनी ही अच्छी तरह से जानता है जितना कि एक संगीतज्ञ अपनी स्वरलिपि को। अंकों व अक्षरों के इन जोड़ों पर एक निगाह मारते ही वह समझ जाता है कि इन सब ब्राडों में एक बात सामान्य है और वह यह है कि इन सभी में विभिन्न मात्रा में क्रोमियम उपस्थित है (अक्षर X

* रूसी भाषा में क्रोमियम को कहते हैं।

ना मोचन करता है।)

व माथियों--निकिल, टंग्स्टन, मालिब्डेनम, वेनेडियम, टाइटेनियम, ानियम तथा अन्य तत्त्वों की तरह क्रोमियम से भी अलग-अलग बनाया जा सकता है। आधुनिक तकनीक में इस्तेमाल होने वाले विया होना चाहिए, बृहत् दाब तथा रासायनिक 'आक्रामकों' ने की शक्ति होनी चाहिए, लंबे अर्से तक भारी वजन सहने की ता, मशीनिंग के उपयुक्त होना चाहिए, न गर्मी से और न ही ाना चाहिए। स्टील को यह सारे गुण प्रदान करने में क्रोमियम ।

ीटर्सबर्ग में रसायनशास्त्र के प्रोफेसर इ. लेमान ने यूराल इलाके में मिले एक नए खनिज का वर्णन किया, जिसमें काफी बड़ी स्थित था। यह खान कैथरिनबुर्ग[*] के पास थी। कुछ सालों बाद



पा. पाल्लास ने निम्न शब्दों में बेरेजोव खानों का वर्णन किया म चार पिट हैं जिनमें 1752 से खुदाई चल रही है। इन पिटों था लेड अयस्कों के अलावा लाल रंग का एक अद्भुत लेड खनिज

[*] आधुनिक नाम स्वेर्दलोव्स्क है।

भी निकाला जा रहा है जो रूस की किसी दूसरी खान में पहले
है। यह लेड अयस्क और भी कई रंगों का होता है (कई बार
रंग का होता है), यह भारी होता है तथा अर्धपारदर्शी होता है
खनिज के छोटे-छोटे अनियमित पिरामिड कायर्माण में जड़ होने है
है जैसे कि नन्ही मणियां। इस अयस्क का चूर्ण करने पर पील
वर्णक प्राप्त होता है। इस खजिन का नाम 'साइबेरियन लाल
कुछ समय बाद इसका नाम बदलकर 'क्रोकोआइट' रख दिय

अठारहवीं शताब्दी के अंत में पाल्लास एक खनिज का
ले गए। वहां सुप्रसिद्ध फ्रेंच रसायनज्ञ लुई निकोला वेकलीन ने इ

1796 में वैकलीन ने क्रोकोआइट का रासायनिक विश्लेषण करके देखा। अपने प्रयोगों के परिणाम का उन्होंने इस प्रकार वर्णन किया 'यूरोप के खनिजीय सग्रहों में जितने भी इस पदार्थ के नमूने मौजूद हैं वे सभी बेरेजोव स्वर्ण खान से लाए गए हैं। किसी जमाने में यह खान इस खनिज से भरी हुई थी, परंतु सुना है अब इसके भडार खत्म हो गए है और आजकल इसे सोना देकर खरीदा जा रहा है विशेषतया, अगर इसका रग पीला है। इस खनिज के अनियमित आकार के नमूने या इसके छोटे-छोटे टुकड़े चित्रकारी मे प्रयोग किया जा



सकते है जहां हवा में खराब न होने वाले पीले-नारगी रंग की
काम के सिद्ध हो सकते हैं। साइबेरियन लाल खनिज के अ
पारदर्शकता तथा क्रिस्टलीय आकार ने खनिजज्ञों के मन में इस
प्राप्तिस्थल के प्रति रुचि पैदा कर दी है। इसका अत्यधिक न
लेड अयस्क की संलग्नता यह कहती है कि इस खनिज मे ते
'

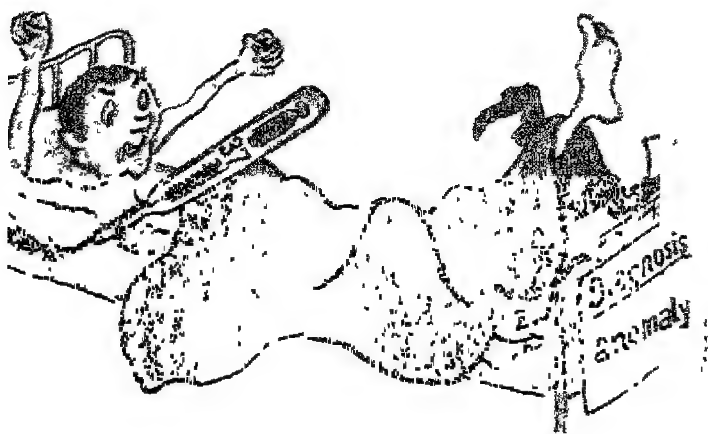
1797 में लुई वैकलीन ने एक बार फिर इस खजिन का रास
दोहराया। उन्होंने क्रोकोआइट को पीसकर पोटैशियम कार्बोनेट

जिसके परिणामस्वरूप उन्हें कार्बोनेट तथा पीले रंग का एक विलयन प्राप्त हुआ। इस विलयन के अंदर उस वक्त तक अज्ञात किसी अम्ल का पोटैशियम लवण उपस्थित था। जब इस विलयन में मर्क्यूरिक साल्ट मिलाया गया तो लाल रंग का अवसाद जमा हो गया और जब लैड साल्ट के साथ प्रतिक्रिया करायी तो पीला अवसाद जमा हो गया। जब उन्होंने विलयन में स्टैनस क्लोराइड मिलाया तो विलयन का रंग हरा हो गया। इसके बाद उन्होंने हाइड्रोक्लोरिक अम्ल की सहायता से लैड अवक्षेपित कर लिया और फिर निस्पंद को वाष्पित करके प्राप्त लाल क्रिस्टलों (ये क्रोमियम एनहाइड्राइड क्रिस्टल थे) में कार्बन मिलाकर उन्हें एक ग्रेफाइट क्रूसिबल में रख दिया और उच्च ताप तक गरम किया। प्रयोग समाप्त होने पर वैज्ञानिक को क्रूसिबल में धूसर रंग की धात्विक सूइयां मिलीं। इस प्रकार वैकलीन ने एक नया तत्त्व खोज निकाला। उनके एक मित्र ने इस तत्त्व का नाम क्रोमियम रखने की सलाह दी (यूनानी शब्द 'क्रोमा' से, जिसका अर्थ है—'वर्ण') क्योंकि इस तत्त्व के यौगिक विविध चमकीले रंगों के थे। प्रसंगवश यह बताना चाहेंगे कि सिलेबल क्रोम बहुत सारे ऐसे शब्दों में पाया जाता है जिनका इस तत्त्व के साथ कोई संबंध नहीं है। उदाहरण के लिए शब्द 'क्रोमोसोम' का यूनानी भाषा में अर्थ है--'पिंड, जो रंग जाता है', रंगीन प्रतिबिंब प्राप्त करने के लिए जिस उपकरण का प्रयोग किया जाता है उसे क्रोमोस्कोप कहते हैं; फोटोग्राफी के शौकीन 'आइसोपानक्रोम', 'पानक्रोम', 'आर्थोक्रोम' आदि रंगीन फिल्मों से अच्छी तरह परिचित हैं। खगोल भौतिकविज्ञानी सूर्य के वायुमंडल में चमकने वाली रचनाओं को क्रोमोस्फियरिक ज्वालाएं कहते हैं।

आरंभ में वैकलीन को यह नाम पसंद नहीं आया क्योंकि उनके द्वारा आविष्कृत धातु साधारण धूसर रंग की थी। परंतु मित्र ने उन्हें मना ही लिया और जैसे ही फ्रेंच विज्ञान अकादमी ने उनकी खोज को मान्यता दे दी, विश्व के सारे रसायनज्ञों ने शब्द 'क्रोमियम' ज्ञात तत्त्वों की सूची में जोड़ दिया।

नई धातु की किस्मत तेज निकली। इसका उच्च गलनांक, अत्यधिक मजबूती तथा अन्य धातुओं के साथ, विशेषतया लौह के साथ, आसानी से ऐलॉय बनाने की क्षमता देखकर धातुकर्मियों ने इसमें बहुत रुचि दिखाई। वक्त बीतता जा रहा है, परंतु उनकी रुचि वैसी-की-वैसी ही है। पहले की तरह आज भी धात्विकी ही क्रोमियम की मुख्य उपभोक्ता है, हालांकि बहुत दूसरे क्षेत्रों में भी इसका सफलतापूर्वक उपयोग होता है।

क्रोमियम में धातुओं के सभी गुण उपस्थित हैं—वह उत्तम ताप व विद्युत चालक है, तथा अधिकांश धातुओं की तरह चमकदार है। इसकी एक और भी



खूबी है 37°C के आसपास ताप होने पर यह 'बिगड़' जाता ह
सारे भौतिक गुण एकदम बदल जाते हैं। इस ताप पर क्रोमियम
घर्षण अपनी चरम सीमा पर पहुंच जाता है जबकि प्रत्यास्था ग
हो जाता है। इसी प्रकार विद्युत चालकता, रेखीय प्रसार गुणांक तथा त
बल में भी अचानक परिवर्तन आ जाते है।

जैसे-जैसे वैज्ञानिक इन अद्‌भुत गुणो को समझने की को
क्रोमियम के एक नए गुण ने उन्हें चक्कर मे डाल दिया। भौतिक
ही एक भौतिकीय नियम मालूम है—किसी पदार्थ की चुम्बकीय
क्रिस्टलिक ढांचे के बिल्कुल अनुकूल होती है। परंतु अतिशुद्ध क्रोमिय
से पता चला है कि इस पर यह नियम लागू नहीं होता।

क्रोमियम मे जरा-सी भी अशुद्धता आने पर वह बहुत भ
जिसके कारण निर्माण-कार्य मे इसका प्रयोग असंभव हो जाता है। प
तत्त्व होने के कारण धातुकर्मी बहुत दिनों से इसे मान्यता देते आ
मे थोड़ा-सा क्रोमियम मिलाने से उसकी मजबूती तथा जीर्णरोधता
बाल-बेयरिंग स्टील में ये गुण होते हैं जिसमे क्रोमियम (1.5%) के
(लगभग 1%) भी मिला होता है। इस प्रकार के स्टील में बने क्रो
हद से ज्यादा मजबूत होते हैं तथा इन्हीं की वजह से धातु अपने
शत्रु-जीर्णता से नहीं डरती है।

जंगरोधी स्टील उत्तम संक्षारण प्रतिरोधी तथा उपचयन प्रति
इनमें लगभग 18% क्रोमियम तथा 10% निकिल मिला होता है

ए हानिकारक रहता है क्योंकि क्रोमियम में कार्बाइड बनाने की
कारण इस तत्त्व की अधिक मात्राएं कार्बाइडों में बदल जाती हैं
नों पर जम जाती हैं। इसके फलस्वरूप इन दोनों में क्रोमियम
जाती है और वे अम्लों तथा ऑक्सीजन का प्रतिरोध करने योग्य
लिए जंगरोधी स्टील में कार्बन की मात्रा निम्नतम होनी चाहिए
अक नहीं)। जापानी धातुकर्मियों ने क्रोमियम और ऐलुमिनियम
विशेष स्टील का नमूना प्राप्त किया है। निर्माण-कार्य में प्रयुक्त
की तुलना में इस स्टील में ध्वनितरंगों का प्रसार सैकड़ों गुना कम
टील से बनी खिड़कियां और दरवाजों के फ्रेम कोई शोर नहीं देते
तनी भी जोर से क्यों न बंद करें। सीमेंट के फर्श पर इस स्टील
गिरने से कोई आवाज नहीं होती।

मानों पर स्टील के ऊपर 'पपड़ी' जम सकती है। कुछ मशीनी
तक गरम हो जाते हैं। इन पुर्जों के स्टील की उपर्युक्त 'बीमारी'
लिए उसमें 25 से 30% तक क्रोमियम मिला देते हैं। अब यह
तक का ताप सह सकता है।



और क्रोमियम के ऐलॉय, जिन्हें निक्रोम कहते हैं, उत्तम तापक तत्त्व
तुओं की वैद्युत प्रतिरोधता का गुणांक उच्च है इसलिए धातु से
ने पर इसका तापमान जल्दी बढ़ जाता है। इस ऐलॉयों में अगर
लुमिनियम मिला दिए जाएं तो 650-900°C ताप परिसर में धातु

काफी बोझ सह सकती है। ऐसे ऐलॉयों से, उदाहरण के लिए, गैस टर्बाइनों के ब्लेड बनाए जाते हैं। क्रोमियम दूसरे ऐलॉयों में भी शामिल होता है जैसे कि क्रोमेल, क्रोमाइल, क्रोमानसील। कोबाल्ट, मॉलिब्डेनम तथा क्रोमियम का एक ऐलॉय (कोमाक्रोमियम) मनुष्य के शरीर के लिए बिल्कुल भी हानिकारक नही है इसलिए इसका प्रयोग सर्जरी में भी किया जाता है।

आज विश्व के क्रोमियम अयस्को का अधिकाश भाग फेरोऐलॉय कारखानो मे पहुंच रहा है जहां फेरोक्रोमियम तथा धात्विक क्रोमियम की विभिन्न किस्मो का उत्पादन किया जा रहा है। फेरोक्रोमियम का उत्पादन 1820 में शुरू हुआ। फेरिक ऑक्साइड तथा क्रोमियम ऑक्साइड के मिश्रण का एक क्रूसिबल मे चारकोल द्वारा अपचयन करके इसे प्राप्त किया गया। 1854 में क्रोमियम क्लोराइड के जलीय विलयनों के विद्युत अपघटन से शुद्ध धात्विक क्रोमियम प्राप्त किया गया। वात्या-भट्ठी में कार्बोनिक फेरोक्रोमियम के प्रगलन के प्रथम प्रयास भी इन्हीं दिनो किए गए। क्रोमियम स्टील के प्रथम पेटेण्ट का पंजीकरण 1865 में हुआ। फेरोक्रोमियम की मांग तेजी से बढ़ने लगी।

विद्युत ने फेरोक्रोमियम के उत्पादन के विकास मे अतिमहत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी—विद्युत-तापीय विधि से धातुओं तथा ऐलॉयों के उत्पादन मे बहुत सफलता मिली। 1893 में फ्रेंच वैज्ञानिक मोईसान को विद्युत भट्ठी में कार्बोनिक फेरोक्रोमियम (इसमें 60% क्रोमियम तथा 6% कार्बन था) का प्रगलन करने मे सफलता मिल गई।

अक्टूबर क्रांति से पहले रूस में फेरोऐलॉयों का उत्पादन बहुत ही धीमी गति से हो रहा था। देश के दक्षिण में कुछ कारखानों में फेरोसिलिकन फेरोमैंगनीज का बहुत थोड़ी मात्रा में प्रगलन किया जा रहा था। 1910 मे दक्षिणी यूराल क्षेत्र में सात्का नदी के किनारे एक छोटा-सा विद्युतधातुकर्मी-कारखाना लगाया गया जहां फेरोक्रोमियम का उत्पादन शुरू हो गया। कुछ समय बाद यहां फेरोसिलिकन का भी उत्पादन होने लगा। परंतु देश की जरूरत को देखते हुए इन ऐलॉयों का उत्पादन बहुत थोड़ा था। रूस को ये ऐलॉय दूसरे देशो से खरीदने पड़ रहे थे।

1917 के बाद युवा सोवियत राज्य उच्चकोटि के स्टील के उत्पादन जैसे महत्त्वपूर्ण औद्योगिक क्षेत्र में पूंजीपति देशों पर निर्भर नहीं रह सकता था। देश के औद्योगीकरण की योजना को वास्तविक रूप देने के लिए ऐसे स्टील की जरूरत थी जो निर्माण-कार्य के लिए अनुकूल हो, पुर्जे बनाने के योग्य हो, जंगरोधी हो तथा जिससे बाल-बेयरिंग, मोटरें तथा ट्रैक्टर बनाए जा सकें। स्टील की इन किस्मो का एक महत्त्वपूर्ण घटक क्रोमियम था।

1927-1928 में सोवियत संघ में फेरोऐलाय कारखानों की परियोजना तथा निर्माण पर कार्य शुरू हो गया। 1931 में चेल्याबिन्स्क फेरोऐलाय कारखाना चालू हो गया जो देश में इस तरह का पहला कारखाना था। उन दिनों देश की विज्ञान अकादमी के उम्मीदवार सदस्य ब. येमेल्यानोव, जिनकी गिनती सोवियत उच्च धात्विकी के संस्थापकों में की जाती है, विदेशी विशेषज्ञों के अनुभवों का अध्ययन करने जर्मनी गए थे।

अपने संस्मरणों में येमेल्यानोव एक दिलचस्प वार्तालाप का जिक्र करते हैं '1933 में मैंने एक जर्मन कारखाने के चीफ इंजीनियर से एक प्रश्न पूछा

—आप अपने कारखाने का माल किसे बेचते हैं?

चीफ इंजीनियर गिनाने लगा :

—लगभग 5% फेरोक्रोमियम हमारे आसपास की रासायनिक फैक्टरियां ले लेती है, 2% बेकेर फेक्टरी खरीद लेती है, 3% के लगभग...

मैंने उसे रोक दिया

—और सोवियत संघ कितना माल खरीदता है?

—कोई निश्चित मात्रा नहीं है, अक्सर 75 से 80% तक हमारा फेरोक्रोमियम आपके देश के कारखाने खरीद लेते हैं और मजे की बात यह है कि सारा फेरोक्रोमियम हम यूराल क्रोमियम अयस्कों से प्राप्त करते हैं।'

हां, वास्तव में उन दिनों सोवियत संघ क्रोमियम अयस्क का निर्यात कर रहा था। जर्मनी के अलावा यह स्वीडन, इटली और संयुक्त राज्य अमरीका भी भेजा जा रहा था। और ये ही देश सोवियत संघ को फेरोक्रोमियम बेच रहे थे। चेल्याबिन्स्क के बाद जापोरोज्ये व जेस्ताफोनी में 1933 में दो और फेरोऐलाय कारखाने लगाए गए। इन कारखानों के चालू होते ही सोवियत संघ ने दूसरे देशों से फेरोक्रोमियम तथा अन्य महत्त्वपूर्ण ऐलॉय न केवल खरीदने बंद कर दिए बल्कि उनका निर्यात भी शुरू कर दिया। देश की धात्विकी को अब जरूरत के अनुसार अच्छी किस्म के फेरोऐलाय मिलने लग पड़े थे।

1936 में कजाखस्तान में अक्त्यूबिन्स्क क्षेत्र में क्रोमाइट के विशाल निक्षेप मिले। क्रोमाइट फेरोक्रोमियम के उत्पादन में मुख्य कच्चे माल का कार्य करता है। द्वितीय विश्व युद्ध के दिनों इन निक्षेपों के पास अक्त्यूबिन्स्क फेरोऐलाय कारखाना लगाया गया जो आगे चलकर फेरोक्रोमियम तथा क्रोमियम के सभी ब्रांडों का एक बहुत बड़ा उत्पादनस्थल बन गया।

यूराल में क्रोमाइट के विशाल भंडार हैं। विश्व मे क्रोमियम अयस्कों के अन्वेषित भंडारों मे सोवियत संघ का मुख्य स्थान है। चंद्रमा पर सोवियत स्वचलित



(लुनोखोद) की यात्रा के समय वर्षा-सागर के क्षेत्र मे क्रोमियम की र
ा चला। परतु चंद्रमा का वर्षा-सागर हम लोगो से दूर है जबकि ला
ठ है। फ्रासीसी वैज्ञानिको ने सूडान के किनारों के निकट लाल स
एक गड्ढे का पता लगाया है जिसकी गहराई 2200 मीटर है।
का तापमान बहुत उच्च है। जल के नमूनो के अध्ययन ने वि
ा गरम द्रव अयस्क से भरा हुआ है। इसमे क्रोमियम, लौह, स्वर्ण,
अन्य धातुओ की मात्राए अति उच्च है। हो सकता है कि अगले
ज धातुओ के इस 'पेय' से व्यावहारिक लाभ उठाने की बात सोचन
अग्नि रोधक उद्योगो में क्रोमाइटों का उपयोग काफी विस्तृत है।
निर्माण के लिए मैग्नेसाइट तथा क्रोमियम का संयोजन अति उत्त
ईटों का प्रयोग खुली भट्टियों की लाइनिंग तथा अन्य धात्विक
ा जाता है। इनकी बनी चीजो मे उच्चतापसह क्षमता होती है तथा
न मे बहुत अधिक परिवर्तन का भी इन पर कोई असर नहीं
रसायनज्ञ क्रोमाइटों से पोटैशियम और सोडियम के बायोक्रो
यम ऐलम बना रहे है जिनके प्रयोग से चमड़े में बहुत चमक आ
उसकी मजबूती भी बढ जाती है। इस प्रकार के चमड़े को 'क्रोम

कहते हैं तथा इस चमड़े के बने बूटों को 'क्रोम बूट' कहते हैं।

क्रेमलिन की मीनारों पर लगे माणिक्य सितारे रोजाना रात को मास्को के आकाश को बहुत सुंदर बना देते हैं। बहुमूल्य रत्नों में हीरे के बाद दूसरा स्थान माणिक्य का है। प्राचीन भारतीय दंतकथा के अनुसार माणिक्य देवताओं के बहाए रुधिर के बने हैं। 'रावण का भारी खून नदी के वक्षस्थल पर सुंदर ताल वृक्षों के प्रतिबिंबों में गिरा हुआ गहराई में पहुंच गए हैं। तब से इस नदी को रावणगंगा कहते हैं और तब से खून की बूंदें माणिक्य बनकर चमकने लगी हैं। अंधेरा होते ही ये बूंदें एक जादुई आग की तरह जलने लगती हैं। यह आग इन रत्नों के अंदर जलती है और इसके प्रकाश की किरणें नदी के पानी को बेधती हैं।' आज इस अद्वितीय लाल पत्थर को प्राप्त करने की तकनीक काफी सरल हो गई है। अब देवताओं को अपना पवित्र खून बहाने की जरूरत नहीं है। इस काम के लिए अब एलुमिनियम ऑक्साइड में क्रोमियम ऑक्साइड की एक निश्चित मात्रा मिलाई जाती है (यही क्रोमियम ही तो माणिक्य क्रिस्टलों को लाल रंग प्रदान करता है)। कृत्रिम माणिक्य न केवल इसी कारण से ही कीमती होते हैं कि वे बहुत खूबसूरत होते हैं। इनमें एक और भी खूबी है और वह यह कि इनकी सहायता से उत्पन्न लेसर किरण अनेक चमत्कार दिखा सकती है। रूसी लेखक अलेक्सेई टालस्टाय के उपन्यास के मुख्य पात्र इंजीनियर गारिन द्वारा बनाई मशीन की तरह लेसर किरण किसी भी धातु को उतनी ही आसानी से काट सकती है जैसे कैंची कागज को। हीरे, कुरुंड तथा अन्य 'सख्त नग' अपनी सख्ती के लिए मशहूर हैं, परंतु लेसर किरण इनमें बारीक-से-बारीक सुराख कर सकती है।

क्रोमियम ऑक्साइड के प्रयोग से ट्रैक्टर निर्माताओं को इंजन की धावी-अवधि कम करने में काफी सफलता मिली है। यह वह ऑपरेशन है जिसके दौरान इंजन के सभी कार्यरत पुर्जे एक-दूसरे के 'आदी' किए जाते हैं। आम तौर पर इस काम में काफी समय लगता था जिससे ट्रैक्टर-कारखानों के इंजीनियर संतुष्ट नहीं थे। इस समस्या का हल तब मिल गया जब एक नया ईंधन योज्य ढूंढ लिया गया। इस योज्य में क्रोमियम ऑक्साइड उपस्थित था। इसके प्रभाव का रहस्य अति सरल है। ईंधन के जलने के दौरान क्रोमियम ऑक्साइड के अतिसूक्ष्म अपघर्षी कण बन जाते हैं जो सिलिंडर की आंतरिक दीवारों तथा अन्य सतहों पर जमा होकर सभी खुरदुरी जगहों को चिकना कर देते हैं। इसके बाद ये कण पुर्जों की पॉलिश करके उन्हें एक-दूसरे में फिट होने के लायक बना देते हैं। इस योज्य को जब एक नए स्नेहक में मिलाकर इंजन में डाला गया तो इंजन की धावी-अवधि पहले से 30 गुना कम हो गई।

पिछले कुछ समय से क्रोमियम को एक और नया 'काम' मिल गया है अब ऐसी चुंबकीय टेपे बनाई जा रही हैं जिनमें फेरिक ऑक्साइड की जगह क्रोमियम ऑक्साइड का इस्तेमाल किया जा रहा है। इस परिवर्तन से काफी लाभ हुआ है—ध्वनि के अभिलेखन का घनत्व और उसकी कोटि उन्नत हो गई है तथा टेपो की विश्वसनीयता बढ़ गई है। नई टेपों का उपयोग कम्प्यूटरों के चुंबकीय स्मरण-यंत्रो में विस्तृत रूप से किया जाता है।

क्रोमियम हर क्षेत्र में बहुत काम का सिद्ध हो रहा है। यह फोटोग्राफी के सामान मे, दवाइयो में, रासायनिक प्रतिक्रियाओ के उत्प्रेरकों मे, धात्विक लेपन मे इस्तेमाल किया जा रहा है। पाठकों की सुविधा तथा जानकारी के लिए क्रोमियम लेपन का हम यहा सविस्तार वर्णन कर रहे हैं।

बहुत पहले वैज्ञानिकों को यह पता चल गया था कि क्रोमियम बहुत ज्यादा सख्त होने के साथ-साथ वायु मे बेहतरीन संक्षारण प्रतिरोधक्षमता रखता है तथा अम्लों का इस पर कोई असर नही पडता है (सख्ती मे दूसरी कोई भी धातु क्रोमियम का मुकाबला नही कर सकती)। इस जानकारी से लाभ उठाने के लिए वैज्ञानिको ने अन्य धातुओं की बनी चीजो की ऊपरी सतह पर विद्युत-अपघटन द्वारा क्रोमियम का पतला लेप चढाकर देखा जिससे वे संक्षारण, खरोंचो तथा अन्य 'चोटो' से सुरक्षित रह सके, परंतु क्रोमियम लेप सरंध्री निकला तथा सरलता से छिल गया। इसने वैज्ञानिकों की आशाओं पर पानी फेर दिया। 75 साल तक लगातार वैज्ञानिक क्रोमियम लेपन की समस्या पर काम करते रहे। केवल बीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक में उन्हे इस कार्य में सफलता मिली। यह पता चला कि विद्युत-अपघट्य में जिस क्रोमियम का इस्तेमाल किया जा रहा था वह त्रिसंयोजक था जिसकी वजह से लेपन बेकार सिद्ध हो रहा था। जबकि इस कार्य के लिए केवल छः संयोजक क्रोमियम उपयुक्त था। तब से विद्युत-अपघट्य में क्रोमिक अम्ल का प्रयोग शुरू हो गया क्योंकि इसमे क्रोमियम की संयोजकता 6 के बराबर थी। संरक्षी परत की मोटाई अक्सर 0.1 मिलीमीटर होती है, उदाहरण के लिए कारों, मोटरसाइकिलो तथा साइकिलों के बाहरी पुर्जो पर। परंतु कई बार क्रोमियम का लेप केवल सजावट के लिए भी चढाया जाता है, विशेष रूप से उन चीजों पर जिन्हे संक्षारण का कोई विशेष खतरा नहीं होता है जैसे घडियों व दरवाजो के हैंडल पर आदि। इन चीजों पर क्रोमियम की बहुत ही पतली परत चढाई जाती है (0.0002-0.0005 मिलीमीटर)।

सोवियत संघ के एक प्रजातंत्र लिथुआनिया के रसायनज्ञों ने विशेष महत्त्व वाले पुर्जो की सुरक्षा के लिए एक बहुस्तरीय 'बकतर' के निर्माण की एक विधि

ढूढ निकाली है. इस लेपन की बहुत पतली सतह क्रोमियम की बनी होती है (सूक्ष्मदर्शी मे देखने पर वास्तव में यह 'बकतर' की याद दिलाती है)। पुर्जे के इस्तेमाल के दौरान ऑक्सीजन के आक्रमण का मुकाबला सबसे पहले यही सतह करती है, परन्तु जब तक क्रोमियम का उपचयन होता है तब तक कई साल बीत जाते है और इस दौरान पुर्जा अपना फर्ज निभाता रहता है।

पिछले समय तक क्रोमियम का लेप केवल धातुओ की बनी चीजों पर चढाया जाता था, परन्तु हाल ही मे सोवियत वैज्ञानिकों ने प्लास्टिक की चीजो पर भी क्रोमियम चढाना सीख लिया है। विख्यात बहुलक पॉलिस्टाइराल पर क्रोमियम चढाकर जब उसका परीक्षण करके देखा गया तो उसमे पहले से ज्यादा मजबूती पाई गई। अब इस बहुलक का निर्माण-सामग्रियो के ज्ञात शत्रुओ, जैसे—घिसाई, श्रांति तथा प्रतिघात आदि से कम डर लगने लगा है। स्वाभाविक है कि इसके बने पुर्जों की आयु पहले से ज्यादा हो गई है।

क्रोमियम 'बकतर' हीरों के लिए भी उपयोगी सिद्ध हुआ है हालाकि हीरे खुद की सख्ती का मानक समझे जाते है। बात यह है कि सभी हीरे ओजारो मे प्रयोग लायक नहीं होते : सामान्यतः प्राकृतिक हीरो में बहुत सारी छोटी-छोटी दरारें होती है जिनकी वजह से पत्थर काटने या बरमो लायक नहीं रहते। जैसे ही ऐसे हीरे वाला औजार धातु या कठोर वस्तु के सपर्क मे आता है हीरा टुकड़े-टुकडे हो जाता है। इसके अलावा दूसरी बात यह है कि प्राकृतिक हीरों के क्रिस्टल अक्सर औजार के होल्डर से बाहर निकल जाते है। इस कमी को दूर करने के लिए वैज्ञानिकों ने हीरो पर क्रोमियम की पतली परत चढ़ाने की सलाह दी क्योकि क्रोमियम हीरो तथा कापर होल्डर दोनों पर अच्छी तरह से चढ़ जाता है।

धातु से लेपित हीरे का जब परीक्षण किया गया तो यह देखा गया कि हीरा औजार मे तो अच्छी तरह से फिट हो ही गया है पर इसके साथ-साथ उसके क्रिस्टल की आयु भी बहुत बढ़ गई है। जब इस क्रिस्टल का सूक्ष्मदर्शी से अध्ययन किया गया तो यह देखा गया कि उसके एक फलक में काफी गहरी दरार बनी हुई है। इस दरार को हीरे पर चढी परत ने ढक रखा था। बात यह थी कि क्रोमियम के परमाणुओं ने हीरे के कार्बन के साथ मिलकर उसकी सतह पर कठोर कार्बाइड बना दिए थे। विशेष बात यह थी कि क्रोमियम उस दरार मे भी घुस गया था जिसकी दीवारें कार्बाइड बकतर से ढकी थीं। इस बीच होल्डर के सपर्क मे आई शुद्ध क्रोमियम की परत ने कापर के साथ मिलकर एक ऐलॉय बना दिया जिसकी वजह से हीरा औजार के अंदर अच्छी तरह से फिट हो गया। इस प्रकार क्रोमियम की सहायता से एक तीर से दो शिकार करने मे सफलता मिल गई : औजार

स्थायी हो गया तथा हीरा...हीरे से भी ज्यादा मजबूत हो गया।

क्रोमियम की कहानी समाप्त करने से पहले हम एक बार फिर या. येमेल्यानोव को याद करेंगे। 1967 में उन्होंने निम्न शब्द कहे 'दो साल पहले मैंने एक खबर सुनी परंतु अफसोस है कि हमारे देश में इस पर किसी ने ध्यान ही नहीं दिया। सोवियत संघ ने इंग्लैंड को फेरोक्रोमियम बेचा, उस देश को जिसे हम हमेशा तकनीकी प्रगति का प्रतीक मानते आ रहे हैं। आज इंग्लैंड हमारे से फेरोक्रोमियम खरीद रहा है। अंग्रेज लोग जानते है कि जो कुछ भी वे कर रहे है, ठीक ही कर रहे है।'

लोहे का पक्का दोस्त

भूमिगत महल के स्तम्भ—जादुई काला पाउडर—कांच धोने वाला साबुन—मैंगनीज पहले किसने खोजा?—गाहन ने या केम ने?—शील खोज का काम जारी रखते हैं—'नारकीय' आग—आकाशीय पिंडों की कमी—सेफ तोड़ने का प्रयास करो—क्या जनसभा बुलाने का प्रयास सफल होगा?—प्लेटिनम तथा पैलेडियम की जगह—बचपन से परिचित है—क्या कारण है कि कुछ चींटियों का रंग मेहंदी जैसा होता है?—गुलाबी रंग के मोती—शार्क के मुंह में—अनुमान किया जाता है—जीवाणुओं की मदद लेनी पड़ी—अंतर्जलीय केबल की पकड़ में आ गया—गलती से जहाज पर से फेंक दिया गया—एक विचित्र तमगा—अन्तरिक्ष में काम करने के लिए—अंतरिक्ष से प्राप्त 'पार्सल'—क्या रूस को मैंगनीज की जरूरत है?—खुली भट्ठी मैंगनीज अयस्कों की मुख्य उपभोक्ता है

अगर आपने मास्को की भूमिगत रेल में कभी सफर किया है तो इसके एक स्टेशन 'मायाकोव्स्काया' की सुंदरता देखकर आप जरूर आश्चर्यचकित हुए होंगे। इस भूमिगत महल के स्तम्भों के किनारे गुलाबी रंग के पत्थरों से सजे हुए हैं। इनमें रोडोनाइट लगाया गया है जिसके अंदर मैंगनीज उपस्थित होता है। बढ़िया गुलाबी रंग (यूनानी भाषा में 'रोडान' शब्द का अर्थ 'गुलाबी' होता है) तथा अन्य गुणों के कारण यह पत्थर सजावट के काम आता है। इसकी बनी चीजें हर्मिटेज, पीटर व पाल कैथीड्रल तथा देश के अन्य संग्रहालयों में प्रदर्शन हेतु रखी गई हैं। रोडोनाइट के विशाल निक्षेप यूराल में पाए जाते हैं। एक बार तो वहां पर 47 टन वजन का एक रोडोनाइट ढेला मिला। हमारे ग्रह पर इस खनिज के इतने अधिक भंडार यूराल के अलावा और कहीं नहीं हैं। यूराल में पाया रोडोनाइट सबसे सुंदर माना

जाता है।

परतु मैंगनीज का मुख्य स्रोत रोडोनाइट नहीं बल्कि पाइरोलुसाइट या मैगनीज ऑक्साइड है। यह काले रंग का एक खनिज है जिससे मानव-जाति प्राचीन काल से परिचित है।

प्रथम शताब्दी में प्राचीन रोम के विख्यात इतिहासकार और प्रकृतिवादी प्लीनी ज्येष्ठ ने यह कहा था कि काले पाउडर (पीसा हुआ पाइरोलुसाइट) में शीशे को चमकाने की अद्भुत क्षमता विद्यमान है। प्लीनी की मृत्यु वेसूवियस ज्वालामुखी के फट जाने से हुई थी। उनके बाद 1540 मे इटली के वैज्ञानिक तथा इजीनियर वेनोसिओ बिरिंगुसिओ ने खनन तथा धात्विकी के विश्वकोष 'पाइरोटैक्नीया' मे निम्न शब्दो मे इस पाउडर का वर्णन किया '...पाइरोलुसाइट गहरे भूरे रंग का होता है... इसमे अगर काचाभ पदार्थ मिला दिए जाए तो यह अतिसुंदर बैगनी रग का हो जाता है। कांच के कारीगर कांच को सुदर बैंगनी रंग मे रगने के लिए इसका प्रयोग करते हैं तथा कुम्हार लोग मिट्टी के बर्तनों पर बैंगनी रंग के डिजाइन बनाने के लिए।' इसके अलावा पाइरोलुसाइट में एक और खूबी है · पिघले कांच के साथ ऐलॉय बनाने पर यह काच को शुद्ध कर देता है, हरे या पीले रंग की जगह सफेद रंग का बना देता है।

खनिज का नाम 'पाइरोलुसाइट' बाद में रखा गया। मध्ययुग में कांच का रग उतारने की क्षमता रखने के कारण इसे 'कांच धोने वाला साबुन' या 'मैंगनीज' (यूनानी भाषा में इसका अर्थ है—शुद्ध करना) कहते थे। इसके अलावा यह खनिज एक और नाम से भी जाना जाता था—'काला मैग्नेशिया' । पाइरोलुसाइट मैग्नेशिया शहर के आसपास के इलाके से निकाला जाता रहा है। इसी इलाके से सफेद मैग्नेशिया (मैग्नेशिया ऐल्बा या मैग्नेशिया ऑक्साइड) भी निकाला जाता रहा है।

रसायन का इतिहास यह कहता है कि मैंगनीज की खोज स्वीडिश रसायनज्ञ गाहन (सन् 1774) ने की थी। परंतु कुछ तथ्य ऐसे हैं जो यह बताते हैं कि धात्विक मैंगनीज के पहले दाने जिस व्यक्ति ने प्राप्त किए उसका नाम इगनाटिस कैम था। कैम ने अपनी थीसिस मे इस बात का वर्णन किया जो 1770 में वियेना मे प्रकाशित हुई। परंतु कैम ने अपना अनुसंधान कार्य अधूरा ही छोड़ दिया जिसकी वजह से उन दिनो अधिकाश रसायनज्ञ उनकी खोज से अपरिचित रहे। फिर भी एक रसायन निदर्शिका में कैम की खोज का वर्णन किया गया है : 'कैम ने पाइरोलुसाइट पाउडर के एक भाग तथा काले गालक के दो भाग के मिश्रण को गरम करके नीली-सफेद भंगुर क्रिस्टलाकार धातु प्राप्त की। इस क्रिस्टल के असंख्य विभिन्न आकार वाले फलके बडी सुंदरता के साथ चमक रहे थे और धातु के

टूटने से नील [illegible] पीले [illegible] रंग निकलते हैं।

मैगनीज प्राप्त करने [illegible] पर्याप्त [illegible] वैज्ञानिक [illegible] को लाल [illegible] मैगनीज [illegible] वह [illegible] या मैग्नीशिया [illegible] समझना चाहिए। यह सब जानते [illegible] पाइरोलूसाइट से मैगनीज नहीं प्राप्त कर पाए।

[illegible] रसायनज्ञ कार्ल शीले ने [illegible] के अध्ययन [illegible] में स्टाकहोम की [illegible] पाइरोलूसाइट तथा इसके गुणों के बारे में एक [illegible] क्लोरीन के आविष्कार की सूचना दी। [illegible] कि पाइरोलूसाइट में एक नया तत्व विद्यमान है, [illegible] भिन्न है। परन्तु इसको प्राप्त करने में शीले [illegible]।

[illegible] उसी साल 1774 में गाहन ने कर दिखाया। [illegible] 1774 को शीले ने गाहन को शुद्ध पाइरोलूसाइट का एक नमूना [illegible] 'आप इस शुद्ध पाइरोलूसाइट को अपनी चारकोल आग में [illegible] और [illegible] मुझे सूचित करने की कृपा करें। मैं बड़ी [illegible] इंतजार कर रहा हूं। और हां, आशा करता हूं कि आप प्राप्त [illegible] मुझे शीघ्र-से-शीघ्र भेज देंगे।' रसायनज्ञ गाहन का [illegible] प्रयोग-कार्यों में। गाहन ने [illegible] दीवारों पर चारकोल की धूल लगा दी। फिर [illegible] पाइरोलूसाइट तथा तेल का मिश्रण बनाकर ऊपर से चारकोल की [illegible] इस मिश्रण को [illegible] तेज आंच पर गरम किया [illegible] मैगनीज का दाना बन गया। इस आविष्कार [illegible] प्रसिद्ध कर दिया तथा धातुओं के परिवार में [illegible] एक नया सदस्य शामिल हो गया।

नए तत्त्व को धातु की मान्यता एकदम नहीं मिली। बात यह थी कि अठारहवीं सदी के रसायनज्ञ पुराने जमाने के कीमियागरों के विचारों के कब्जे में थे जिन्हें यह विश्वास था कि 'सात धातुएं सात ग्रहों के अनुकूल प्रकृति द्वारा बनी है।' ठीक है कि पुराने जमाने में लोगों को केवल सात धातुएं मालूम थीं जो ज्ञात ग्रहों (सूर्य, चंद्रमा और पृथ्वी को छोड़कर अन्य पांच ग्रहों) की संख्या 7 के बराबर थी। परंतु आविष्कृत धातुओं की संख्या तेजी से बढ़ती रही जबकि नए ग्रहों का आविष्कार धीमी गति से होता रहा (केवल 1781 में सूर्य-मंडल के नए ग्रह की खोज हुई)। नए आविष्कृत तत्त्वों को धातुओं की मान्यता इसलिए नहीं दी जाती थी क्योंकि इससे सूर्यमंडल के सुडौल सिद्धांत को हानि पहुंचने का डर था। उनको अर्द्धधातुएं कहा जाता था।

यह अवधारणा विज्ञान में लंबे अर्से तक चलती रही। कई वैज्ञानिक अगले सालों में भी उन पिंडों को अर्द्ध धातु कहते थे। जो घनत्व, रंग या आकार की दृष्टि से धातुएं लगते थे, बल्कि सोना, रजत, ताम्र, लौह और लेड जैसे लचीले नहीं थे। उदाहरण के लिए, पारा, ऐण्टीमनी, कासा (बिस्मथ), जिंक, कोबाल्ट— अर्द्धधातुएं समझे जाते थे। मैंगनीज इनमें अंतिम तत्त्व था जो धातुओं के ग्रुप में एकदम नहीं शामिल किया गया। जून के अंत में गाहन के नाम शील द्वारा लिखा गया पत्र यह बात बताता है जिसमें उन्होंने मैंगनीज भेजने के लिए गाहन का धन्यवाद किया। शील ने लिखा : 'मैं समझता हूं कि पाइरोलुसाइट से प्राप्त धातु का दाना वास्तव में एक अर्धधातु है जो अन्य सभी अर्धधातुओं से भिन्न है। यह लोहे के काफी नजदीक है।' परंतु रसायनज्ञों ने आखिरकार अर्धधातु अवधारणा से इनकार कर दिया और मैंगनीज को धातुओं की कतार में उसका स्थान दे दिया।

उन्नीसवीं शताब्दी के पहले चतुर्थांश मे रूस में मैंगनीज लोहे का एक ऐलाय फेरोमैंगनीज के रूप मे प्राप्त किया जाने लगा। 1825 में 'खनन पत्रिका' में मैंगनीज की सहायता से स्टील के प्रगलन की खबर छपी। तब से इस तत्त्व का भाग्य हमेशा के लिए धात्विकी के साथ जुड़ गया। आज धात्विकी मैंगनीज अयस्कों की मुख्य उपभोक्ता है।

महान् रूसी धातुविज्ञानी पा. आनोसोव ने 1841 मे प्रकाशित अपने क्लासिक शोधकार्य 'दमिश्की स्टील के कुछ गुण' में मैंगनीज की विभिन्न मात्रा वाले स्टीलों पर किए गए अपने प्रयोगों का वर्णन किया। उन्होंने स्टील मे मैंगनीज मिलाने के लिए क्रूसिबलों में प्राप्त फेरोमैंगनीज का प्रयोग किया। 1876 से नीजनी-तागिल्स्क कारखाने में वात्याभट्ठियो मे फेरोमैंगनीज का औद्योगिक प्रगलन शुरू हो गया।

के इतिहास की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना 1882 मे घटी जब एक ानी रावर्ट हेडफील्ड ने इस तत्त्व की उच्च मात्रा (13% के लगभग) ाप्त कर लिया।

ा हेडफील्ड ने अन्य तत्त्वों के साथ लोह के ऐलॉयों का अध्ययन । इनमें मेंगनीज ऐलॉय भी शामिल था। चार साल बाद इस ुवा धातुविज्ञानी ने अपनी लाग-बुक में निम्न शब्द लिखे 'मैने ऐसा स्टील बनाने के उद्देश्य से शुरू किए थे जो सख्त होने के र्तनीय भी हो। इन प्रयोगों से काफी मजेदार परिणाम मिले है जो रखते हैं तथा लौह-ऐलॉयों के बारे में धातुविज्ञानियो की वर्तमान ़लने की क्षमता रखते है।'



इग्लैंड मे हैडफील्ड को फेरोमैगनीज मिलाकर मैंगनीज स्टील बनाने टेंट दे दिया गया। आने वाले सालों में हैडफील्ड ने मैगनीज स्टील मस्याओ का अध्ययन जारी रखा। 1883 में उनके 3 लेख छपे निम्न थे - 'मैगनीज तथा धात्विकी मे इसका उपयोग', 'लौह तथा ऽ नए गुणों की खोज', 'मैगनीज स्टील।' उनके अनुसंधान कार्यो ग्या कि जल मे सख्त करने से मैंगनीज स्टील मे कुछ नए अद्वितीय है। इसके बाद हैडफील्ड को मैगनीज स्टील की तापीय अभिक्रिया ट मिल गए और 1901 मे उन्होने उस भट्ठी के डिजाइन का पेटेंट

ल ।लया जिसमें सख्त करने से पहले इस स्टील को गरम करते हैं।

हैडफील्ड के स्टील को शीघ्र ही विश्व के धातुविज्ञानियों तथा मशीन-निर्माताओं की मान्यता मिल गई। उच्च जीर्णप्रतिरोधकता के कारण इसका प्रयोग उन पुर्जों के निर्माण में किया जाने लगा जो उच्च दाब पर बहुत ज्यादा घिस जाते थे—रेलों की पटरियों के क्रासवाड, क्रशर के जबड़े, गोला मिल के गोले, इस्को ट्रेक आदि। सबसे ज्यादा आश्चर्य की बात यह थी कि बोझ पड़ते-पड़ते उन पुर्जों के स्टील की मजबूती लगातार बढ़ती जाती थी। जब इस अजीब बात का कारण ढूंढा गया तो पता चला कि ढलाई के बाद स्टील के दानों की सीमाओं पर कार्बाइड की अतिरिक्त मात्रा जमा हो जाती है जो उसकी मजबूती कम कर देती है। घिसने तथा बोझ पड़ने से ये कार्बाइड धातु में विलयित हो जाते हैं। इस्तेमाल होते समय बोझ पड़ने से स्टील की ऊपरी सतह से कार्बन निकलता रहता है जिससे उसकी मजबूती बढ़ती जाती है। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि हैडफील्ड के स्टील मे तालो व सेफों की फैक्ट्रियों ने बहुत रुचि दिखाई।

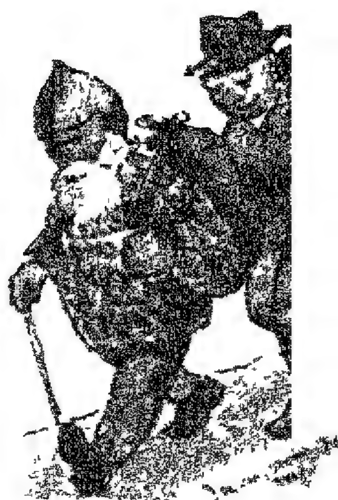
मैगनीज ढलवा लोहा भी अपने आप मजबूत होने की क्षमता रखता है। उदाहरण के लिए, जिन उत्खनित्रों मे इस प्रकार के ढलवा लोहे के बने बॉल-बेयरिंग लगाए गए वे कासे बाल-बेयरिंगो के मुकाबले दुगुना ज्यादा अवधि तक कार्य करते रहे और इस दौरान उन्हे एक भी बार मरम्मत की जरूरत नहीं पड़ी।

धात्विकी में स्टील के विऑक्सीकरण तथा विगंधकन के लिए प्राय: मेगनीज प्रयुक्त किया जाता है। स्प्रिगो के स्टील में, पेट्रोल तथा गैस की पाइप-लाइनो के स्टील मे, अचुंबकीय स्टील में यह एक ऐलॉय तत्त्व के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। मैंगनीज युक्त स्टील की किस्मो की गिनती कराने की शायद जरूरत नही है क्योकि गाहन द्वारा आविष्कृत तत्त्व स्टील तथा ढलवा लोहे की हर किस्म मे कम या अधिक मात्रा में उपस्थित जरूर होता है। इसी कारण मैगनीज को लोहे का पक्का दोस्त कहते हैं। आवर्त सारणी में भी तो दोनो तत्त्व एक-दूसरे के पड़ोसी हैं—25-वें तथा 26-वे स्थान पर। आगे चलकर हम बताएंगे कि लोहे के पीछे-पीछे मैंगनीज शार्क के दांतों में भी मिला।

1917 मे रूसी वैज्ञानिकों झेम्चूझनी तथा पीत्राशेविच ने यह सिद्ध किया कि मैंगनीज में थोड़ा-सा भी ताम्र मिलाने से उसकी तन्यता बढ़ जाती है। इस जानकारी से धातुविज्ञानियों ने अब मैंगनीज ऐलॉयों पर भी ध्यान देना शुरू कर दिया।

मैगनीज के बहुत सारे ऐलॉय—मैंगनिन आधुनिक तकनीक में प्रयुक्त किए जाते हैं। मैंगनीज के ताम्र व निकिल ऐलॉय उच्च विद्युतप्रतिरोधकता रखते है

जिस पर ताप का लगभग न के बराबर असर होता है। मेगनिन में दाब के अनुसार प्रतिरोध बदलने के गुण के सिद्धांत पर विद्युत मेनोमीटर का निर्माण किया गया है। साधारण मेनोमीटर से बहुत अधिक उच्च दाब नहीं मापा जा सकता, उदाहरण के लिए कई हजार ऐटमोस्फियर। इस अवस्था मे मैनोमीटर ट्यूब के अंदर भरा द्रव या गेस उसकी दीवारो को तोड़ देती हे चाहे वे कितनी भी मजबूत चीज से क्यो न बनी हो। विद्युत मैनोमीटर यह काम सफलतापूर्वक कर देता है : निश्चित दाब पर मैगनिन



का विद्युत प्रतिरोध मापकर एक विशेष सूत्र द्वारा हर तरह का दाब शुद्ध से परिकलित किया जा सकता है।

मैंगनिनो में एक और बहुमूल्य गुण विद्यमान होता हे—मदन (डैपिंग), ७ इनमे टालनों की ऊर्जा का अवशोषण करने की क्षमता होती हे। अगर कोई अ मेगनिन का घटा बनाए तो यह घटा किसी भी काम का नहीं निकलेगा। बजाने पर जोरदार आवाज की जगह बहुत मंद-सी ध्वनि निकलेगी।

परतु घटे के लिए अगर मदन एक बहुत खराब बात हे तो रेल या की पटरियो व पहियों तथा इसी तरह की आवाज करने वाले अन्य पुर्जो के यह बहुत काम की चीज है क्योकि इसकी वजह से शोर नहीं पैदा हो पाग फोर्जन तथा स्टैम्पिंग वर्कशापो में इन 'गूंगे' ऐलॉयो की सहायता से धातुअ शोर बहुत ज्यादा घटाया जा सकता है। शोर न करने की सबसे अधिक क्ष उन ऐलॉयों मे होती है जिनमे 70% मेगनीज तथा 30% ताम्र मिला होत इनमे से कुछ की मजबूती लोहे से कम नहीं होती है।

एक मजेदार बात यह है कि मेगनीज कांस्य-मैगनीज का ताम्र के साथ ऐलाय चुंबकित हो सकता है हालांकि दोनो धातुओं में से कोई भी चुबकीय नहीं रखती है।

पिछले कुछ सालो से 'स्मृति' रखने वाले ऐलाय काफी प्रसिद्ध हो (इनमें सबसे अधिक प्रसिद्ध ऐलॉय नाइटीनाल का वर्णन 'ताम्र राक्षस' अ म किया गया है)। इस प्रकार के ऐलॉयो की संख्या हर साल बढती जा रही

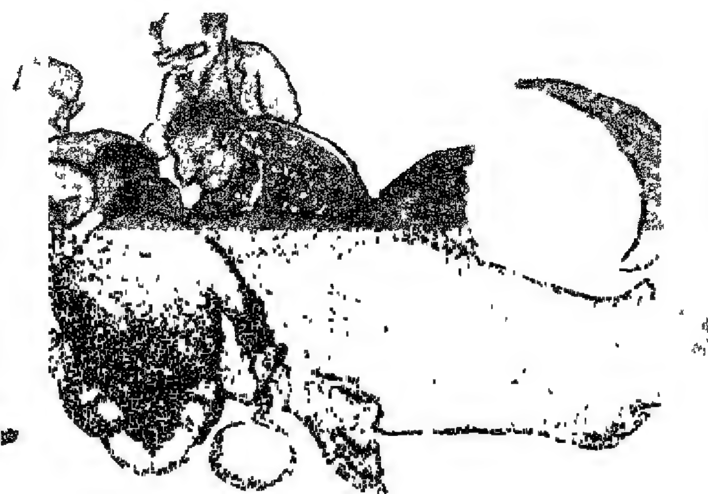
हाल ही में वैज्ञानिकों ने मैगनीज के आधार पर ताम्र मिलाकर एक ऐसा ऐलॉय बनाने में सफलता प्राप्त की है जिसमें अपना पहला रूप याद रखने की क्षमता नाइटोनाल से कम नहीं है। इसका उत्पादन तथा प्रयोग सस्ता है और इस बात मे कोई शक नहीं कि इसका विभिन्न क्षेत्रों में उपयोग किया जाएगा।

मैंगनीज ऐलॉयों ने अन्तरिक्ष यात्रा भी की है। 1976 में सोवियत कक्षीय-स्टेशन 'साल्यूत-5' की उड़ान के दौरान सोवियत अंतरिक्ष यात्रियों बोरीस वोलीनोव और विताली जोलोबोव ने जंगरोधी स्टील से बनी पाइपों के टुकड़े अंतरिक्ष मे मैंगनीज-निकिल ऐलॉय की सहायता से वेल्डिंग किए। पृथ्वी पर लौटने पर इस तरह जुड़े हुए पाइपों की आजमाइश की गई जिसमें पता चला कि वेल्डिंग सफल रहा और पाइपों के जोड़ने का स्थान 500 एटमॉस्फियर का दाब सह सका। इस प्रयोग का परिणाम बड़ा महत्त्व रखता है क्योंकि निकट भविष्य मे अन्तरिक्ष मे पुर्जों को जोड़ने का काम किया जाएगा।

बहुत दिनों तक अतिशुद्ध नाइट्रोजन के उत्पादन के लिए उत्प्रेरक के रूप मे बहुमूल्य धातुओं जैसे पैलाडियम तथा प्लैटिनम का इस्तेमाल चलता रहा। जार्जिया की विज्ञान अकादमी के अकार्बनिक रसायन व विद्युत रसायन संस्थान में कुछ समय पहले एक विधि ढूंढी गई है जिसके अनुसार इस कार्य में उत्प्रेरक की भूमिका मैगनीज निभाता है। रूस्तावी सॉल्वेन्ट्स नामक फैक्टरी मे वायु से आदर्श नाइट्रोजन प्राप्त करने के लिए एक अनोखा औद्योगिक प्लांट लगाया गया है। ऐसी नाइट्रोजन की आवश्यकता काप्रोन के उत्पादन में पड़ती है।

मैगनीज के एक यौगिक पोटैशियम परमैंगनेट को हम सब बचपन से जानते हैं। इसका प्रयोग जख्म धोने के लिए, गरारे करने के लिए या जलन जख्म का इलाज करने के लिए किया जाता है। रासायनिक प्रयोगशालाओं में परमैंगनेटोमिति अर्थात् गुणात्मक विश्लेषण में इसका प्रयोग विस्तृत है।

अन्य कई तत्त्वों की तरह मैगनीज भी जीव-जन्तुओं तथा वनस्पतियों के सामान्य विकास के लिए आवश्यक होता है। आम तौर पर उनके अंदर इसकी मात्रा 1% का कई हजारवां हिस्सा होती है परन्तु कुछ जीव तथा वनस्पति इस तत्त्व में हद से ज्यादा दिलचस्पी रखते हैं। उदाहरण के लिए, मेहदी रंग की चींटियों के अन्दर इसकी मात्रा 0.05% तक पहुंच जाती है। किटफफूंदी, समुद्री घास तथा जल नटो में इससे ज्यादा मात्रा में मैंगनीज उपस्थित होता है। जीवाणुओं की कुछ किस्मों मे मैंगनीज की मात्रा कई प्रतिशत तक पहुंच जाती है। मनुष्य के रुधिर में 0.002-0.003% मैंगनीज उपस्थित होता है। 24 घंटों मे मनुष्य को 3-8 मिलीग्राम मैंगनीज की जरूरत पड़ती है। जब प्रयोगाधीन चूहों के खाने में मैंगनीज



ा तब उनकी जनन-क्षमता बंद हो जाती थी। उनके खाने मे मैंगनीज ामिल किए जाने पर जनन-क्षमता पुन: स्थापित हो जाती है।
हम यहा वनस्पतियों तथा जीव-जतुओ की चर्चा कर रहे है तो हमें भी बात करनी चाहिए। हमारा मतलब उस शार्क से है जिसका लया गया है। वैज्ञानिकों ने महासागर के तल पर हजारो साल तक र्क के दातो का अध्ययन किया। पता चला कि उसके दात बिल्कुल थे। हां, उन पर लौह तथा मेगनीज के बहुत सारे ऐलॉय जरूर जमा ये ऐलॉय उस शार्क के मुह मे कैसे पहुच गए?
ी शताब्दी मे सन् 1876 में इग्लैड का तीन पालो वाला एक जहाज साल तक अनुसधान के उद्देश्य से विभिन्न सागरो तथा महासागरो ा। इस जहाज द्वारा इग्लैड लाई गई चीजो में गहरे रंग के अजीब ार के कुछ ढेले भी थे जिन्हें अलग-अलग जगहों पर समुद्र के तल या था। ये शकु मुख्यतः मैगनीज के बने थे इसलिए इनका नाम डल' रख दिया गया। कुछ अन्य लोगो ने इन्हे एक वैज्ञानिक नाम ह-मेगनीज कंकड। अगले अभियानो से यह पता चला कि समुद्र के त सारी जगहो पर इन 'मैंगनीज नीडलों' के भंडार बिखरे पड़े है। शताब्दी के मध्य तक किसी ने भी इनमें रुचि नहीं दिखाई। पिछले गनीज अयस्कों की कमी महसूस होने लगी तब वैज्ञानिकों ने समुद्र र्जलीय खजाने पर ध्यान दिया। इन ककडों के क्षेत्रों का बड़े ध्यान

से अध्ययन किया गया। प्राप्त परिणाम चौंका देने वाले थे। प्राथमिक आंकड़ों के अनुसार केवल प्रशांत महासागर में ही लगभग सैकड़ों अरब टन बढ़िया किस्म के लौह-मैंगनीज अयस्क बिखरे पड़े हैं। जी हां, अयस्क, क्योंकि इसमें मैंगनीज की मात्रा 50% तक पहुंच जाती है और लोहे की 27% तक। (कुछ कंकड़ों में मैंगनीज डाइऑक्साइड की मात्रा 98% तक पहुंच जाती है तथा उन्हें शुद्ध किए बिना ही इस्तेमाल में लाया जा सकता है, उदाहरण के लिए, बिजली की बैटरियों के उत्पादन में)।

अटलांटिक महासागर भी कोई कम अमीर नहीं है। अभी हाल ही में सोवियत वैज्ञानिकों का एक दल 'वित्याज' जहाज पर हिंद महासागर के अभियान से लौटा है। यहां भी समुद्र के तल से लौह-मैंगनीज कंकड़ प्राप्त हुए हैं। आंकड़े कहते हैं कि यह महासागर भी अपने 'साथियों' से गरीब नहीं है। समुद्र वैज्ञानिकों का अनुमान है कि जल में विलीन खनिजों के किसी पिंड के चारों ओर एकत्रित हो जाने से इस तरह के कंकड़ बन गए हैं। कुछ वैज्ञानिकों का विचार है कि इसमें कुछ समुद्री जीवाणुओं का हाथ है। लेनिनग्राद के जीवविज्ञानियों ने धातुजननिक जीवाणुओं की कुछ ऐसी किस्में ढूंढी हैं जो जल से मैंगनीज निकालकर इसे एकत्रित करने की क्षमता रखते हैं। प्रयोगशाला की परिस्थितियों में इन अन्तर्जलीय 'धातुकर्मियों' ने ईर्ष्या करने लायक कार्यक्षमता दिखाई : दो-तीन हफ्तों के अंदर इन्होंने माचिस की तीली के सिर जितने बड़े मैंगनीज कंकड़ बना डाले। अगर इस बात पर ध्यान दिया जाए कि ये 'कारीगर' खुद इतने छोटे होते हैं कि सूक्ष्मदर्शी में भी मुश्किल से दिखाई पड़ते हैं तो इनकी उत्पादन क्षमता की तारीफ जरूर करनी पड़ेगी। बहुत ही अप्रत्याशित परिणाम हैवाई (Hawaiian) द्वीपों के विश्वविद्यालय को प्राप्त हुए, जो तटवर्ती पानी में मत्स्य-पालन का काम कर रहे थे। वहां लोगों ने मछलियों के रहने के लिए सैकड़ों पुरानी मोटर-गाड़ियां डुबाकर कृत्रिम प्रवालभित्तियां बना दीं। मत्स्यविज्ञानियों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा, जब वे छः महीने बाद मछलियों की बस्ती का परीक्षण करने लगे। पता चला कि अभी गाड़ियों पर मैंगनीज के उत्तम ढेले मालाओं की तरह जमे हुए थे। तो क्या वैज्ञानिकों को समुद्री पानी से मैंगनीज उपजाना शुरू कर देना चाहिए?

सागर से प्राप्त इन ढेलों का आकार आलू के कंद से मिलता-जुलता है। इनका रंग भूरे और काले रंग के बीच होता है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि ढेले में किस चीज की मात्रा अधिक है—लौह की या मैंगनीज की। मैंगनीज की मात्रा बहुत अधिक होने पर ढेला पूर्णतया काले रंग का होता है।

इन ढेलों का आकार प्रायः 1 मिलीमीटर के कुछ हिस्सों से लेकर 10-15

सेंटीमीटर तक होता है। परंतु कभी-कभी कुछ बड़े आकार के ढेले भी मिलते है। संयुक्त राज्य अमरीका के स्क्रीप्स समुद्र विज्ञान संस्थान के संग्रहालय मे एक नमूना रखा हुआ है जिसका वजन 57 किलोग्राम है। यह हेवाई द्वीप के पास मे मिला है। अन्तर्जलीय टेलीग्राफ केबल की मरम्मत करते समय इंजीनियरों का उसके हुक में फंसा एक बड़ा ढेला मिला जिसका वजन 136 किलोग्राम था। परंतु इस अद्वितीय नमूने की किस्मत में संग्रहालय की शोभा बढ़ाना नहीं लिखा था। इसके अध्ययन तथा ड्राइंग बनाने के बाद गलती से इसे समुद्र मे फेंक दिया गया। परंतु फिर भी 'वित्याज' जहाज ने प्रशांत महासागर के अभियान के दौरान डेढ़ मीटर लंबा लौह-मैंगनीज ढेला उठाकर पिछले सारे रिकार्ड तोड़ दिए। इसका वजन एक टन के आसपास था।

बहुत सारे देश अब इन समुद्री खजानों में बहुत दिलचस्पी दिखा रहे हैं। ऐसी विशेष पनडुब्बियों, जलस्थली ट्रैक्टरों का निर्माण किया जा रहा है तथा नावों पर ऐसे उत्खनित्र लगाए जा रहे हैं जो समुद्र के तल से इस खजाने को उठाकर लाएंगे। निस्संदेह 'समुद्र-खनन' पृथ्वी-खनन से ज्यादा सुलभ होगा क्योंकि इसके विकास के लिए न तो सड़कें बनानी पड़ेंगी और न ही अन्य प्रकार की संचार साधनों की जरूरत पड़ेगी जो पृथ्वी पर परम आवश्यक हैं। समुद्री जहाज इंजीनियरों तथा मशीनरी को महासागर में किसी भी जगह तक आसानी से पहुंचा सकते है तथा ढूंढ़े गए खनिजों को इच्छित मार्ग से ढोकर ले जा सकते हैं। हॉलेंड के इंजीनियरों ने एक अंतर्जलीय स्वचालित उत्खनित्र बनाया है जो समुद्र तल से मैंगनीज तथा अन्य अयस्क इकट्ठा कर सकता है। यह स्वचालित 'खनिजक' 5 किलोमीटर की गहराई मे काम करने की क्षमता रखता है। इसके सभी पुर्जे बिजली से चलेंगे। एक टेलीविजन कैमरा इसमें 'ड्राइवर' का काम करेगा। इस कैमरे की सहायता से समुद्री अयस्क कैरियर पर खड़ा आपरेटर जल में आवश्यक खनिज ढूंढ सकेगा। उसके आदेश पर उत्खनित्र का सर्पिल रोटर अयस्क की निश्चित मात्रा उठाकर मशीन के अंदर फेंकता जाएगा।

सोवियत संघ में भी अंतर्जलीय खजानों को ढूंढ़ने की दिशा मे महत्त्वपूर्ण प्रयास किए जा रहे है। हर साल सैकड़ों अभियान-दल महासागरों तथा सागरों की यात्रा करते है। वह दिन दूर नहीं है जब समुद्रों का औद्योगिक उपयोग शुरू हो जाएगा। फिलहाल भूविज्ञानी तथा धातुविज्ञानी पृथ्वी के भंडारों का उपयोग कर रहे हैं।

भू-पर्पटी में उपस्थित खनिजों मे मैंगनीज का स्थान पीछे नहीं है (0.09%)।

भूविज्ञानियों का विचार है कि मैगनीज के सभी निक्षेप लगभग 'समकालीन' हैं इस तथ्य के आधार पर कुछ वैज्ञानिकों ने मैगनीज भंडार की अंतरिक्षीय उत्पत्ति की बात कही है उनकी परिकल्पना के अनुसार लगभग 2 अरब साल पहले पृथ्वी की सतह पर मैगनीज से भरपूर उल्कामय धूल गिरी जिसके परिणामस्वरूप पृथ्वी तथा सागरो व महासागरों के तल पर मैगनीज के निक्षेप जमा हो गए।

मैगनीज के अयस्क बहुत देशो में मिलते हैं परंतु इनमें से कोई भी देश सोवियत संघ का मुकाबला नही कर सकता। सोवियत जार्जिया मे विश्व के सबसे विशाल मैगनीज निक्षेप चिआतुरा मे है। विशेष बात यह है कि इस इलाके मे बहने वाली एक छोटी-सी नदी क्विरीला रिओनी नदी से मिलकर उसके जल द्वारा हर साल काला सागर मे एक लाख टन मैगनीज पहुचाती है।

चिआतुरा में मैगनीज का उत्पादन 1879 में ही शुरू हो गया था। इसके कुछ सालो बाद रूस मे एक अन्य जगह—निकोपोल के पास मैगनीज के विशाल निक्षेपों पर कार्य शुरू हो गया। परन्तु दुःख की बात तो यह है कि जार के रूस को मैंगनीज की 'जरूरत' ही नहीं थी। 1913 में प्राप्त सारा मैंगनीज अयस्क विदेश भेज दिया गया। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान यूराल, कजाखस्तान तथा साइबेरिया मे मैंगनीज निक्षेपों का बड़ी तेजी से उपयोग होने लगा। आज सोवियत सघ इस मूल्यवान अयस्क के उत्पादन की दृष्टि से विश्व में प्रथम स्थान पर है।

मैगनीज अयस्को के मुख्य उपभोक्ता फेरोऐलॉय कारखाने हैं। यहा विभिन्न तकनीकी प्रक्रियाओ के परिणामस्वरूप मैंगनीज के ऐलॉय (लोह के साथ, सिलिकन के साथ) प्राप्त होते है या शुद्ध धातु प्राप्त होती हे। इसके बाद मैगनीज स्टील बनाने वाले कारखानो मे ले जाया जाता है।

महान् कर्मयोगी

क्या लोहे की कमी का खतरा बना हुआ है?—प्यार बलिदान मांगता है—लोहे का चूरन खाकर देखिए—पेड़ों पर कीलें उगती हैं?—पोलीनीशिया के निवासियों का लोहे से बहुत ज्यादा लगाव—बादशाह सुलेमान की दावत—अफ्रीकी महाद्वीप में पाया हुआ एक विराट उल्का—अरिजोना रेगिस्तान में एक बहुत बड़ा गर्त बन गया—अफ्रीका महाद्वीप में पाया हुआ एक विराट उल्का—कांस्य युग खत्म हो गया—कपिमानव से भी पहले—जादुई बेंत—सूइयों की धड़कन का कारण—असफल तलाशें—देमीदोव यारत्सेव के पीछे सिपाही लगा देता है—अद्‌भुत जलयान—लोग ऐफिल की बात पर विश्वास नहीं करते—कोणार्क का सूर्य मंदिर—चमड़े जैसा स्टील—लोहे का कोई दोष नहीं है—क्या लोहे के रिटायर होने का समय आ गया है?—चंद्र—इस्पात—मानो कुछ हुआ ही न हो!—ब्रुसेल्स में 'एटोमियम' भवन का उद्‌घाटन

1910 मे स्टाकहोल्म में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय भूविज्ञानी कांग्रेस के कार्यक्रम का मुख्य विषय यह था कि लोहे की कमी कैसे पूरी होगी। जिस विशेष समिति को विश्व के लोह-भंडारों की गिनती करने का काम सौंपा गया था उसने कांग्रेस के सामने अपनी रिपोर्ट पेश की। इस रिपोर्ट में यह बताया गया कि 60 साल बाद अर्थात् 1970 में विश्व के लोह-भंडार पूर्णतया समाप्त हो जाएंगे।

भाग्यवश इस समिति के वैज्ञानिकों की भविष्यवाणी गलत निकली और आज लोहे के इस्तेमाल पर किसी भी तरह का प्रतिबंध नहीं है। अगर उनकी बात सही निकलती और लौह अयस्कों के भंडार बिल्कुल खत्म हो जाते, तब क्या होता? अगर पृथ्वी पर लोहे की एक भी ग्राम मात्रा न रहती, तब क्या होता?

सुप्रसिद्ध सोवियत खनिजवैज्ञानिक अकादमीशियन अ. फेर्समान ने इस सबध

म निम्न शब्द कहे सं का पर सर्वनाश दिखाई देता - न पटरियाँ, न डिब्बे, न इंजन और न ही मोटर-कारें रहती, कोई भी चीज दिखाई नही देती सड़कों के पत्थर ढहकर मिट्टी के ढेर में बदल जाते, पेड-पौधे पीले पड़ने लगते और इस प्राणाधार धातु के अभाव में मर जाते।



सारा संसार बडी तेजी से नष्ट हो जाता और मानव-जाति का अवश्य ही अंत हो जाता।

'वास्तविकता तो यह है कि मनुष्य इस दिन तक जीवित ही नहीं रहता क्योंकि जैसे ही उसके शरीर तथा रक्त से 3 ग्राम लोहा ही उसका अस्तित्व मिट जाता और ऊपर लिखी घटनाएं देख ही नही मिलता। सारा लोहा खोने अर्थात् अपने वजन का 0 0 खोने का मतलब उसकी मृत्यु है।'

इन शब्दों द्वारा महान् वैज्ञानिक ने यह समझाने का प्रया जीवन मे लोहा कितना अधिक महत्त्व रखता है। लोहा न किसी भी चीज का अस्तित्व न रहता। इसका कारण यह है सभी प्राणियो के रक्त में यह रासायनिक तत्त्व उपस्थित है हीमोग्लोबिन मे विद्यमान है जो सजीव प्राणियो के ऊतकों को है। लोहे की वजह से ही तो रक्त का रंग लाल होता है।

पिछली शताब्दी मे वैज्ञानिकों ने मनुष्य के रक्त मे लोहे की थी। कहते है कि रसायनशास्त्र के एक विद्यार्थी को जब चला, उसने अपनी प्रेमिका को अपने रक्त के लोहे से एक करने का निश्चय किया। वह युवक अपने शरीर से समय-स निकालकर उससे एक यौगिक प्राप्त करता था और फिर रास इस यौगिक से लोहा अलग करता था। परतु इस दौरान अरक्त बेचारे की मृत्यु हो गई और वह अंगूठी के लिए लोहा इकट्ठा न सारा लोहा आता भी कहां से? मनुष्य के रक्त के अंदर सिर्फ

लोहा होता है

शरीर में लोहे की कमी होने से मनुष्य जल्दी थक जाता है, उसके सिर में दर्द होने लगती है तथा उसका स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाता है। पुराने जमाने मे भी 'लोहे की दवाइयों' के बहुत सारे नुस्खे ज्ञात थे। 1783 में 'आर्थिक जर्नल' ने निम्न बात छापी - 'कई हालतों में लोहा खुद भी एक अच्छी दवा का काम करता है। लोहे का बारीक चूरन सादा या चीनी मिलाकर खाने से बहुत फायदा होता है।' इसी लेख ने कुछ और दवाइयों की भी प्रशंसा की और उनके प्रयोग की सलाह दी : 'लौहबर्फ', 'लौह जल', 'लौहमदिरा' आदि ('अंगूर की खट्टी मदिरा प्राप्त होती है जो एक बेहतरीन दवाई होती है।')

यह बताने की जरूरत नही है कि बीसवी शताब्दी में रोगी लोहे का चूरन नही खाते हैं, परंतु लोहे के बहुत सारे यौगिको का प्रयोग आधुनिक चिकित्सा मे भी प्रचलित है। कई खनिज जलो मे लौह काफी मात्रा मे उपस्थित है। रूस मे प्रथम लौह खनिज जल की खोज की कहानी इस प्रकार से है—1714 मे कोन्चेजेर्स्क ताम्र प्रगलन-कारखाने (कारेली में) का एक कर्मचारी इवाई रेबोयेव हृदय में तीव्र दर्द से पीड़ित था। वह चल भी बड़ी मुश्किल से पाता था। एक दिन उसने लादोज्स्कोये झील से कुछ दूर एक झरना देखा जिसका जल एक विशेष स्वाद वाला था। रेबोयेव ने उस जल को पीना शुरू कर दिया। तीन दिन तक लगातार वह इस जल को पीता रहा और पूर्णतया स्वस्थ हो गया। जार पीटर प्रथम को इस बात की सूचना दे दी गई और शीघ्र ही उसके आदेश पर 'ओलोनेत्स के मंगल जल की डिग्री' प्रकाशित हो गई। यहा 'मंगल' शब्द से अभिप्राय युद्ध तथा लोहे के देवता 'मंगल' से था। जार खुद अपने परिवार के सदस्यों के साथ वहा आया और सबने इस आरोग्यकर जल को पिया।

मेंडेलीफ की आवर्त सारणी में ऐसा कोई दूसरा तत्त्व ढूंढना मुश्किल है जिसके साथ सभ्यता का इतिहास इतना ज्यादा संबंधित रहा हो। प्राचीन काल में कुछ जातियो के लोग लोहे को सोने से भी ज्यादा कीमती मानते थे। केवल बहुत अमीर तथा कुलीन घराने के लोग लोहे के आभूषण पहन सकते थे। ये आभूषण अक्सर सोने में जड़े होते थे। प्राचीन रोम में तो शादी की अंगूठी भी लोहे की बनी होती थी। होमर अपने 'इलियाड' में बताते हैं कि ट्राय-युद्ध के नायक अहिल्ला ने डिस्कोबोल (discobolus) के खेल मे जीतने वाले को लोहे का गेंद पुरस्कार मे दिया था। मिस्र के मकबरों में अन्य कीमती वस्तुओ के साथ-साथ एक माला भी मिली थी, जिसमें लोहे और सोने के मोती लगे थे।

प्राप्त दस्तावेजों से ज्ञात होता है कि एक मिस्री फिराउन ने हित्ती राजा

से लोहा भेजने का अनुरोध किया था बदले म वे जितना चाहे साना दने के लिग तैयार थ (इसा पूव दूसरी सहसाब्दी के हित्ती लोहा प्राप्त करने के लिए मशहूर थे)। फिराउन के कथनानुसार उनके पास इतना सोना था, जितना मरुभूमि मे रेत थी। लेकिन लोहे की उनके यहां निश्चय ही कमी थी। प्राचीन एसीरिया की राजधानी नीनेवी मे आठवी शती ई.पू. के शक्तिशाली राजा सारगोन द्वितीय के महल की खुदाई में पुरावेत्ताओं को लोहे का एक सच्चा खजाना मिला : एक घर में करीब 200 टन लोहे की वस्तुए (शिरस्त्राण, आरी, लोहारी के औजार आदि) मिली। वहा इस धातु के बड़े-बड़े गोले भी थे; शायद राजा ने उन्हें बुरे दिनों के लिए छिपा रखा था।



धात्विकी के विकास के साथ-साथ यह धातु सस्ती होती गई तथा प्रयोग आम बात हो गई। परंतु फिर भी कुछ समय पहले तक बहुत-सी जातियां लोहे से अपरिचित थीं।

अठारहवीं शताब्दी के सुप्रसिद्ध अंग्रेज नाविक जेम्स कूक ने प्रशांत म मे स्थित द्वीपों के निवासियों से मुलाकातों का दिलचस्प वर्णन किया। उन्हे मुट्ठी-भर लोहे की कीलें भेंट कीं। आदिवासियों को ऐसे विचित्र धातु के उपयोग का शायद पहले कभी मौका नहीं मिला था। द्वीपवासियो व समझाने के सभी प्रयत्न बेकार रहे।

अत में उनके पुजारी ने सहायता की जो शायद हर समस्या का भारी ि माना जाता था। उसने गौरव-भरी मुद्रा में अपने आदमियों को कुछ वाव और वे कीलों को जमीन मे रोपने लगे। अब मेहमानों के आश्चर्य करने व थी। उनकी नासमझी देखकर द्वीपवासी इशारों से समझाने लगे कि इन

पर कीलों के पौद फला करेंगे। यदि इन धातुई 'फलों' की
, तो यह जनजाति अपने सारे शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर

नीशियन द्वीपों की अनेक जनजातियां उस समय तक लोहे के
हो चुकी थीं। 'हमारे जहाजों पर आने वाले मेहमानों को और
ना अधिक आश्चर्य नहीं होता था जितना इस धातु से। लोहा
सबसे कीमती तथा मनपसंद चीज होती थी।' एक बार कप्तान
को जंग लगी कील के बदले एक सूअर मिल गया। दूसरी बार
चाकुओं के बदले द्वीपवासियों ने उन्हें इतनी सारी मछलियां
 सारे लोगों के भोजन के लिए वे कई दिनों तक पर्याप्त रहीं।



लोहार का पेशा हमेशा इज्जतदार पेशों में गिना जाता रहा है।
ाल प्राचीन दंतकथा इस बात की पुष्टि करती है।
नम का मंदिर बन गया तो बादशाह सुलेमान ने एक दावत का
जिसमें उन सभी कारीगरों को बुलाया जिन्होंने मंदिर के निर्माण
था। जैसे ही मेहमान लोग खाना शुरू करने वाले थे बादशाह
्न पूछा :
ओ कि इस मंदिर के निर्माण में सबसे ज्यादा योग किसने दिया

एक राज खड़ा हो गया और बोला

इस बात में कोई शक नहीं कि यह मंदिर हमारे राज लोगों ने ईंट पर ईंट रखकर इसका निर्माण किया कि इसकी दीवारें और मेहराबें कितनी मजबूत हैं। शताब्दियों सुलेमान का नाम ऊंचा करता रहेगा।

—इस बात में कोई शक नहीं कि मंदिर की नींव पत्थ ने राज की बात काटी,—परंतु आदरणीय मेहमानगण, आप क्या यह मंदिर इतना ही सुंदर होता अगर हम बढ़ई लोग अप क्या आप लोगों को इसकी खाली दीवारें अच्छी लगतीं, जि तथा लेबनानी देवदार से सजाया है? हमारा बनाया लकड़ी का लग रहा है, इसे हमने सबसे बढ़िया किस्म की कारीगरी से लोगों को इस मंदिर का असली निर्माता समझा जाना चा

जमीन खोदने वाले मजदूर ने बढ़ई को टोका और

—आप लोग इसकी जड़ तक जाएं। मैं यह जानना चाहूंगा कि क्या ये शेखचिल्ली (उसने राज तथा बढ़ई की ओर इशारा किया) इस मंदिर को बना सकते अगर हम लोग इसकी नींव न खोदते? इनकी बनाई दीवारें तथा लकड़ी की सुंदर चीजें हवा के पहले झोंके से ऐसे ढह जातीं जैसे कि गत्ते का बना घर।



परंतु बादशाह को वैसे ही विद्वान् नहीं समझा जाता था। उसने राज को अपने पास बुलाया और पूछा :

—तुम्हारे औजार किसने बनाए हैं?

—लोहार ने, —राज ने आश्चर्य में भरकर उत्तर दिया।

—और तुम्हारे? —बादशाह ने बढ़ई से पूछा।

—लोहार ने, और किसने,—उसने बिना सोचे उत्तर

—और तुम्हारे फावड़े और कुदालियां?—सुलेमान ने

पूछा।

—आप तो जानते ही है उन्हे केवल लोहार ही बना सकता है।—उत्तर सुनाई दिया।

अब बादशाह खड़ा हो गया और फिर एक आदमी के पास जाकर उसे हाल के बीच मे ले आया। इस आदमी का चेहरा धुए से काला पड़ा हुआ था। यह लोहार था।

—मंदिर का असली निर्माता यह आदमी है, —सबसे बुद्धिमान बादशाह बोला। उसने लोहार को सिंहासन पर अपने पास बिठा दिया और फिर उसे बढिया शराब का जाम पेश किया।

हम इन घटनाओं की सत्यता सिद्ध नहीं कर सकते, यह एक दंतकथा है। परंतु इससे यह बात जरूर पता चलती है कि पुराने जमाने मे मनुष्य लोहे को कितना ज्यादा महत्त्व देता था।

ऐसा समझा जाता है कि बहुत पुराने जमाने मे मनुष्य के हाथ मे पहला जो लोहा आया वह उसे जमीन पर नहीं मिला था बल्कि अंतरिक्ष से आया था। हमारे ग्रह पर गिरने वाले उल्कापिंडो मे लोहा उपस्थित होता है। शायद यही कारण है कि कुछ प्राचीन भाषाओं में लोहे को 'दिव्य पत्थर' कहा जाता है। परन्तु अठारहवीं शताब्दी के अंत तक बहुत सारे महान् वैज्ञानिक इस बात को नही मानते थे कि ब्रह्माण्ड पृथ्वी को लोहा दे सकता है। 1751 मे जर्मन शहर बाग्राम के पास एक उल्कापिंड गिरा। इस घटना के 40 साल बाद वियेना के एक प्रोफेसर ने निम्न बात कही : 'आप अंदाजा लगा सकते है कि 1751 मे जर्मनी के सबसे विद्वान् लोग इस बात मे विश्वास नहीं करते थे कि लोहा आकाश से गिरता है। उनका प्रकृति विज्ञान का ज्ञान अल्प था...परंतु हमारे दिनों में इन किस्सों में विश्वास करने वालों को माफ नही किया जा सकता।'

सुप्रसिद्ध फ्रेंच रसायनज्ञ लेवूजिये का भी यही मत था। 1772 में वे अपने बहुत सारे वैज्ञानिक साथियों के इस विचार से सहमत हो गए कि 'आकाश से पत्थर गिरना असंभव बात है।' 1790 मे फ्रेंच विज्ञान अकादमी ने भविष्य मे आसमान से पत्थर गिरने की रिपोर्टो पर विचार न करने का निर्णय कर लिया। वैज्ञानिकों के लिए यह बात एक बकवास से ज्यादा महत्त्व न रखती थी। परन्तु उल्कापिंडों पर फ्रेंच अकादमीशियनों के इस सख्त फैसले का कोई असर नही पडा, वे समय-समय पर हमारे ग्रह पर आते रहे ओर वैज्ञानिकों का दिमाग खराब करते रहे। इस बात की पुष्टि करने वाले नए-नए तथ्य इकट्ठे होते गए और जेसा कि कहा जाता है कि वास्तविकता हठधर्मी होती है, 1803 में फ्रेंच विज्ञान अकादमी

को मजबूर होकर इन 'दिव्य पत्थरों' को मान्यता देनी पडी और
पर गिरने की आज्ञा मिल गई

पृथ्वी की सतह पर हर साल लाखों टन वजन के उल्कापिंड
अंदर लोहे की मात्रा 90% तक होती है। सन् 1920 में अफ्रीका
क्षेत्र मे सबसे बडा उल्कापिंड मिला। इस उल्कापिंड 'गाबा' का व
लगभग था। 1895 में प्रसिद्ध ध्रुव अन्वेषक राबर्ट पेरी को ग्रीन
एक उल्कापिंड मिला जिसका भार 34 टन था। उसको न्यूयार्क
बडी दिक्कतें आईं। यह उल्कापिंड अभी भी न्यूयार्क में सुरक्षित

इतिहास बताता है कि कई बार पृथ्वी पर गिरने वाले उल्
बहुत ज्यादा भारी होते थे। पिछली शताब्दी के अंत मे अरिजो
मे 175 मीटर गहरा और 1200 मीटर व्यास वाला एक गर्त
अतिविशाल लौह उल्कापिंड से बन गया था जो प्रागैतिहासिक काल में पृथ्वी पर आ गिरा था। अमरीकी लोगों ने उल्कापिंडो मे और भी ज्यादा रुचि दिखाई क्योंकि कुछ ऐसी अफवाह फैल गई थी कि उल्कापिंड की किरचो मे हीरे और प्लेटिनम मिले हैं। एक साझेदार कंपनी खोली गई जिसका काम उल्कापिंडों का औद्योगिक उपयोग कराना था। परंतु 'आकाशीय उपहार' से पैसा कमाना बहुत मुश्किल साबित हुआ। जैसे ही बरमा 420 मीटर गहराई पर स्थित उल्कापिंड के अंदर तक पहुंचा, वह



टूट गया। उल्कापिंड के व्यापारियो को जब खोदे गए नमूनों मे
मिला, उन्होंने अपना व्यापार बंद कर दिया। वैज्ञानिको का विचार
के उल्कापिंड का वजन कई हजार टन था। संभव है कि धातुवि
में एक बार फिर इस उल्कापिंड के प्रति दिलचस्पी पैदा हो ज

उल्कापिंडो का लोहा आसानी से कार्ययोग्य बनाया जा स
मनुष्य ने उससे साधारण औजार बनाने शुरू कर दिए। परंतु आ
यह थी कि उल्कापिंड मनुष्य की इच्छानुसार पृथ्वी पर नहीं गिरते

की आवश्यकता हर वक्त पड़ती थी। इसी वजह से मनुष्य ने अयस्कों से लोहा निकालने का प्रयास शुरू कर दिया और आखिरकार वह दिन आ ही गया जब मनुष्य आकाशीय लोहे के साथ-साथ खुद के ढूंढे लोहे—पृथ्वी के लोहे का भी इस्तेमाल करने योग्य हो गया। कांस्य-युग खत्म हो गया और लौह युग आ गया।

यह घटना करीब तीन हजार वर्ष पूर्व घटी थी। इतिहासज्ञ लोगों को भी ऐसे आश्चर्यजनक तथ्यों से वास्ता पड़ता है, जो (यदि सत्य हों) यह निर्देश करते हैं कि हमारी सभ्यता के पहले भी ऐसी विकसित सभ्यताएं थीं, जो लोहे से परिचित थीं। उदाहरणार्थ, इस तरह के वर्णन मिलते हैं कि सोलहवीं शती में दक्षिण अमरीका आए हुए स्पेनियों को पेरू स्थित चांदी की खान में लोहे की करीब 18 सेंटीमीटर लंबी एक कील मिली थी। इस पर शायद ही किसी ने ध्यान दिया होता, यदि एक बात नहीं नजर आती : कील का अधिकांश भाग पथरीले आवरण से ढका था। यह काम सिर्फ प्रकृति के वश का है और इसका मतलब है कि कील जमीन में करीब दसियों हजार वर्ष गड़ी पड़ी थी। एक समय यह रहस्यमय कील पेरू के उपराष्ट्रपति फ्रांसिस्को दे तोलेदो के कैबिनेट में रखी हुई थी, वे अपने मेहमानों को दिखाया करते थे।

अन्य खोजों के भी वर्णन मिलते हैं। यथा, आस्ट्रेलिया की कोयले-परतों में, जो तृतीय भूवैज्ञानिक काल में उत्पन्न हुई थीं, एक लोह-उल्का मिली थी, जिस पर किन्हीं औजारों से काम करने के चिह्न थे। लेकिन आज से करोड़ों वर्ष पहले किसने ऐसा किया होगा? आदमी के कपिमानव जैसे पूर्वज भी कुल पांच लाख वर्ष पूर्व हुए थे।

और यह कील और उल्का अब कहां है? विश्लेषण की आधुनिक विधियों से उनकी प्रकृति और उम्र पर प्रकाश पड़ सकता था और इससे उनका रहस्य खुल जाता। पर अफसोस कि इन दो वस्तुओं का अब कोई पता नहीं है। वे सचमुच में थीं भी, या नहीं, इसमें भी शक ही है।

लोहा भूमि पर सर्वाधिक मात्रा में पाया जाने वाला तत्त्व है। भू-पर्पटी में इसकी मात्रा 5% के लगभग है। परंतु इस मात्रा का केवल चालीसवां हिस्सा मनुष्य के काम लायक है जो निक्षेपों के रूप में है। लोहे के मुख्य खनिज निम्नलिखित हैं—मैग्नेटाइट, हेमाटाइट, भूरा लौह अयस्क तथा सिडेराइट। मैग्नेटाइट में लोहे की मात्रा 72% तक हो सकती है तथा जैसाकि इसका नाम कहता है इसमें चुंबकीय गुण विद्यमान होते हैं। हेमाटाइट या लाल लौह में 70% तक लोहा हो सकता है। इस खनिज का नाम यूनानी शब्द 'हेमा' से बना है जिसका अर्थ है रक्त। रूसी भाषा में लोहे को 'झेलेजो' कहते हैं।

पुराने जमाने में लौह अयस्कों को ढूंढने का एक बड़ा अजीब तरीका था इस काम के लिए विशेष जादुई बेंतों का इस्तेमाल किया जाता था। ये बेंतें अखरोट की टहनियों की बनी होती थीं तथा इनका एक सिरा द्विशाखित होता था। 'भूविज्ञानी' इस बेंत के द्विशाखित सिरे को मुट्ठी में पकड़कर लोहा ढूंढने निकल पडता था। उसे खोज में सफलता तभी मिलती थी जब वह एक 'तकनीकी हिदायत' का सख्ती से पालन करता था। हिदायत यह कहती थी कि भूविज्ञानी की उंगलिया हमेशा आसमान की तरफ रहनी चाहिए। लगता है कि उन दिनो के अयस्क-खोजियों की सभी असफलताओं का कारण इस हिदायत का उल्लघन समझा जाता था (दुर्भाग्यवश सफलताओं के मुकाबले असफलताओं की सख्या बहुत ज्यादा होती थी)। अगर सभी आवश्यक शर्तों का पूर्णतया पालन किया जाता था तो जैसे ही भूविज्ञानी लोहे के स्रोत के पास पहुंचता था, बेत तुरंत झुक जाती थी तथा उस जगह की ओर इशारा करती थी जहां अयस्क छिपा होता था।

उन दिनो ही बहुत सारे लोग यह समझ गए थे कि इस तरह के तरीके अपरिष्कृत थे। धात्विकी पर प्रथम निबंध के लेखक 16-वीं शताब्दी के प्रसिद्ध जर्मन वैज्ञानिक जार्ज एगरिकोला ने निम्न बात कही : 'असली खनिक, जिसे हम गभीर प्रकृति का व्यक्ति समझते हैं, जादुई बेंत का इस्तेमाल नहीं करेगा क्योंकि प्रकृति को थोड़ा-बहुत जानने वाला आदमी भी यह जानता है कि ऐसी बेंत उसके किसी काम की नहीं है। उसे यह पता है कि केवल अयस्कों के प्राकृतिक लक्षणों के बल पर वह उन्हें ढूंढने में सफल हो सकता है।' परन्तु फिर भी बहुत सालों तक बेंतों की सहायता से लौह-अयस्कों की खोज होती रही, उदाहरण के लिए, यूराल में।

वर्तमान समय में भूवैज्ञानिकों के पास अधिक विकसित उपकरण हैं, जिनकी सहायता से वे पृथ्वी का चप्पा-चप्पा टटोल चुके हैं। लगता है कि उस पर कोई अज्ञात स्थल नही हो सकता। फिर भी प्रकृति समय-समय पर लोगों को लोहे और अन्य खनिजों के नए-नए खान भेंट कर ही देती है।

उदाहरणार्थ, ब्राजील में काराजास नामक पर्वत-शृंखला है। यहां घनघोर जगल था और हाल तक किसी का कोई ध्यान इसकी तरफ नहीं जाता था। लेकिन एक बार वहा एक हवाई जहाज को घने बादलो से बचने के लिए बहुत नीचे उतरना पडा। अचानक चालक ने ध्यान दिया कि मोटर में कुछ गड़बडी हो गई है। उसने विमान को जगलो के बीच एक छोटे-से हरे मैदान में उतारने का निश्चय किया और नीचे उतरने पर उसने देखा कि उपकरणों की चुंबकीय सूइयां अचानक

थिरकने लगी है। चालक ने विमान सही-सलामत उतार लिया। जब भूवैज्ञानिकों को इस घटना का पता चला, तब उन्होंने सूइयों की थिरकन का रहस्य खोला कारागार के नीचे भूगर्भ में लोहे का विशाल भंडार जमा था।

सत्तरहवीं शताब्दी में मास्को को लोहे की बहुत सख्त जरूरत महसूस हो रही थी। जार अलेक्सेई मिखाइलोविच नए लौह अयस्कों के स्रोतों की खोज के उद्देश्य से एक के बाद दूसरा अभियान-दल भेजता रहा। इन दलों के खनिकों को यह पता करना था कि 'कहां पर किस तरह का अयस्क छिपा हुआ है' तथा यह निश्चित करना था कि 'अयस्क है कितना, किस अवस्था में है तथा क्या वह स्थाई है।' परंतु सभी अभियान-दल असफल रहे।

पीटर प्रथम ने जार बनते ही एक आदेश जारी किया : 'पिटवां तथा ढलवा लोहे की हर प्रकार से वृद्धि की जाए, और रूसी लोग इसकी कला सीख लें .ताकि मास्को के राज्य में यह उद्योग पूर्णतया विकसित हो जाए।' इस आदेश में यह भी कहा गया था कि जो लोग लौह अयस्कों की खोज गुप्त रखने का प्रयास करेंगे, उन्हें बड़ी सख्त सजा दी जाएगी। उन्हें कोड़ों की सजा से लेकर मौत तक की सजा दी जा सकती है।

शीघ्र ही यूराल में यह खबर आई कि विसोकाया पहाड़ पर 'चुंबकीय पत्थर' के विपुल भंडार मिले हैं '. .पहाड़ के बीच में शुद्ध चुंबक का एक टीला है जिसके चारों ओर घने जंगल तथा पहाड़ी चट्टानें हैं।' इस अयस्क का नमूना मास्को भेजा गया जहां विशेषज्ञों ने इसकी बहुत तारीफ की। इसका परिणाम यह हुआ कि जार ने धातु-कारखाने लगाने का आदेश दे दिया। यूराल का सबसे बड़ा कारखाना-नेव्यान्स्की-पीटर प्रथम ने तूला शहर के प्रसिद्ध कारीगर तथा लौह-कारखाने के मालिक निकीता अन्तूफ्येव (आगे चलकर उसने अपना कुलनाम देमीदोव रख लिया) को दे दिया तथा लोहे का इतना अधिक उत्पादन करने को कहा कि रूस विदेश से लोहा खरीदना ही बंद कर दे। इस कारखाने को तोपें, मोर्टरें, तलवारें, बंदूकें, बल्लम, बकतर, टोप, तार आदि बनाने का काम सौंपा गया।

निकीता देमीदोव तथा आगे चलकर उसके पुत्र अकीन्फी देमीदोव ने रूस की धात्विकी के विकास में बहुत महत्त्वपूर्ण काम किए। यूराल का लोहा अंतर्राष्ट्रीय बाजार में बहुत कीमती समझा जाने लगा। पिछली शताब्दी के मध्य में इंग्लैंड के समाचार-पत्र 'मोर्निंग पोस्ट' ने यह लिखा : 'देमीदोव का लोहा हमारे देश के औद्योगिक इतिहास में बहुत महत्त्व रखता है। अठारहवीं शताब्दी के आरंभ में पहली बार यह लोहा स्टील बनाने के लिए इंग्लैंड लाया गया जब हमारा स्टील

उद्योग अभी अच्छी तरह से शुरू भी नहीं हुआ था। शीफल्ड की चांदी को देमीदोव के लोहे के कारण ही इतनी ख्याति मिल रही है।

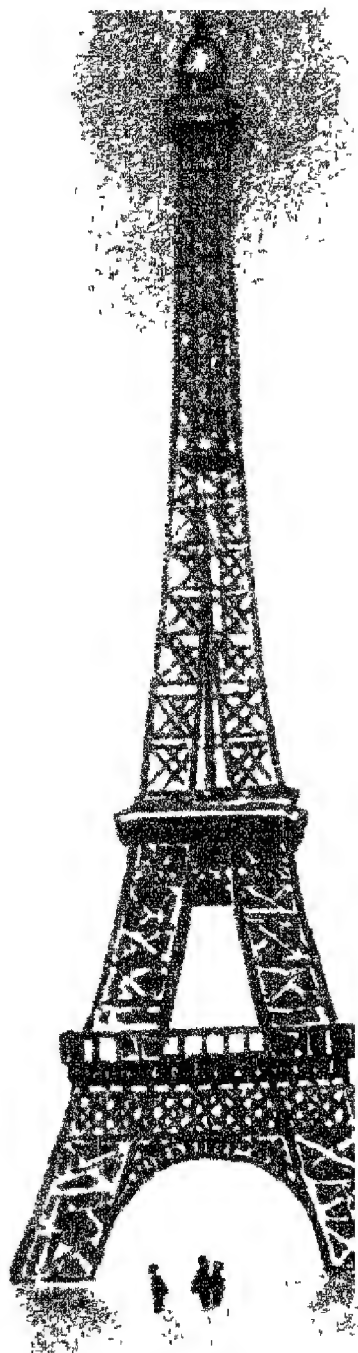
1735 में मान्सी जाति के एक व्यक्ति स्तेपान चुमपीन को यूराल में ब्लागोदात पहाड़ पर चुंबकीय लौह का एक बहुत बड़ा अयस्क मिला। उसने यह नमूना खनिज टेक्नीशियन यार्त्सेव को दिखाया जिसने उसमें काफी रुचि दिखाई। यार्त्सेव ने इस लौह के निक्षेप का अध्ययन किया और इस बात की सूचना देने कथरीनबर्ग चला गया। जब इस बात का पता देमीदोव को लगा, जो उस वक्त यूराल का बेताज बादशाह बन चुका था, उसने यार्त्सेव का पीछा करने के लिए सिपाहियों को भेज दिया क्योंकि वह यह नहीं चाहता था कि पहाड़ ब्लागोदात पर मिला लौह अयस्क का नया खजाना सरकार के हाथ लग जाए। वह खुद इसका मालिक बनना चाहता था। परंतु यार्त्सेव सिपाहियों की पकड़ से बच गया। खनन विभाग ने निक्षेप के अन्वेषक को इनाम दिया परन्तु शीघ्र ही रहस्यमय परिस्थितियों में स्तेपान चुमपीन का कतल हो गया। उसके कातिल का कोई पता नहीं चला। यूराल के खजानों की ओर रास्ते पर जो लोग खड़े होते थे, देमीदोव परिवार इस तरह उनसे बदला लेता था।

अठारहवी शताब्दी के अंत तथा उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभ में लोहा सभी अर्थों में तकनीक की दुनिया मे घुस गया। 1778 में लोहे का बना सबसे पहला पुल खुल गया, 1788 में लोहे की पाइप-लाइन चालू की गई। 1818 में लोहे का बना सर्वप्रथम जहाज पानी मे उतर गया। इस घटना के 50 साल बाद सन् 1868 मे लंदन के एक जर्नल 'समुद्री जीवन की खबरें' में निम्न बात छपी - 'ग्रीनकोक मे लोहे के बने दुनिया के सबसे पहले जहाज की मरम्मत की जा रही है जिसे 1818 मे बनाया गया था। 50 साल पहले जब यह जहाज पानी में छोड़ा गया तो आसपास के इलाकों के सारे लोग इस करिश्मे को देखने के लिए इकट्ठे हो गए कि क्या वास्तव में लोहे का बना जहाज पानी मे टिक सकता है?' चार साल बाद 1822 में इंग्लैंड में बना लोहे का पहला स्टीमर लंदन तथा पेरिस के बीच चलने लगा। रेलवे-लाइनें लोहे की मुख्य उपभोक्ता बन गई। 1825 मे इंग्लैंड मे प्रथम रेलवे-लाइन चालू हो गई।

1889 में पेरिस मे अद्वितीय फ्रेंच इंजीनियर गुस्ताव ऐफिल द्वारा लोहे की बनाई टावर पूरी हो गई। ऐफिल के बहुत सारे साथी यह समझते थे कि 300 मीटर ऊंची जालीदार टावर कच्ची निकलेगी और उसकी मजबूती अविश्वसनीय रहेगी। परंतु ऐफिल का कहना था कि उनका बनाया टावर कम-से-कम 25 साल तक जरूर खड़ा रहेगा। ऐफिल टावर, जो पेरिस की शान है, आज भी ठीक-ठाक

है। हा, यह बात जरूर सच है कि हमारी शताब्दी के शुरू में कुछ-कुछ विदेशी अखबारों ने यह खबर छाप दी थी कि इस टावर को बुरी तरह से जंग लग गया है और यह गिर सकता है। परन्तु जब फ्रेंच वैज्ञानिकों तथा इंजीनियरों ने टावर के ढांचों का अध्ययन किया तो वे समझ गए कि यह खबर अखबारवालों ने सनसनी मचाने के लिए छापी थी। पेंट हुआ लोहा बिल्कुल भी खराब नहीं हुआ है।

फिर भी जंग का खतरा लोहे की चीजों के ऊपर हर समय एक तलवार की तरह लटका रहता है। जंग या संक्षारण लोहे का सबसे खतरनाक दुश्मन होता है। यह कहना काफी होगा। आप पाठकगण जब यह पन्ना पढ़ते रहेंगे दुनिया में उस क्षण संक्षारण के कारण हजारों टन इस्पात और ढलवा लोहा नष्ट हो जाएंगे। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि पुराने जमाने में भी मनुष्य लोहे को जंग से सुरक्षित रखने के रास्ते ढूंढता रहा है। यूनानी इतिहासकार हिरोडोटस (ईसा से पांचवी शताब्दी पूर्व) की किताबों में हमें यह पता चलता है कि उन दिनों लोहे को जंग से बचाने के लिए उस पर टिन चढ़ाया जाता था। भारत में 1500 साल से एक सोसाइटी बनी



हड है जिसका काम संक्षारण का मुकाबला करना है। तेरहवीं शताब्दी में इस सोसाइटी ने बंगाल की खाड़ी के किनारे कोणार्क के सूर्य मंदिर के निर्माण में भाग लिया। शताब्दियों के दौरान सागर के पानी और हवा का शिकार होने के कारण इस मंदिर के खंड ही रह गए है, परंतु इसमें लगे लोहे के हिस्से सही सलामत रहे। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि इतने साल पहले भी भारतीय कारीगर यह जानते थे कि लोहे को संक्षारण से कैसे बचाया जा सकता है। इस बात का साक्षात् प्रमाण विख्यात लौह स्तंभ है जो भारत की राजधानी का मुख्य भ्रमण केंद्र है। नेहरू अपनी पुस्तक 'भारत की खोज' में ये शब्द लिखते हैं : प्रा भारत मे लोहे के काम में काफी तरक्की हो चुकी थी। दिल्ली का लौह स्तंभ ने आधुनिक वैज्ञानिकों को चक्कर में डाल रखा है। सम मे नहीं आ रहा है कि इस स्तंभ का लोहा संक्षारण तथा अन्य से अब तक कैसे बचा रहा?'



इस स्तभ का निर्माण सन् 415 मे सम्राट चंद्रगुप्त द्वि किया गया। आरंभ मे इसे देश के पूर्व में एक मंदिर के सामने राजा अनंगपाल इसे उठाकर दिल्ली ले आया। ऐसा विश्वास इस स्तभ के साथ पीठ लगाकर दोनो हाथ पीछे करके इसक पर अगर दोनों हाथों की उंगलियां आपस मे छूने लगे तो मनुष्य पूरी हो जाती है। पुराने जमाने से लोगों की भीड़-की-भीड़ आ करती जा रही है, परतु आज तक शायद कोई भी व्यक्ति इसम है। इस स्तभ का वजन लगभग 6.5 टन, ऊंचाई 7.3 मीटर, नि 42 सेंटीमीटर है। यह करीब-करीब शुद्ध लोहे (99.72%) क तभी तो यह इतने लबे अर्से तक 'जीवित' रह सका है। इस नहीं कि इससे कम शुद्ध लोहा 15 शताब्दियों के अंदर कब चुका होता।

प्राचीन धातुकर्मियों ने इस अद्वितीय स्तंभ को कैसे बना

का कोई असर ही नहीं हो रहा है? काल्पनिक कथाओं के कुछ लेखकों का यह कहना है कि इस स्तंभ का निर्माण किसी और ग्रह पर हुआ था और जब वहां के वासी नक्षत्रयान पर बैठकर हमारी पृथ्वी की सैर करने आए तब या तो यह स्तंभ उनके यान का एक अंग था या वे इसे पृथ्वीवासियों को उपहार में देने के लिए अपने साथ उठा लाए। कुछ अन्य लोगों का विचार है कि इसे किसी विशाल लौह उल्कापिंड से बनाया गया है। परन्तु लगता है कि वे वैज्ञानिक सच है जो प्राचीन भारत के धातुकर्मियों के कौशल का परिणाम मानते हैं। उन दिनों भारत में बनी स्टील की चीजें सारी दुनिया में प्रसिद्ध थीं। इसी वजह से फारस के लोगों में एक कहावत प्रसिद्ध थी : 'स्टील लेकर भारत कौन जाता है?'

आज साधारण जंगरोधी स्टील को देखकर किसी को भी आश्चर्य नहीं होता। कुछ दिनों पहले संयुक्त राज्य अमरीका में पारदर्शी जंगरोधी स्टील का पेटेंट दिया गया। इस नई धातु को विद्युतरासायनिक विधि से प्राप्त किया जाता है जिसके दौरान क्रिस्टलों के अंदर अति बारीक रंध्र बन जाते हैं जो स्टील को पारदर्शी बना देते हैं।

आज स्टील-निर्माता विभिन्न प्रकार की धातुओं के प्रगलन में दक्ष हो चुके हैं जिन्हें तरह-तरह के कार्यों में प्रयुक्त किया जाता है। आधुनिक धातु-कारखाने कितनी सारी किस्मों का स्टील बना रहे हैं—जंगरोधी तथा तीव्रगति से काटने वाला स्टील, बाल बेयरिंग स्टील, स्प्रिंग स्टील, चुंबकीय तथा अचुंबकीय स्टील, तापरोधी तथा शीतरोधी स्टील आदि। स्टील की सभी किस्मों की जरूरत पड़ेगी।

बेल्जियम के एक धातु-कारखाने में कुछ साल पहले एक मशीन चालू की गई है जो स्टील की पट्टियों पर विभिन्न प्रकार के डिजाइन बना देती है। इस मशीन की सहायता से स्टील को लकड़ी, चमड़े, कपड़े तथा अन्य चीजों का रूप दिया जा सकता है। मोटर-कारों के निर्माताओं, वास्तुकारों तथा घरेलू चीजों के निर्माताओं को यह स्टील बहुत पसंद आया है।

लोहे की मांग बहुत ही ज्यादा है। यहां इतना कहना ही काफी होगा कि उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक उद्योगों तथा खेतीबारी में प्रयुक्त की जा रही हर 100 किलोग्राम धातु में 95% हिस्सा लोहे का होता था।

शहरों का निर्माण, नई रेल-लाइनों का बिछाना, समुद्री जहाजों का जलावतरण, वात्या भट्ठियों का लगाना, शक्तिशाली सिन्क्रोफाजोट्रोन की रचना, अंतरिक्ष यानों की उड़ान—इनमें से एक भी चीज लोहे के बिना संभव नहीं है।

परंतु लोहा केवल सृजन के काम में ही प्रयुक्त नहीं किया जाता रहा है। मानव-जाति के इतिहास की बहुत सारी खूनी घटनाएं इस धातु के साथ संबंधित

रही है प्रथम तथा द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान लोहे से बने लाखों बमों ने लोगों पर कहर ढाया लोहे ने खुद ही वह सब मिटा दिया जिसे मनुष्य ने शताब्दियों मे लोहे की सहायता से बनाया था।

लगभग 2000 साल पहले प्राचीन रोमन लेखक तथा वैज्ञानिक प्लीनी ज्येष्ठ ने लोहे के बारे में निम्न बात कही : 'लोहे की खानें मनुष्य का एक शानदार तथा बहुत हानिकारक औजार देती आ रही हैं। इस औजार से हम जमीन की खुदाई करते हैं, पौधे बोते हैं, हरे-भरे बाग लगाते हैं, अंगूर की बेलों को हमेशा जवान बनाए रखते है। इसी औजार से मकान बनाते हैं, पत्थर तोड़ते हैं। ऐसे हर काम में हम लोहे का इस्तेमाल करते हैं। परंतु इसके साथ-साथ लोहे की सहायता से हम झगड़ते हैं, युद्ध करते हैं, डाके डालते हैं। इसका प्रयोग केवल पास से नहीं, दूर से भी करते हैं। कभी तोपें चलाते हैं और कभी बर्छे फेंकते है। मेरे विचार से लोहा इंसान के दिमाग की सबसे घृणित खोज है। मौत को डैने दे दिए गए है और लोहे को परदार बना दिया गया है जिससे कि मौत इंसान को जल्दी पकड़ सके। इसका दोषी इंसान है, न कि प्रकृति।' हम भी लोहे को अपने गुनाहों का जिम्मेदार नहीं ठहराएंगे।

पिछले कुछ दशकों में लोहे के कई प्रतिद्वंद्वी सामने आ गए हैं : एलुमिनियम, टाइटेनियम, वैनेडियम, बेरीलियम, जिर्कोनियम तथा अन्य कई धातुएं मिलकर लोहे की स्थिति बिगाड़ने का खूब प्रयास कर रही है। परन्तु लोहे की 'पेंशन लेने' लायक उम्र (5,000 साल से ऊपर) होते हुए भी वह अपनी जगह पर डटा हुआ है। इसके बारे में अकादमीशियन अ. फेर्समान ने ये शब्द लिखे 'भविष्य अन्य धातुओं के साथ है। लोहे की एक पुराने, बुजुर्ग तथा योग्य पदार्थ के रूप में इज्जत की जाएगी। परंतु फिलहाल यह भविष्य बहुत दूर है।...अभी लोहा धात्विकी, मशीनरी, रेलो, जलयानो, पुलो तथा यातायात साधनों की जान है।'

चाद पर लोहा प्राप्त करने की अनेक विधियां विकसित की गई हैं। एक विधि के अनुसार वहां धातु को पिघलाया नही, बल्कि आसवित किया जाएगा—उसे गैसीय अवस्था मे लाकर कार्बन से संतृप्त किया जाएगा, फिर अति लंबे कन्वेयर की सतह पर संघनित किया जाएगा। उस पर बैठकर कार्बनित लोहे का वाष्प चाद पर निर्वात होने के कारण ऐसे इस्पात में परिणत होगा, जिसकी कोटि पृथ्वी पर प्राप्त इस्पात से कई गुनी ऊंची होगी।

अमरीकी विशेषज्ञो ने एक प्रयोगाधीन उपकरण बनाया है, जो चंद्र-अयस्क से लोहा अलग करेगा परवलयाकार दर्पणों द्वारा संकेंद्रित और किरणों की सहायता से चांद की मिट्टी पिघलाई जाएगी, फिर विद्युत अपघटित्र धातु को अन्य अवयवों



ग। ये अपघटित्र सौर बैटरी से ऊर्जा लेंगे। वैज्ञानिकों की गणनानुसार
ा यंत्र यह उपकरण 24 घंटे में 1 टन के लगभग लोहा अलग करेगा।
70 में सोवियत स्वचालित स्टेशन 'लूना 16' पृथ्वी पर चंद्रमा की
लाया, सोवियत विज्ञान अकादमी ने देश के विभिन्न संस्थानों को
ाज के अध्ययन का काम सौंपा। वैज्ञानिकों को यह देखकर बडा
कि चद्रमा से लाई इस मृदा में शुद्ध लोहे के कण उपस्थित थे
सा भी जंग नहीं लगा था। खास बात यह थी कि महीनों बाद
र संक्षारण का कोई असर नहीं पडा। वैज्ञानिकों ने असंख्य प्रयोगों
 यह स्थापित किया है कि लोहे की इस अद्वितीय संक्षारण
ा का श्रेय सौर वायु (इलेक्ट्रॉनों, प्रोटॉनों) को है।

शांति की तोपों का आवेश

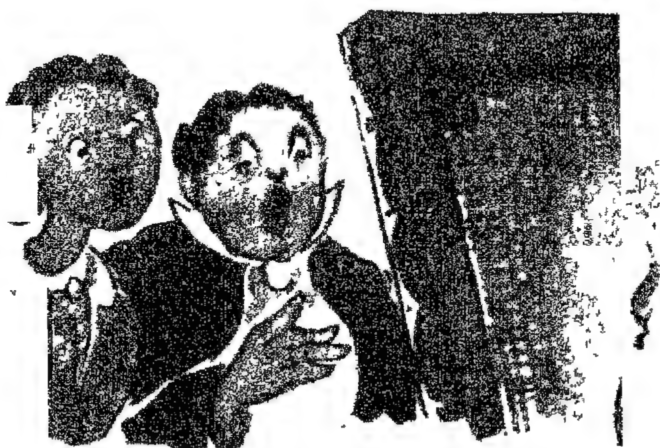
पारासेल्स की चालाकी—नीले रंग की [illegible] रहस्य—सैक्सोनी चट्टानों के विचित्र अयस्क—ब्रांड का शोध-प्रबंध—एक पशुचिकित्सक का शौक—हर बुराई में अच्छाई भी होती है—सितारों के समान—जापानी स्टील—जोखिमभरे खिलौने—इंग्लैंड के समुद्री बेड़े को बहुत हानि होती है—पुराने ढेर अचंभे में डाल देते हैं—प्लेटिनम के साथ संधि—कील कैसे निकाली जाए—मजबूत और सस्ता - रक्ताल्पता से संघर्ष—पुरानी यादगार के नाम पर—पति-पत्नी की खोज—परिकथा के जिन्न की तरह—'बर्तनों' की परीक्षा—विघटनाभिक कोबाल्ट के पेशे—फिराउन का मुखौटा—नीले रंग के हीरे—आसमानी बिजली को कैसे पकड़ सकते हैं?—चिकित्सकों का सहायक

पुनरुत्थान काल के प्रसिद्ध चिकित्सक तथा प्रकृतिविज्ञानी पारासेल्स को एक जादू दिखाने का बहुत शौक था जिसे दर्शक भी बहुत पसंद करते थे। वैज्ञानिक लोगो को एक तस्वीर दिखाते थे जिस पर जाड़े का दृश्य बना होता था—पेड़ो तथा पहाड़ियो पर बर्फ जमी दिखाई देती थी। लोगो को यह तस्वीर अच्छी तरह से दिखाकर पारासेल्स उनके देखने-देखते सर्दी को गर्मी में बदल देते थे : पेडो पर पत्तियां उग जाती थीं तथा पहाड़ियों पर हरी घास दिखाई देने लगती थी।

क्या यह एक जादू था? परंतु हम जानते हैं कि दुनिया में जादू नाम की कोई चीज नही है। इस प्रयोग मे जादूगर का काम रसायन कर रहा था। कोबाल्ट क्लोराइड का विलयन, जिसमें थोड़ा-सा निकिल या लौह क्लोराइड मिला हुआ होता है, साधारण ताप पर रंगहीन होता है। परंतु इससे कोई ड्राइंग बनाकर सूखने के बाद अगर उसे थोड़ा-सा भी गरम किया जाए तो यह घोल अतिसुंदर हरे रंग मे बदल जाता है। पारासेल्स इसी विलयन की सहायता से जादुई तस्वीर दिखा

चत समय पर वे दर्शकों की निगाह से छिपाकर तस्वीर की दूसरी ोमवत्ती जला देते थे जिसके फलस्वरूप लोगों के देखते-देखते ा था।

ारूर सच है कि पारासेल्स को ख़ुद भी अपने रंगों की रासायनिक ही थी क्योंकि उन दिनों विज्ञान जगत् कोबाल्ट और निकिल स बिल्कुल अपरिचित था। हालांकि कोबाल्ट यौगिक कद कों के रूप में प्रयोग हो रहे थे। 5,000 साल पहले चीनी मिट्टी पादन में नीले रंग का कोबाल्ट रजक प्रयुक्त किया जाता था। लोग सारे विश्व में प्रसिद्ध अपनी नीली चीनी मिट्टी के उत्पादन ाल करते थे। प्राचीन मिस्र के लोग मिट्टी के घड़ों पर नीले रंग थे जिसमें कोबाल्ट मिला होता था। पुरातत्त्वज्ञों को फिराउन क़ब्र में नीले रंग के काच मिले हैं जो इस तत्त्व के लवणों से न आसीरी तथा बाबिलन के स्थान में भी पुरातत्त्वज्ञों को खुदाई ान मिले हैं।



है कि हमारे युग के आरंभ में कोबाल्ट रंजकों का रहस्य खो न्ती, यूनान, रोम तथा अन्य देशों के कारीगरों ने उन दिनों काच बनाया उसमें कोबाल्ट बिल्कुल नहीं था। उन्होंने नीला ाए ताम्र का प्रयोग किया। उनका नीला रंग स्पष्टतया प्राचीन ।

कोबाल्ट की जादुई काफी लंबी रही। केवल मध्य युग में वेनिस

के कारीगरों ने अद्भुत नील काच का उत्पादन फिर शुरू किया इस काच की प्रसिद्धि कोबाल्ट के उपयोग से संबंधित थी

वेनिस के लोगों ने इस नाजवाब काच के बनाने का फार्मूला गुप्त रखा। कहीं यह रहस्य खुल न जाए, इस खयाल में तेरहवीं शताब्दी में वेनिस सरकार ने कांच की सारी फैक्टरियां एक छोटे-से द्वीप मुरानो पर स्थानान्तरित कर दी। किसी भी बाहरी व्यक्ति को इस द्वीप पर जाने की आज्ञा नहीं थी। इसके साथ-साथ कोई भी कारीगर अधिकारियों की आज्ञा के बिना द्वीप से बाहर नहीं जा सकता था। परंतु पता नहीं कैसे एक शिक्षार्थी जार्जियो बेलरिनो को वहां से निकलने मे सफलता मिल गई। वह जर्मनी पहुंच गई और वहां एक शहर में उसने कांच की एक कर्मशाला खोल ली। परंतु यह कर्मशाला ज्यादा दिनों तक नहीं खुली रही। एक दिन उसमे 'आग लग गई' और वह स्वाहा हो गया। कर्मशाला का भगोड़ा मालिक भी कटार से मरा पाया गया।

सत्तरहवीं शताब्दी की दस्तावेजें यह बताती है कि उन दिनों रूस मे एक महगे परंतु स्थाई तथा गाढे कोबाल्ट रजक 'गोलुबेत्स' (रूसी भाषा में गोलुबोइ का अर्थ होता है—नीला) की बहुत माग थी। क्रेमलिन के आमोद प्रमोद भवन, शस्त्रागार, अर्खान्गेल और उस्पेन्ये कैथीड्रल की दीवारे तथा उस जमाने की बहुत सारी अद्वितीय इमारतें इसी रंजक से सजाई गई हैं।

कोबाल्ट रंजकों के महंगा होने का कारण यह था कि इस धातु के अयस्क बहुत कम मात्रा मे प्राप्त किए जाते थे। असल में बात यह थी कि उन दिनो औद्योगिक जगत् कोबाल्ट अयस्कों के बारे में कोई जानकारी ही नहीं रखता था क्योकि इस धातु के बड़े निक्षेप प्रकृति में उपस्थित ही नहीं हैं। यह केवल कुछ धातुओं के थोड़े-थोडे सम्मिश्रणों के रूप में मिलता है जैसे आर्सेनिक, ताम्र, बिस्मथ आदि। यही वजह थी कि मध्य युग में सैक्सोनी पहाड़ो के खनिको को इस बात की भनक तक नहीं थी कि उनके पहाड़ों में एक अज्ञात धातु छिपी हुई है।

परंतु समय-समय पर यहां के लोगों को एक विचित्र अयस्क मिलता रहा जिसके बाह्य गुण रजत अयस्क से मिलते-जुलते थे। उन्होंने इससे रजत प्राप्त करने की काफी कोशिश की परंतु सफलता नहीं मिली। इसके अलावा एक बात और भी थी और वह यह कि भर्जन के दौरान अयस्क मे से जहरीली गैसें निकलती थी जिनसे खनिको को बहुत परेशानी होती थी। धीरे-धीरे सैक्सोनी के लोगो को वास्तविक रजत तथा नकली रजत में फर्क पता चल गया। उन्होंने इसका नाम 'कोबाल्ट' रखने का फैसला किया। यह नाम इसके अंदर 'घुसी' पहाड़ी आत्मा के नाम पर रखा गया था।

1735 में स्वीडिश रसायनज्ञ ग. ब्राड ने सेक्सोनी में मिले कुछ अयस्कों का विश्लेषण किया। इनमें बदमाश 'कोबाल्ट' भी शामिल था। इन प्रयोगों के आधार पर उन्होंने 'अर्द्धधातुओं' के विषय पर अपना शोध-प्रबंध प्रस्तुत किया जिसमें उन्होंने यह सिद्ध किया कि इन अयस्कों में एक अज्ञात धातु उपस्थित है जिसको 'कोबाल्ट' नाम दिया गया। अगर यह आविष्कार आज हुआ होता तो यह खबर क्षण-भर में सारी दुनिया में फैल जाती, परन्तु अठारहवीं शताब्दी मे संचार के इतने बढ़िया साधन उपलब्ध नहीं थे जिसकी वजह से स्वीडिश रसायनज्ञ की खोज की जानकारी केवल कुछ लोगों तक ही सीमित रही। बहुत कम विज्ञानी कोबाल्ट की 'नागरिकता' का हक मानते थे। वे उसे 'खास मिट्टी' के साथ कुछ तत्त्वों के मिश्रण का परिणाम समझते थे।

केवल 1781 मे फ्रांसीसी रसायनज्ञ प्येर जोसेफ माकेर विश्व को इसमें विश्वास दिलाने में सफल हुए कि कोबाल्ट कोबाल्ट ही है और कुछ नहीं।

इस वक्त तक कोबाल्ट के सबसे नजदीकी रासायनिक संबंधी निकिल की खोज हो चुकी थी। ये दोनों धातुएं प्रकृति में प्राय: एक-दूसरे के साथ मिलती थी वैज्ञानिकों के सामने एक कठिन प्रश्न था : इन दोनों धातुओं को एक-दूसरे से अलग कर शुद्ध रूप में कैसे प्राप्त किया जा सकता है?



इस प्रश्न का उत्तर अचानक ही मिल गया। एक पशुचिकित्सक शार्ल आस्कीन ने इस कठिन रासायनिक समस्या का हल ढूंढ लिया। यह घटना इस प्रकार घटी : शार्ल आस्कीन को धात्विकी का बहुत शौक था। अपना सारा खाली वक्त वे इसके अध्ययन में बिताते थे। 1834 में उन्हें निकिल तथा इसके एलॉयों में दिलचस्पी हो गई। आस्कीन ने एक अयस्क से निकिल प्राप्त करने की कोशिश की, परन्तु अभाग्यवश (बेहतर होगा कि इसे भाग्यवश कहा जाए) उनके अयस्क में कोबाल्ट भी उपस्थित था। अब क्या किया जाए? आस्कीन ने शहर की रासायनिक फैक्टरी के मालिक बैन्सन से सहायता मांगी। उन्हें पता चला कि उस वक्त बैन्सन को

चीनी मिट्टी के उत्पादन के लिए कोबाल्ट की सख्त जरूरत थी, परंतु बेन्सन को भी दोनों धातुओं को एक-दूसरे से अलग करने की तरकीब पता नहीं थी। काफी सोच-विचार के बाद दोनों ने इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए क्लोराइड चूना प्रयुक्त करने का फैसला किया। यह हिसाब लगाकर कि इस काम में कितने चूने की आवश्यकता पड़ेगी वे प्रयोग में जुट गए।

बेन्सन के पास क्लोराइड चूने की पर्याप्त मात्रा थी। उन्होंने हिसाब के अनुसार इसकी आवश्यक मात्रा लेकर काम शुरू कर दिया, परंतु प्रयोग से कुछ भी नहीं मिला : विलयन में दोनों धातुओं के आक्साइड जमा हो गए थे।

उधर आस्कीन को प्रयोग शुरू करते समय पता चला कि उनके पास क्लोराइड चूना कम है। प्रयोग के लिए जितना चूना चाहिए था, उनके पास केवल उसकी आधी मात्रा थी। उन्होंने सोचा : 'मेरी किस्मत ही खराब है।' फिर भी उन्होंने प्रयोग जारी रखने का फैसला किया। यह कहावत ठीक ही है कि हर बुराई में अच्छाई भी होती है। उन्हें यह देखकर बहुत आश्चर्य तथा प्रसन्नता हुई कि जिस प्रयोग से उन्हें किसी तरह की उम्मीद ही नहीं थी, उसने आशातीत परिणाम दे दिए : कोबाल्ट ऑक्साइड के रूप में नीचे बैठ गया तथा निकेल क्लोराइड चूने की आवश्यक मात्रा न मिलने के कारण विलयन में घुला रहा। आगे चलकर इस विधि में थोड़ा-सा सुधार लाया गया और आज भी उद्योग में दोनों संबंधियों को एक-दूसरे से अलग करने के लिए यही विधि प्रयुक्त की जाती है।

बीसवीं शताब्दी के आरंभ तक कोबाल्ट की गतिविधियां सीमित थीं। उदाहरण के लिए, धातुविज्ञानी, जो आज कोबाल्ट को बहुत मान देते हैं, उस वक्त इसके गुणों की बहुत थोड़ी जानकारी रखते थे। 1912 में धात्विकी पर एक किताब छपी 'अलौह धातुओं की धात्विकी।' इस पुस्तक में निम्न शब्द लिखे गए हैं : '...आज भी धात्विक कोबाल्ट किसी कार्य का नहीं है। ..कुछ लोगों ने लोहे में कोबाल्ट मिलाकर एक विशेष किस्म का स्टील बनाने का प्रयास किया है, परंतु यह स्टील किसी काम का नहीं निकला।'

परंतु यह किताब प्रकाशित होने से 5 साल पहले तक अमरीकी धातुकर्मी हेइन्स ने क्रोमाइट, टंग्स्टन और कोबाल्ट के कुछ विचित्र ऐलॉय बनाए थे जो हद से ज्यादा मजबूत थे तथा जिन पर संक्षारण और घिसाई का कम असर पड़ता था। अपनी चमक के लिए इन ऐलॉयों को स्टेलाइट कहते थे ('स्टेला' शब्द का अर्थ है—नक्षत्र)। इन ऐलॉयों की एक बेहतरीन किस्म के अंदर 50% कोबाल्ट उपस्थित था।

मजबूत ऐलॉयों का उत्पादन बढ़ता रहा और इस कार्य में कोबाल्ट बहुत

महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा था। सोवियत वैज्ञानिकों तथा इंजीनियरों ने 50 साल पहले ही एक बहुत ही मजबूत एलॉय 'पोबेडाइट' बनाया है जिसमें टंगस्टन कार्बाइड के अलावा कोबाल्ट भी उपस्थित है।

1917 में जापानी वैज्ञानिकों होंडा तथा ताकागी को आयरन स्टील का पेटेंट मिल गया। इस स्टील में कोबाल्ट की मात्रा 20 से 60% तक थी तथा इसमें बेहतरीन चुंबकीय गुण विद्यमान थे। उद्योग जगत को ऐसे स्टील की बड़ी सख्त जरूरत थी। उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तथा बीसवीं शताब्दी के आरंभ में चुंबकों ने उद्योग जगत पर कब्जा-सा कर लिया जिसकी वजह से चुंबकीय स्टील की 'भूख' बढ़ गई।

तीनों मुख्य लौह चुंबकीय धातुओं—लौह, निकिल तथा कोबाल्ट में से केवल कोबाल्ट ऐसी धातु है जिसका क्यूरी तापांक अर्थात् वह तापमान जिस पर धातु अपना चुंबकीय गुण खो देती है, काफी उच्च है। निकिल का क्यूरी तापमान 358°C तथा लौह का 769°C है परंतु कोबाल्ट का 1121°C है। चुंबकों को अक्सर विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों में काम करना पड़ता है। उन्हें काफी उच्च ताप का भी सामना करना



पड़ता है इसी कारण कोबाल्ट चुंबकीय स्टीलों का मुख्य घटक बन गया।

कोबाल्ट स्टील का निर्माण शुरू ही हुआ था कि सेना के अफसरों तथा उद्योगपतियों ने इसकी ओर ध्यान दिया। वे तुरंत समझ गए कि इनके विशिष्ट गुण उनके लिए बहुत काम के सिद्ध होंगे। उन्होंने इसे विनाशकारी कार्यों (युद्ध सामग्री के उत्पादन) में प्रयुक्त करना शुरू कर दिया। रूस में गृहयुद्ध के दौरान (1918-1920) देश के उत्तर में अंग्रेजों के साथ लड़ते हुए समय रूसी नौसैनिकों तथा लाल सेना के सिपाहियों को विचित्र माइनों से सामना पड़ा। इन माइनों के पास गए जहाज बिना टकराए भी फट जाते थे। काफी प्रयासों के बाद गोताखोरों ने एक ऐसा जोखिम भरा 'खिलौना' काबू में कर लिया। इसका फ्यूज निकाल कर जब अध्ययन किया गया तो पता चला कि यह चुंबकित था। इसके कार्य का सिद्धांत यह था कि जैसे ही (स्टील का बना) जहाज इस सुरंग के चुंबकीय क्षेत्र मे आता था, सुरंग फट जाती थी जिससे जहाज डूब जाता था।

द्वितीय विश्व युद्ध के पहले फासिस्ट जर्मनी में कोबाल्ट स्टील का उत्पादन बहुत ज्यादा बढ़ गया। इसे चुंबकीय सुरंगों के निर्माण में इस्तेमाल किया जाता था। नाजी प्रचारकों ने यह अफवाह फैला रखी थी कि परिशुद्धता, सुग्राहिता तथा प्रतिक्रिया गति में 'जर्मन सुरंगें भगवान के बनाए हुए प्राणियों के तंत्रिका तंत्र से भी श्रेष्ठ हैं।' वास्तव में जर्मन लोगों ने इंग्लैंड के समुद्री किनारे, टेम्स तथा अन्य महत्त्वपूर्ण नदियों में सुरंगें बिछाकर इंग्लैंड के बेड़े को बहुत हानि पहुंचाई। परंतु जैसाकि कहा जाता है हर जहर की दवाई होती है। जर्मन सेना के सोवियत संघ पर हमले के लगभग 2 सप्ताह बाद ही सोवियत सेना के इंजीनियरों ने काले सागर में ओचाकोव के पास जर्मनों की पहली चुंबकीय सुरंग को बेकार कर दिया।

युद्ध के दिनों यूराल में निम्न घटना घटी। एक फैक्टरी में, जो कई सालों से ताम्र अयस्क पर काम कर रही थी, इंजीनियरों को पुराने माल के ढेर में कोबाल्ट मिला। इस बात की किसी ने कभी कल्पना भी नहीं की थी। बहुत थोड़े समय में कोबाल्ट प्राप्त करने की तकनीक ढूंढ ली गई और शीघ्र ही सोवियत सुरक्षा उत्पादन-मंत्रालय को 'कबाड़' से एक बहुत ही कीमती धातु मिलने लगी।

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान कोबाल्ट उच्चतापसह स्टील तथा ऐलॉयों के उत्पादन मे प्रयुक्त होने लगा जिनका प्रयोग हवाई जहाजों के इंजनों के पुर्जों, अंतरिक्ष राकेटों, उच्चदाब भापीय बायलरों, टर्बोसंपीडित्रों तथा गैस टरबाइनों के ब्लेडों में किया जाता था। इस तरह का एक ऐलॉय 'विटालियम' है जिसमें 65% कोबाल्ट होता है। परंतु महंगा तथा विरल होने के कारण कोबाल्ट का धात्विकी में उपयोग सीमित है।

परतु कुछ ऐसे भी क्षेत्र है जहा कोबाल्ट अपने से भी महगी एक धातु की जगह सफलतापूर्वक ले लेता है। यह धातु प्लेटिनम है जिसका वार्षिक उत्पादन बडी आसानी से एक ट्रक मे ढोया जा सकता है। विद्युत-अपघटन क्रिया मे ऐसे अविलेय ऐनोडों की जरूरत पड़ती है जो द्रव के साथ किसी भी प्रकार की प्रतिक्रिया न करे। इस काम के लिए प्लेटिनम एक बेहतरीन चीज है, परन्तु यह बहुत महगा पडता है। इसी वजह से बहुत दिनो से वैज्ञानिक लोग सस्ते ऐनोडों की खोज मे व्यस्त रहे है। काफी प्रयासों के बाद उन्हें एक ऐसा ऐलॉय बनाने में सफलता मिल गई जिसकी अम्लरोधिता प्लेटिनम से भी उत्तम थी। इस ऐलॉय मे कोबाल्ट की मात्रा 75% तक थी।

कई बार कोबाल्ट प्लेटिनम के साथ मिलकर भी काम करता है। उदाहरणतया, इग्लैंड की एक फर्म ने इन दोनों धातुओं से एक चुबकीय ऐलॉय 'प्लेटिनैक्स' बनाया है। इस ऐलॉय मे उच्च संक्षारण-प्रतिरोध-क्षमता है तथा मशीनरी मे इसका प्रयोग भी बहुत सरल है। यह बिजली की घडियों, श्रवणसहाय यत्रो तथा डेटा यूनिटो के सूक्ष्म चुंबकीय पुर्जो के निर्माण मे प्रयुक्त किया जाता है।

कोबाल्ट तथा क्रोमियम का ऐलॉय नकली दांत बनाने मे बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। यह सोने से दुगुना मजबूत रहता है तथा काफी सस्ता भी पडता है।

चिकित्सा मे कोबाल्ट के एक और गुण का उपयोग होता है। गुण यह है कि वह B_{12} विटामिन का एक महत्त्वपूर्ण अंश होते हुए मानव के शरीर में लाल रक्त-कणो के निर्माण मे सहायक है। रक्त-क्षीणता के रोग के विरुद्ध संघर्ष में यह लाभकर साधन है। इसके आविष्कार के लिए अंग्रेजी रसायनज्ञ और जीवरसायनज्ञ डॉरोटी क्रौफुट-हजकीन 1964 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित हुई।

प्राचीन काल से ही चीन मे बनाया जाने वाला मिट्टी का बहुरगी शानदार बर्तन दुनिया-भर मे प्रसिद्ध है। बर्तनों का नीला रंग कोबाल्ट के यौगिको की बदौलत बनता है।

अभी तक हमने साधारण कोबाल्ट की बातें बताई है, परंतु जैसे ही 1943 मे विख्यात फ्रेंच वैज्ञानिकों फ्रेडरीख तथा इरेन जूलियो-क्यूरी ने कृत्रिम विघटनाभिकता की खोज कर डाली, विज्ञान तथा तकनीक ने विभिन्न तत्त्वो के विघटनाभिक समस्थानिकों में बहुत दिलचस्पी लेनी शुरू कर दी। कोबाल्ट भी इन तत्त्वो में शामिल था। धातु के 12 विघटनाभिक समस्थानिको में से कोबाल्ट-60 सबसे अधिक काम का साबित हुआ।

इसकी किरणों में उच्च वेधन-क्षमता होती है। 17 ग्रा विघटनाभिक कोबाल्ट

की विकिरण शक्ति सबसे शक्तिशाली विकिरण स्रोत रेडियम (1 किलोग्राम) की विकिरण शक्ति के बराबर होती है। यही कारण है कि जब यह समस्थानिक प्राप्त किया जाता है या इसका स्थानांतरण किया जाता है या कहीं भेजा जाता है तब सुरक्षा नियमों का बड़ी सख्ती से पालन किया जाता है ताकि लोग मौत की किरणों से सुरक्षित रहें।



नाभिकीय रिएक्टर के अंदर साधारण धात्विक कोबाल्ट के विघटनाभिक कोबाल्ट में परिवर्तित हो जाने के तुरंत बाद उसे एक कहानी के जिन्न की तरह विशेष बर्तनों में बंद कर दिया जाता है जिनका आकार दूध के बड़े बर्तनों जैसा होता है। इन बर्तनों की ऊपरी सतहों पर लेड की परत चढ़ाई जाती है। कोबाल्ट-60 को काम की जगह तक पहुंचाने के लिए विशेष गाडियों का इस्तेमाल होता है। आप पूछेंगे, अगर गाड़ी अचानक दुर्घटनाग्रस्त हो जाए, तब क्या होगा? क्या बर्तन टूट जाएगा और उसके अंदर रखा कोबाल्ट लोगों की जान के लिए खतरा पैदा कर देगा? जी नहीं, ऐसा कभी नहीं होगा। यह बात जरूर सच है कि गाड़ी के साथ कभी भी दुर्घटना घट सकती है, परंतु अगर ऐसा हो जाता है तो 'बर्तनों' का कुछ नहीं बिगड़ता, वे सही सलामत रहते हैं। बात यह है कि विघटनाभिक समस्थानिक रखने से पहले इन बर्तनों की कड़ी जांच की जाती है। इन्हें पांच

मीटर की ऊंचाई से कंक्रीट स्लैबों पर फेंका जाता है, तापीय चैम्बरों में रखा जाता है तथा और कई तरह की परीक्षाओं से गुजारा जाता है। इन सब परीक्षाओं के बाद ही वर्तन विघटनाभिक समस्थानिक से भरे छोटे कैप्स्यूल को लादने के अधिकारी बनते हैं। ये सारे उपाय विकिरण स्रोतों पर काम करने वाले लोगों का जीवन पूर्णतया सुरक्षित कर देते हैं।

विघटनाभिक कोबाल्ट के बहुत सारे पेशे हैं। उदाहरण के लिए, उद्योग में त्रुटि-अन्वेषण के काम में गामा किरणों का प्रयोग बढ़ता जा रहा है अर्थात् गामा-रेडियोग्राफी की सहायता से उत्पादन की कोटि पर नियंत्रण रखा जा रहा है। यहां कोबाल्ट-60 विकिरण स्रोत का काम करता है। इस विधि में एक सस्ते तथा सघन उपकरण की सहायता से स्थूल संचकों, संधान संस्तरों, यूनिटों तथा अन्य हिस्सों (जहां पहुंचना बहुत मुश्किल होता है) में पैदा हुई दरारों, सुराखों, वायुरंध्रों तथा अन्य आंतरिक त्रुटियों का आसानी से पता चल सकता है। गामा किरणों में यह विशेषता होती है कि वे चारों ओर एक समान रूप से फैलती हैं। इस कारण उक्त विधि द्वारा एक ही समय में बहुत सारी चीजों पर नियंत्रण रखा जा सकता है। इसके अलावा जो चीजें बेलनाकार होती हैं उनकी सारी परिमाप की एक साथ जांच भी की जा सकती है।

गामा-किरणों की सहायता से मिस्र का अध्ययन करने वाले वैज्ञानिकों को फिराउन टूटनखामोन की कब्र के अध्ययन में सफलता मिल गई जो बहुत लंबे अर्से तक उनके लिए एक रहस्य बना हुआ था। कुछ वैज्ञानिकों का कहना था कि यह कब्र सोने के एक खंड से बनाई गई है जबकि दूसरों के विचारानुसार इसे अनेक टुकड़े जोड़कर बनाया गया है। वास्तविकता जानने के लिए कोबाल्टगन इस्तेमाल करने का फैसला किया गया। यह एक विशेष प्रकार का उपकरण होता है जिसे कोबाल्ट समस्थानिक से आवेशित किया जाता है। प्रयोग से पता चला कि वास्तव में नकाब कई टुकड़ों से बना है, परंतु ये टुकड़े इतनी सफाई के साथ लगाए गए हैं कि इनके जोड़ ढूंढ़ना पूर्णतया असंभव है।

प्रगलन भट्टियों में गलित धातु के स्तर तथा वात्या भट्टियों व बंकरों में आवेश सामग्री के स्तर पर नियंत्रण रखने के लिए विघटनाभिक कोबाल्ट इस्तेमाल में लाया जाता है। इसके अलावा सतत बहाव अधिष्ठानों के क्रिस्टलित्र में द्रवित स्टील का स्तर भी इसी कोबाल्ट द्वारा नियंत्रण में रखा जाता है।

समुद्री जहाजों के पेंदों, पाइपों की दीवारों, वाष्प बायलरों आदि की मोटाई नापने के लिए एक विशेष उपकरण होता है जिसे गामा मुटाई मापक कहते हैं। इन चीजों की आंतरिक सतह पर पहुंचना असंभव होता है जिसकी वजह से साधारण

उपकरण इस काम को नहीं कर सकता।



विभिन्न उपकरणों की तकनीकी प्रक्रियाओं तथा प्रचालन दशाओं के अध्ययन में विघटनाभिक परमाणुओं अर्थात् कई सारी धातुओं (इनमें कोबाल्ट भी शामिल हो के समस्थानिकों का प्रयोग विस्तृत होता जा रहा है।

विश्व मे सोवियत सघ पहला देश है जहां औद्योगिक स्तर पर एक विकिरण-रासायनिक रिएक्टर लगाया गया है। इस रिएक्टर में गामा किरणों का स्रोत कोवाल्ट का समस्थानिक ही है।



विभिन्न पदार्थों के विवेचन की आधुनिक विधियो, जैसे, अति उच्च दाव, पराध्वनि, लेसर विकिरण, प्लैज्मा प्रोसेसिग आदि के साथ-साथ विघटनाभिक विकिरण भी उद्योगो मे विस्तृत रूप से प्रयुक्त किया जा रहा है जिसके फलस्वरूप वहुत सारे पदार्थो के गुण उत्तम हो जाते है। उदाहरणतया, मोटरों के विकिरण वल्कनित टायरों की आयु आम टायरों की आयु से 10-15% अधिक होती है। स्कूली बच्चो की ड्रैस के धागो में अगर विकिरण द्वारा पालिस्टाइराल के अणु मिला दिए जाए तो उसकी मजबूती दुगुनी हो जाती है। यहां तक कि रत्न भी विकिरण 'उपचार' के बाद और भी



ज्यादा सुंदर हो जाते हैं, जैसे, तीव्र न्यूट्रानों द्वारा किरणन होने पर हीरा का रंग नीला हो जाता है, क्षिप्र न्यूट्रानों द्वारा हरा तथा कोबाल्ट-60 की किरणों द्वारा सुहावना नीला-हरा हो जाता है।

विघटनाभिक कोबाल्ट खेतीबारी में भी काम में आ रहा है। यहां इसका प्रयोग भूमि की आर्द्रता के अध्ययन में, खेतों पर बर्फ की सतह में जल के भंडार का पता लगाने में, खेत में पहले बीजों के किरणन में तथा अन्य कार्यों में किया जाता है।

हाल ही में फ्रेंच वैज्ञानिकों ने एक नई खोज की है। उन्होंने यह सिद्ध किया है कि विघटनाभिक कोबाल्ट आसमानी बिजली पकड़ने के काम आ सकता है। अगर एक तड़ित छड़ बनाते समय उसके ऊपरी सिरे में थोड़ा-सा उसका समस्थानिक मिला दिया जाए तो गामा विकिरण के फलस्वरूप उस छड़ के आसपास की वायु आयनित हो जाएगी जिससे वायुमंडल में उत्पन्न विद्युत आवेश एक चुंबक की तरह उस छड़ की ओर खिंच जाएगा। इस नई छड़ की सहायता से सैकड़ों मीटर के घेरे में आसमानी बिजली इकट्ठी की जा सकती है।

अध्याय के अंत में हम विघटनाभिक कोबाल्ट के सबसे महत्त्वपूर्ण पेशे की चर्चा करना चाहेंगे। यह लोगों की जान बचाने के काम में डॉक्टरों के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। चिकित्सा 'गनों' में भरे समस्थानिक कोबाल्ट-60 के गोले गामा किरणों द्वारा मनुष्य को बिना कोई हानि पहुंचाए उसके शरीर के अंदर बढ़ती रोगी कोशिकाओं को नष्ट कर देते हैं और मनुष्य का खतरनाक बीमारी से पीछा छुड़ा देते हैं।

सोवियत संघ की समस्थानिक संस्था 'इजोटोप' के भूमिगत भंडारों में छोटे-बड़े दीवारों बने हैं जिनके अंदर विघटनाभिक कोबाल्ट, स्ट्रान्शियम, सीजियम तथा अन्य विघटनाभिक पदार्थ रखे हुए हैं। जरूरत पड़ते ही उन्हें अस्पतालों क्लिनिकों, फैक्टरियों तथा अनुसंधान संस्थानों में ले आया जाता है जहां शांतिपूर्ण कार्यों में परमाणु की मांग पड़ती है।

'ताम्र राक्षस'

परदादियों के आभूषण--चीन का एक प्राचीन गैलोय--दुष्ट आत्मा का षड्‌यन्त्र--महान् रसायनज्ञ की भविष्यवाणी--उत्साही फ्रांसीसी--कनाडा में निकिल अयस्क मिलते हैं--ग्जेशोनारस्की को स्वर्ण पदक मिलता है--'महामारी' और उसका 'विषाणु'--सम्राट्‌ की मृत्यु का कौन जिम्मेदार है?--एक आकस्मिकता की वजह से--समुद्री बेड़े पर तोड़-फोड़ की कार्यवाही--निकिल अयस्कों की संख्या 3000 से भी ज्यादा है--एक धातुकर्मी का रहस्य--मीर का गैलोय--अपना अतीत नहीं भूलता--निकिल पालिश बहुत चमकदार होती है--'सैंडविच'--सिक्का--मुसीबत से बचना सम्भव है--अचानक!--'कुनबापरस्ती' और परेशानियां--नजदीकी संबंध--अगर ग्रह पर निकिल की पालिश की जाए--कुत्ता अयस्क ढूंढ़ता है--'मैमथ विस्फोट'--आकाश से तारा लेकर आओ--साहसभरी योजनाएं--इंसाफ कब होगा?

सब औरतें शायद यह नहीं जानतीं कि पुराने जमाने में उनकी परदादियों को, जो उन दिनों जवान तथा सुंदर थीं, निकिल का बहुत शौक था। कोई इसका हार गले में पहनती थी, कोई इसकी चूड़ियां बालों में खनखनाती थी और कोई इससे बाल सजाती थी।

जी हां, आप ताज्जुब न करें। पिछली शताब्दी के आरंभ में निकिल बहुत कीमती समझा जाता था। इसको प्राप्त करना बहुत कठिन काम था और इसकी जितनी भी मात्रा प्राप्त होती थी वह जौहरियों के काम आ जाती थी। इंजीनियरों ने इस धातु में कोई रुचि ही नहीं ली क्योंकि उन्हें इसका कोई उपयोग दिखाई नहीं दे रहा था।

लगता है कि मनुष्य निकिल से हजारों साल पहले परिचित हो चुका था। उदाहरण के लिए, प्राचीन चीनवासियों ने ईसा से दो शताब्दी पूर्व ताम्र और जिंक के साथ निकिल का एक एलाय बनाया था जिसका नाम 'पाक्फोंग' था। कई देशों में इस एलाय की बहुत मांग थी। यह एलाय बाक्ट्री (आज इस जगह पर मध्य एशियाई जनतंत्र बसे हुए हैं) भी पहुंचा, जहां के वासियों ने इसका इस्तेमाल सिक्कों के निर्माण में किया। ईसा से 235 साल पहले निर्मित एक ऐसा सिक्का आज लंदन के ब्रिटिश संग्रहालय में सुरक्षित रखा हुआ है।



एक तत्त्व के रूप में निकिल की खोज सन् 1751 में एक स्वीडिश रसायनज्ञ क्रोन्स्टेड ने की। उन्होंने यह धातु एक खनिज कुप्फेर निकिल (ताम्र राक्षस) से प्राप्त की। इस नाम की एक अपनी कहानी है। मध्य युग में सक्सोनी के खनकों को अक्सर लाल रंग का एक खनिज दिखाई देता था। लाल रंग का होने की वजह से भ्रमवश वे इसे ताम्र खनिज समझते थे। उन्होंने इस खनिज से ताम्र प्राप्त करने की काफी कोशिशें कीं, जैसे कीमियागरों ने पारस-मणि द्वारा जानवरों के मूत्र से स्वर्ण प्राप्त करना चाहा था, परन्तु उनके हाथ कुछ नहीं लगा।

उन्हें समझ में नहीं आ रहा था कि उनकी असफलता का कारण क्या है। आखिरकार किसी के दिमाग में यह बात आई कि ये सब शरारतें पहाड़ों पर रह रही दुष्ट आत्मा निक की है। वह इस राक्षसी पत्थर के अंदर घुस गई है और लोगों को जरा-सा भी ताम्र नहीं देना चाहती।

हो सकता है कि मध्य-युग के वैज्ञानिकों ने आगे चलकर इस परिकल्पना का वैज्ञानिक आधार ढूंढ लिया हो। कुछ भी हो, इसके बाद लोगों ने लाल खनिज से ताम्र प्राप्त करने की कोशिशें बंद कर दीं। यह सोचकर कि भविष्य में भी किसी को ऐसा लालच न हो, इस खनिज का नाम 'ताम्र राक्षस' रखने का फैसला किया गया।

ऐसा लगता है कि क्रोन्स्टेड अंधविश्वासी नहीं थे। उन्होंने राक्षस की जरा भी परवाह नहीं की और कुप्फेरनिकिल से एक धातु प्राप्त कर ही ली। परंतु यह ताम्र नहीं था। यह एक नया तत्त्व था जिसका नाम उन्होंने निकिल रख दिया।

परन्तु विज्ञान जगत् निकिल को नए तत्त्व की मान्यता देना नहीं चाहता था। केवल 1775 में यानी क्रान्स्टेड की मृत्यु के 10 वर्ष बाद स्वीडन के दूसरे वैज्ञानिक बेर्गमन ने अपने अनुसंधान-कार्य के परिणामों का प्रकाशन करके विश्वसनीय रूप मे साबित कर दिया कि निकिल कई तत्त्वों का मिश्रण नहीं (उसके विरोधी यह मानते थे), बल्कि एक अलग धातु है।

फिर भी इस सवाल पर बहस आगे तक जारी रही। जर्मन रसायनज्ञ रिख्तर ने करीब तीन दशक के बाद इसका अंत कर दिया। 1804 में रिख्तर ने इसी कुप्फेरनिकिल से शुद्ध निकिल प्राप्त किया। लेकिन इसकी प्राप्ति के लिए उनको 32 बार निकिल विट्रिओल का क्रिस्टलीकरण करना पड़ा। निकिल का वर्णन करने वाले अपने लेख को उन्होंने ऐसा शीर्षक दिया : 'अतिशुद्ध निकिल, उसकी प्राप्ति और उसके गुणो के बारे में।' साफ था कि इतनी मेहनत के साथ निकाली गई धातु केवल जौहरियो के योग्य थी। निकिल के औद्योगिक उत्पादन की बात उस वक्त किसी ने सोची भी नहीं थी।

इसके बाद और 50 से ज्यादा साल गुजर चुके जब महान मेंडलीफ अपनी भविष्यवाणी कर सके। पीटर्सबर्ग में 1869 में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'रसायन के आधार' में उन्होंने लिखा : 'अगर निकिल के समृद्ध भंडारों का पता लगाया जाएगा तो इस धातु का विस्तृत व्यावहारिक उपयोग किया जाएगा–शुद्ध रूप मे अथवा ऐलॉयो के रूप में।'

1865 में न्यू कैलीडोनिया में निकिल अयस्को के विशाल निक्षेप मिले। इन घटनाओं से कुछ समय पहले इस फ्रेंच उपनिवेश के खनन विभाग के अध्यक्ष पद पर एक नए व्यक्ति की नियुक्ति की गई थी जिनका नाम जूल गारने था। वह बहुत उत्साही तथा जानकार व्यक्ति थे। द्वीप पर खनिज की प्राप्ति की आशा से उन्होंने बडी तेजी से खुदाई का काम शुरू करवा दिया और शीघ्र ही उनको इस कार्य मे सफलता मिल गई। द्वीप की भूमि मे निकिल भरा पड़ा था। इस उत्साही फ्रांसीसी के सम्मान मे न्यू कैलीडोनिया मे मिले निकिल अयस्क का नाम 'गाइरेनीयेरीट' रखा गया।

इसके लगभग बीस साल बाद कनाडा में पैसिफिक रेलवे की लाइने बिछाते समय ताम्र-निकिल अयस्को के विशाल भंडार इंजीनियरों के हाथ लगे।

उपर्युक्त घटनाओ से निकिल के औद्योगिक उत्पादन को काफी सहारा मिला। लगभग इन्हीं वर्षो मे इस तत्त्व के सबसे महत्त्वपूर्ण गुण की भी खोज हो गई। पता चल गया कि निकिल स्टील की कोटि उत्तम करने की क्षमता रखता है। यह बात सच है कि इससे काफी पहले 1820 में सुप्रसिद्ध अंग्रेज वैज्ञानिक माइकेल

फैराडे ने निकिलयुक्त स्टील के प्रगलन पर कई प्रयोग किए थे, परन्तु उस वक्त धातुविज्ञानियों ने इनमें कोई रुचि नहीं दिखाई थी।

पिछली शताब्दी के अंत में रूस के नौसेना मंत्रालय ने पीटर्सबर्ग के ओबुखोव कारखाने को एक महत्त्वपूर्ण काम सौंपा: नए बढ़िया किस्म की कवचदार चद्दरों का उत्पादन करना था। उस वक्त ब्रिटेन तथा फ्रांस की नौसेना में निकिल स्टील की नई चद्दरों का इस्तेमाल शुरू हो चुका था और विशेषज्ञों ने इस स्टील की बहुत प्रशंसा की थी।

ओबुखोव कारखाने के प्रमुख धातुविज्ञानी अ. रुजेशोतारस्की ने नए स्टील के उत्पादन का जिम्मा लिया। वे दिन-रात प्रयोग करते रहे और शीघ्र ही उन्हें अपनी मेहनत का फल भी मिल गया। ओबुखोव कारखाने में 10 इंच मोटे बढ़िया निकिल स्टील की चद्दरों का उत्पादन शुरू हो गया। यह स्टील विदेशी स्टील से घटिया नहीं थी, परन्तु रुजेशोतारस्की इसे और भी बढ़िया बनाना चाहते थे। शीघ्र ही उन्होंने एक नई तकनीक ढूंढ ली। उन्होंने धातु की ऊपरी सतह को कार्बन में संतृप्त कर दिया। इस विधि से प्राप्त धातु बहुत ज्यादा मजबूत तथा नम्य निकली। इसकी ऊपरी सतह विशेष रूप से मजबूत थी। फ्रांस की कम्पनी 'श्नेईदर क्रेजो', जिसका स्टील उस वक्त सबसे बढ़िया माना जाता था, भी रुजेशोतारस्की के स्टील का मुकाबला न कर सकी।

रूस के नौसेना मंत्रालय ने इस कार्य के उपलक्ष्य में विद्वान् इंजीनियर रुजेशोतारस्की को सोने का पदक भेंट किया। देश के अन्य कारखानों में भी इस तकनीक के आधार पर स्टील का उत्पादन शुरू हो गया।

हमारे जमाने में निकिल स्टील का उपयोग शांतिपूर्ण कार्यों में किया जा रहा है। इस स्टील से शल्य-चिकित्सा के यंत्र, रासायनिक उपकरण तथा घर की चीजें बनाई जा रही हैं।

अन्य धातुओं के साथ विभिन्न प्रकार के ऐलॉयों के निर्माण में भी निकिल का योगदान बहुत महत्त्वपूर्ण है। उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभ में ही धातुविज्ञानी तथा रसायनज्ञ एक नई 'महामारी' के शिकार हो गए थे। वे एक ऐसा ऐलॉय खोज रहे थे जो बर्तन और छुरी-कांटे के निर्माण में रजत की जगह इस्तेमाल किया जा सके। इस 'महामारी' में विषाणु की भूमिका एक बहुत बड़ा इनाम निभा रहा था। यह इनाम उस व्यक्ति को मिलना था जो ऐसा ऐलॉय बनाएगा। तभी लोगों को उस प्राचीन चीनी ऐलॉय की याद आई। एक ही समय में विभिन्न वैज्ञानिकों ने चीनी ऐलॉय पैकफोंग के आधार पर कई सारे ताम्र-निकिल ऐलॉय बना डाले, जो रजत से काफी मिलते-जुलते थे। इनमें से एक ऐलॉय का नाम

इजेण्टान (रजत जैसा) रखा गया और दूसरे का 'नारजिल्वर' (नया रजत)। इनके पीछे-पीछे जर्मन सिल्वर, आल्फेनिड तथा कई अन्य ऐलॉयों का निर्माण हुआ जिन्हें रजत की जगह इस्तेमाल किया जा सकता था। इन सब ऐलॉयों में निकिल जरूर उपस्थित था।

निकिल ऐलॉय बहुत जल्दी प्रसिद्ध हो गए और इनका खूब इस्तेमाल होने लगा। परंतु 1916 में एक ऐलॉय 'नेइजिल्बर' को कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। हुआ यह कि आस्ट्रिया के सम्राट फ्रांज जोसेफ अचानक बीमार पड़ गए और मर गए। वह इस ऐलॉय के बर्तनों का इस्तेमाल करते थे। उनकी अचानक मौत कैसे हो गई? लोगों को शक हुआ कि यह सब 'नेइजिल्बर' की वजह से हुआ है। बस फिर क्या था? इसके बने बर्तनों पर पाबंदी लगा दी गई। बहुत बारीकी से छानबीन करने पर यह सिद्ध हो गया कि ऐलॉय का सम्राट की मौत से कोई संबंध नहीं है। सम्राट अचानक नहीं मरे थे, उनकी आयु भी तो 86 साल हो चुकी थी।

अक्सर नया ऐलॉय बनाने से पहले दीर्घकालीन शोधों, प्रयोगों और परीक्षणों को संपन्न करना पड़ता है। लेकिन ऐसा भी होता है कि ऐलॉय का जन्म संयोगवश हो जाता है। ऐसी एक घटना हमारी शती के आरंभ में कनाडा के खानों में हुई थी, जहां निकिल के सांद्रित अयस्क प्राप्त किए जाते थे। अयस्क संसाधन करते वक्त हर बार एक कठिन समस्या उठ जाती थी : निकिल से तांबे को कैसे अलग किया जाए, जो अयस्क में स्वयं भी बड़ी मात्रा में उपस्थित रहता था? और यदि इन धातुओं को अलग न किया जाए, उन्हें एक साथ पिघलाकर अपने ढंग का एक प्राकृतिक ताम्र-निकिल धातु मिश्रण प्राप्त किया जाए, तो? यह मौलिक विचार कर्नल आंब्रोजू मोनेल के मन में उठा, वे अंतर्राष्ट्रीय निकिल कंपनी के अध्यक्ष थे। 1905 मे जब इस विचार को कार्यान्वित किया गया, तब पता चला कि इस ऐलॉय में अनेक अच्छे गुण है : उच्च रासायनिक स्थायित्व, मजबूती, सुनम्यता और बाह्य सुंदरता। इसके अतिरिक्त वह अपेक्षाकृत कम महंगा था और यह बात तकनीक में सबसे अधिक महत्त्व रखती है। नए ऐलॉय को मोनेल-धातु का नाम दिया गया; इसने जल्द ही रासायनिक मशीन-निर्माण, जहाज-निर्माण, विद्युत-तकनीक, पेट्रोलियम, चिकित्सा और वस्त्र-उद्योगों मे अपना एक मजबूत स्थान बना लिया।

निकिल ऐलॉयों को नए-नए काम मिलते गए। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान यह देखा गया कि कई बार समुद्री जहाज लड़ाई में भाग लिये बिना भी मरम्मत के लिए डाकयार्ड भेजने पड़ते थे। यह समुद्री जल की 'तोड-फोड की कार्यवाही' का नतीजा होता था। बात यह थी कि समुद्र का जल बायलरों के संघनित्रों की

ट्यूबें खा जाती थीं जो साथ आग जैसी ही बनी होती थीं। इन ट्यूबों के निर्माण के लिए लगभग चार टन निकल पड़ता था।

वैज्ञानिक आग तथा इस काम में लगे लोग यह मान चुके थे कि सब समाप्त हो गया। परंतु उन्होंने अनुसंधान नहीं बंद किया। 1950 में उन्हें आग प्रतिरोधी एलॉय बनाने में सफलता मिल गई जिस पर समुद्री जल का कोई असर नहीं होता था। जिसके 3 साल बाद फ्रांस की नौसेना के साथ जर्मनी और उसके पीछे अन्य नौसेना के जहाजों में भी नए सर्वोत्तम ट्यूब लग गए। अब नाविकों को इस बात का पूरा विश्वास था कि मुसीबत में ये ट्यूब उनका साथ नहीं छोड़ेंगे।

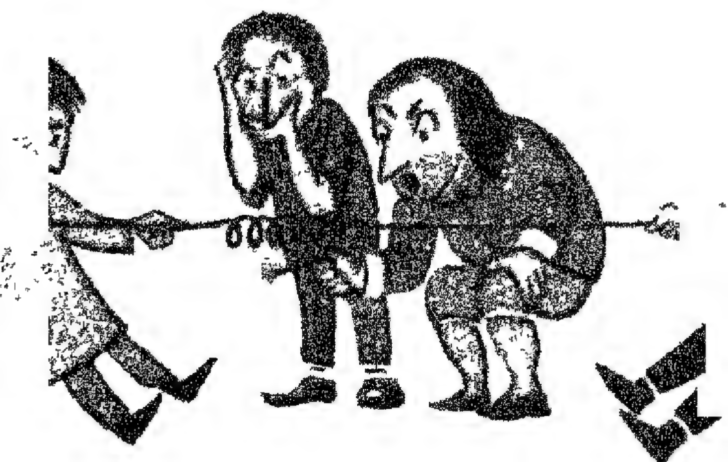
आज निकिल एलॉयों की संख्या 3000 से भी ऊपर पहुंच चुकी है। उदाहरणतया, संक्षारणरोधक मिश्रधातुओं में मोनेल धातु के साथ-साथ हस्टेलॉइ द्वारा के एलॉयों का सफलतापूर्वक इस्तेमाल किया जा रहा है। बिजली के हीटरों तथा वैद्युत प्रतिरोधक भट्ठियों में निक्रोमियम कुंडलियाँ प्रयुक्त की जा रही हैं; नेइजिल्बेर का विभिन्न रूपों तथा उपकरणों में प्रयोग हो रहा है, इन्वार, जो एक प्रसार का अतिनिम्न गुणांक वाला एलॉय है (0° C से 100° C तक गर्म करने पर इसका आयतन केवल 1 : 10 लाख बढ़ता है), विभिन्न मानकों के निर्माण में काम आ रहा है। जहां धातु को कांच में जोड़ा जाता है (प्रीटिंग, बिजली के बल्ब आदि) वहां महंगी धातु प्लेटिनम की जगह प्लेटिनाइट इस्तेमाल किया जा रहा है (इस धातु के तापीय प्रसार का गुणांक एक सा ही है जैसा कांच और प्लेटिनम का), लवीनवार एलॉय एलिनवार स्प्रिंगों में, विशेष रूप से घड़ियों के स्प्रिंगों में बहुत काम का सिद्ध हो रहा है; पर्मलॉय तथा अन्य मिश्रधातुओं में उत्तम चुंबकीय गुण होते हैं। विशेष तापयांत्रिक प्रक्रिया के बाद पर्मालॉय की चुंबकशीलता बहुत बढ़ जाती है, कमजोर चुंबकीय क्षेत्रों में भी वह बड़ी आसानी से चुंबकीय और अचुंबकीय हो जाता है। इस ऐलॉय का प्रयोग टेलीफोन तथा रेडियो तकनीक में किया जाता है। ताप-वैद्युत युग्मों का निर्माण क्रोमेल तथा एलूमेल से किया जाता है।

छठे दशक के अंत में सोवियत वैज्ञानिकों ने एक नया ध्वनिक ऐलॉय बनाया, जिसका नाम निकोसी रखा गया। यह नाम इस ऐलॉय में उपस्थित तीन धातुओं के नाम के पहले अक्षर के आधार पर रखा गया–94% निकिल, 4% कोबाल्ट तथा 2% सिलिकन। परीक्षणों से यह पता चला है कि शक्तिशाली पराध्वनि स्रोतों के निर्माण में निकोसी एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

परंतु वैज्ञानिक तथा औद्योगिक जगत् ने सबसे ज्यादा दिलचस्पी एक अन्य ऐलॉय निटिनोल में दिखाई। इस ऐलॉय में निकिल (55%) के साथ टाइटेनियम मिलाया गया था। इसका निर्माण हमारी शताब्दी के छठे दशक के आरंभ में अमरीका

को एक प्रयोगशाला में किया गया परन्तु इसके अपने गुण [illegible]
काफी हल्का, मजबूत, तन्य तथा संक्षारणरोधी होने के कारण इस [illegible]
ऐलॉय समझा जाता था, इतना ज्यादा नहीं। परन्तु [illegible] ने
विभिन्न प्रयोग जारी रखे। एक प्रयोग के दौरान इस ऐलॉय ने एक और
दिखाई—यह अपना अतीत याद रखता था। यह प्रयोग इस प्रकार था
प्रक्रिया के बाद एक निटिनोल कुंडली को 150°C तक गरम करके
गया और फिर इसके एक सिरे पर वजन लटका दिया गया। कुंडली
तार में परिवर्तित हो गई। चमत्कार तब हुआ जब इसको गरम करने
तक) देखते-ही-देखते तार कुंडली में बदल गया।

प्रयोग बार-बार दोहराया गया था, हर बार ऐलॉय का जटिल-[illegible]
दिए गए, परंतु उसकी 'स्मरणशक्ति' पर इसका कोई असर नहीं पड़ा। [illegible]
रूप में बदलता रहा। उदाहरणतया, तार को इस प्रकार मोड़ा गया कि वह



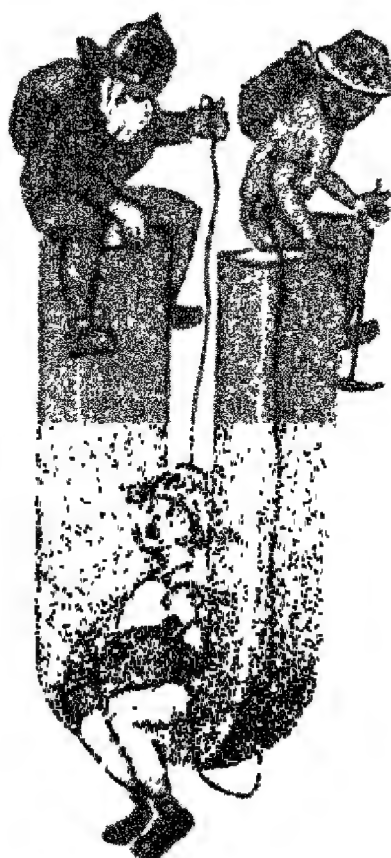
शब्द का रूप ले ले। इसके बाद उसे गरम करके ठंडा किया गया औ
बुरी तरह से मरोड़ दिया गया। जैसे ही इस तार को विद्युत आवेश
किया गया, ऐलॉय का नाम फिर सामने आ गया।

इंजीनियरों ने निटिनोल के उपयोग के बहुत सुझाव दिए हैं।
के अनुसार निटिनोल से ऐसी संरचनाओं के रिवेट बनाए जा सकते हैं
एक तरफ से पहुंचा जा सकता है। इस कार्य में धातु को एक सा
का आकार 'याद' रखने का काम सौंपा जाता है। फिर इसके काम
को गोल खूंटी में परिवर्तित करके निम्न ताप पर दरार में घुसा देते हैं

रिवट के सिर को हल्का-सा गरम किया जाए तो उसे याद आ जाता है कि दूसरी तरफ से वह मोटा था। इस तरह से रिवट पुर्जों को हमेशा के लिए जोड़ देता है।

अंतरिक्ष अनुसंधान में व्यस्त एक अमरीकी फ़र्म ने निटिनॉल के एक एंटेना का प्रदर्शन किया है जिसे पृथ्वी के कृत्रिम उपग्रहों पर लगाया जा सकता है। एक गोले में कसा तथा विशेष रूप में लिपटा यह एंटेना उपग्रह पर ज्यादा जगह नहीं घेरेगा, परन्तु जैसे ही उपग्रह अंतरिक्ष में पहुंचेगा यह एंटेना सूर्य की किरणों से गरम होकर आवश्यक रूप ले लेगा। इसी सिद्धान्त पर एक रेडियोटेलीस्कोप बनाने का सुझाव मिला है जिसके एंटेना का व्यास एक किलोमीटर से भी ज्यादा होगा।

निकिल धातुओं की संक्षारण से रक्षा करता है और उनकी बनी चीजों को आकर्षक रूप भी देता है। पतीलों और चाय की केतलियों आदि की चमक निकिल की ही करामात है। घर के काम की अन्य सारी चीजों पर निकिल की हल्की पालिश चढ़ी रहती है।



पालिश के लिए निकिल इस्तेमाल करने का सर्वप्रथम प्रयास 1842 में एक जर्मन वैज्ञानिक बटगर ने किया, परंतु वे असफल रहे। इसका कारण यह था कि उन दिनों जो निकिल उपलब्ध था उसमें अशुद्धियां होती थीं, जो विद्युत अपघटन में बाधा डालती थीं। परन्तु अब विद्युत-अपघटन तकनीक में बहुत ज्यादा उन्नति हो चुकी है और आज निकिल की बहुत पतली परत लोहे की संक्षारण से सफलतापूर्वक रक्षा कर रही है जिसके परिणामस्वरूप लोहे की विशाल मात्रा की बचत हो रही है।

निकिल वाले सिक्कों का चलन अब फ्रान्स में भी सामयिक सिद्ध हो रहा है। हाल ही में फ्रांस में 5 फ्रैंक का एक नया सिक्का चलाया गया है। अन्य सिक्कों की तुलना में इसकी संरचना विचित्र है कि सिक्का एक सैंडविच की तरह है अर्थात् कई तह वाला है। इसका मध्य भाग अलौहचुंबकीय जर्मन सिल्वर का बना है तथा बाहरी परतें निकिल की हैं। स्वचालित मशीनों के मालिकों को अब किसी बात का डर नहीं है : नए सिक्के में ऐसे विद्युत चुंबकीय गुण हैं कि कोई भी जाली सिक्का इसकी जगह नहीं रखा जा सकता।

वैज्ञानिकों की बहुत पहले से ही निकिल के उत्प्रेरक गुणों पर नजर लगी हुई थी। पिछली शताब्दी के नौवें दशक में दो फ्रेंच रसायनज्ञ साबातिए तथा सेनडेरेन्स द्रव तेल से 'दृढ़' वसा प्राप्त करने की समस्या में काफी सोच रहे थे। उन्होंने यह कहा कि इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए तेल का एक अणु हाइड्रोजन अणुओं की निश्चित संख्या के साथ मिलाना चाहिए। परन्तु एक गड़बड़ी थी : उन्होंने यह बात कह तो दी थी पर इसे करके दिखाना असम्भव लग रहा था। शुरू में उन्होंने हाइड्रोजन को तेल में से गुजारकर देखा परन्तु गैस ने तेल के साथ कोई प्रतिक्रिया नहीं की। अब उन्होंने विभिन्न चीजें मिलाकर ऐसा करने की कोशिश की, परंतु हर बार असफलता मिली। परन्तु जैसे ही उन्होंने निकिल का थोड़ा-सा पाउडर उत्प्रेरक के रूप में इस्तेमाल किया, उनका काम बन गया। इस प्रकार जो 'दृढ़' वसा प्राप्त हुई उसका उपयोग मारगरीन के उत्पादन में किया गया। आज रसायन की उत्प्रेरक प्रक्रियाओं में निकिल को एक मुख्य भूमिका प्राप्त है।

निकिल के दूसरे यौगिकों में निकिल ऑक्साइड महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। इसका उपयोग निकिल-लौह क्षारीय बैटरियों के निर्माण में किया जाता है जिसका आविष्कार प्रसिद्ध अमरीकी ऐडिसोन ने किया। विद्युतवाहक बल में ये बैटरिया लेड बैटरियों से कुछ निम्न होती है, परंतु कुछ बातों में ये उनसे श्रेष्ठ भी होती है—इनका वजन कम होता है, ज्यादा अर्से तक कार्ययोग्य रहती हैं तथा इनका प्रयोग भी सरल होता है।

आवर्त सारणी में निकिल लौह तथा कोबाल्ट का साथी है। ये तत्त्व एक-दूसरे से काफी मिलते-जुलते होने के कारण एक त्रिक बनाते है। विचित्र बात है कि वर्तमान समय तक ज्ञात तत्त्वों में से लौह त्रिक के केवल ये तीन तत्त्व और विरल धातु गाडोलीन साधारण परिस्थितियों में लौहचुंबकीय गुण रखते हैं। यह 'कुनबापरस्ती' धातुविज्ञानिकों को बहुत परेशान कर रही है। निकिल से कोबाल्ट अलग करना बहुत कठिन काम है। एक और भी पड़ोसी है—ताम्र। यह तत्त्व भी इससे आसानी से जुदा नहीं होना चाहता। प्रकृति में कोबाल्ट तथा ताम्र निकिल

के साथ ही मिलते हैं। इन धातुओं को एक-दूसरे से अलग करना काफी जटिल तथा लंबा काम है। यही कारण है कि औद्योगिक धातुओं में निकिल सबसे महंगा तथा विरल समझा जाता है।

भू-पर्पटी में निकिल की मात्रा 0.01 % से कम है। आप कहेंगे कि यह तो बहुत कम है। जी नहीं, ऐसी बात नहीं है। कल्पना करें कि किसी ने हमारे ग्रह पर निकिल की पॉलिश करने की बात सोची। क्या इसके भंडार इस काम के लिए काफी होंगे? साधारण-सी गणना से यह पता चलता है कि केवल काफी ही नहीं रहेंगे बल्कि उनसे अतिरिक्त भी बच जाएगा कि ऐसे हजारों ग्रहों पर पालिश करने के लिए पर्याप्त रहेगा। भू-पर्पटी केवल एक आवरण ही तो है। इस आवरण के नीचे घनी सतहें हैं। वैज्ञानिकों का मत है कि इन सतहों के अंदर निकिल की मात्रा और भी ज्यादा है।

आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि कई बार भूविज्ञानी खनिजों की खोज में कुत्तों की भी सहायता लेते हैं। कई सालों से सोवियत विज्ञान अकादमी के एक भूविज्ञान संस्थान में प्रशिक्षित कुत्तों को अयस्क ढूंढने का काम सिखा रहे हैं। अलग-अलग किस्मों के चार पांच कुत्ते मीटरों की गहराई पर छिपे अयस्कों को बड़ी तेजी से सूंघ लेते हैं (इनमें निकिल भी शामिल है)।

कोई पाठक यह कह सकता है कि बीसवीं शताब्दी में ऐसा तरीका अपनाने की बात बड़ी अजीब भी लगती है। वह गलती पर है। हम यही कहेंगे कि किसी नतीजे पर पहुंचने में जल्दी न करें। बात यह है कि उत्तरी इलाके इतने दलदली हैं कि वहां खनिज ढूंढने का काम महंगा होने के साथ-साथ मुश्किल भी है। परंतु जिस जगह मनुष्य का पहुंचना असंभव है वहां कुत्ते आसानी से पहुंच जाते हैं। इसके साथ-साथ भौतिक उपकरणों के मुकाबले ये 'जीवन' उपकरण दस गुना ज्यादा जगह का सर्वेक्षण कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त कुत्तों में एक और भी खूबी होती है—खनिजों के नमूनों के नाम बताने 'देखने' में उन्हें केवल कुछ सेकेंड लगते हैं जबकि भूविज्ञानी को इस काम के लिए कई दिन चाहिए।

कनाडा के विशेषज्ञों ने सोवियत वैज्ञानिकों के तजुर्बे का लाभ उठाया। वेन्कुवेर शहर के पुलिस विभाग ने तीन जर्मन कुत्ते चुने और उन्हें यह 'धंधा' सिखाया। अनुभवी भूविज्ञानियों के नेतृत्व में इन कुत्तों ने छोटी-सी अवधि में निकिल तथा ताम्र के कई निक्षेप ढूंढ़ डाले।

निकिल अयस्कों के खनन में पूंजीपति देशों में कनाडा का प्रथम स्थान है। निकिल अयस्कों के मुख्य निक्षेप अण्टारियो झील के पास स्थित हैं। कुछ वर्ष पहले यहां इस जमाने का सबसे बड़ा औद्योगिक विस्फोट किया गया। इसकी

नयागी मे 17 हजार यान्त्री सुरंगें किए गए जिनकी कुल लंबाई कई दर्जन किलोमीटर थी। इन सुरंगों में इतना बारूद भरा गया जितना रेल के 30 डिब्बो मे आ सकता था। कनाडा के लोगो ने इसका नाम 'मैमथ विस्फोट' रखा। इस विस्फोट से 15 लाख टन पहाड़ी चट्टान तथा 35 लाख टन निकिल अयस्क हवा मे बिखर गया। हाल ही में कनाडा की मैनीटोबा झील के पास निकिल के विशाल निक्षेप मिले हैं। इसका पता पृथ्वी के एक कृत्रिम उपग्रह पर रखे उपकरणों ने लगाया है।



1969 के अंत में लंदन के शेयर बाजार में बड़ा तहलका मचा आस्ट्रेलिया से मिली खबरों के आधार पर 'पोसिडान' कंपनी के नि के भाव कभी बहुत ऊंचे जा रहे थे और कभी बहुत नीचे। यह कंप की गई थी जब आस्ट्रेलिया के समुद्री तट पर रेत से काफी निकिल खुदाई के परिणाम भी हर खबर के मिलते ही शेयरों के भाव घट बाद में सूचना मिली कि पहली खबर ठीक नहीं थी। गलती से निकिल 10 गुना ज्यादा बता दी गई थी। बस फिर क्या था, कुछ मिनटों के भाव बिलकुल गिर गए। अब फिर एक नई खबर आई . पहली थी, निकिल की मात्रा बहुत ज्यादा है। शेयरों के भाव तुरंत चढ़ गए किसी ने इस गडबड़ी से जरूर फायदा उठाया होगा और खूब पैसे ब अब निकिल का शेयर बाजार लंदन से आस्ट्रेलिया आ गया है जहां दो कंपनियों मे निकिल अयस्कों की खुदाई के अधिकार पर आपस में हुई है।

पृथ्वी पर निकिल केवल अन्य तत्त्वों के साथ मिलता है, परंतु आकाशीय पिडो में यह शुद्ध रूप से विद्यमान है। हमारे ग्रह को अंतरि निकिल मिलता है। सोवियत वैज्ञानिकों की गणना के अनुसार हर के महासागर के प्रति वर्ग किलोमीटर क्षेत्र को उल्कापिंडों के रूप में तक निकिल मिलता है। यह संख्या बहुत छोटी लगती है। परंतु पृथ्वी

ो है, आकार कितना बड़ा है, अर्थात् माल काफी जमा हो
उपग्रहों से प्राप्त पिछले आंकड़ों से यह पता चला है कि पृथ्वी
ाल 10 लाख टन से अधिक अंतर्ग्रहीय धूल चाट जाता है
श में वह 'धूल की मात्रा' सैकड़ों गुना बढ़ जाती है)।



ल भंडारों की आकाशीय पिंडों के माल से पूर्ति की योजनाएं
अंतर्ग्रहीय अंतरिक्ष में हजारों छोटे-छोटे ग्रह घूम रहे हैं जिन्हें
ये मुख्यतः लोहे तथा निकिल के बने होते हैं। इनमें से कुछ
वी के कक्षक से ज्यादा दूर नहीं होते हैं और कई बार तो
के बहुत ही समीप होते हैं। कुछ वैज्ञानिकों के विचार से
ा ये ऐस्टराइड पृथ्वी के पास वाले कक्षक में लाए जा सकते
ल पर निकिल तथा लोहे का उत्पादन शुरू किया जा सकता
अनुसार ऐस्टराइड पर विशेष स्वचालित उपकरण भेजे जाएंगे
सहायता से ऐस्टराइड को प्रगलित कर लाखों टन वजन की
क्षक में ले आएंगे और फिर केवल पृथ्वी पर धातु लाने का
ा। परंतु कैसे? एक प्रस्ताव यह है कि धातु को पहले कक्षक
या जाए, फिर इसमें गैस गुजारी जाए और इस प्रकार प्राप्त
समुद्र में गिरा दिए जाएं। वहां वे पानी में तब तक तैरते
ाल के जहाज उन्हें उठा नहीं लेंगे। ये जहाज उन्हें किनारे

घर ले आएंगे और वहां से ये तत्त्व [illegible] में [illegible] जाएगा। जिस हिसाब से आज निकिल की खपत [illegible], अनुमान है कि, उस हिसाब से एक घन किलोमीटर [illegible] के लगभग [illegible] साल [illegible] पृथ्वी की निकिल की जरूरत पूरी हो सकेगी।

आप इन्हें बड़ी साहसी योजनाएं [illegible] कहेंगे। परन्तु यह न भूलें कि कुछ साल पहले चंद्रमा पर मानव का पहुंचना भी एक असंभव बात समझी जाती थी।

निकिल की कहानी खत्म होने जा रही है। इस बेचारी धातु को यह नाम दुष्ट आत्मा के सम्मान में दिया गया। परन्तु हम आशा करते हैं कि एक दिन सच्चाई की जीत होगी और तब इस धातु को 'दयावान् जादूगर' के नाम से पुकारा जाएगा। चलिए, छोड़िए, नाम में तो कोई खास बात नहीं होती है। जो सच्चाई है, वह सबके सामने है। निकिल मानव-जाति की बहुत सेवा कर रहा है।



बहुत प्राचीन और यशस्वी

पुरातन यूराल का खजाना--सिनांथ्रोपों की विरासत-- 'अद्भुत सात' का गुट--पाषाण युग--पिरामिड ख्यूफू के निर्माण-स्थल पर--स्त्री के लिए सर्वोत्तम उपहार--मिस्र के पुजारी कीमियागर थे--झाड़-फूंक द्वारा नासूर का इलाज--आचिलस की अजेया ढाल--कूड़े में दुनिया का एक अचंभा--मुख्य उद्देश्य पैसा कमाना है--बकरी के दूध का पनीर ले लो--आंखों के नीचे नीले दाग--उत्पादन पर--आइज़क कैथेड्रल का गुंबद--सफल व्यापार-यात्रा--गिरजाघरों से घंटे उतरवाए गए--एक चालाकी--ताम्र की वजह से दंग रह जाते हैं--विचित्र नीलामी--ताम्र अयस्क की चतुराई--नीले रंग का रक्त--कानों की रक्षा करनी चाहिए--शार्कनाशक औषधि--बौने काम कर रहे हैं--नीलपुष्प जिंक को प्राथमिकता देता है

पुरातन यूराल की भूमि अपने गर्भ में सुंदर-से-सुंदर रत्न छिपाए बैठी है। परंतु जितनी कहानियां तथा किंवदंतियां मैलेकाइट के बारे में प्रसिद्ध हैं उतनी शायद किसी दूसरे पत्थर की नहीं हैं। प्रसिद्ध रूसी कथाकार बाझोव ने अपनी पुस्तक 'यूराल की लोककथाएं' में इस पत्थर के गुण गाए हैं। हरे रंग का यह अद्भुत पत्थर कारीगरों के हाथ में पहुंचकर एक बेमिसाल चीज में बदलता रहा है। सदियों से रूसी तथा विदेशी व्यापारी बड़े चाव से इसे दूसरे देशों में ले जाते रहे हैं।

शायद सब लोग यह नहीं जानते कि मैलेकाइट ताम्र का एक खनिज है। ताम्र वह धातु है जिसके साथ सभ्यता का इतिहास हमेशा जुड़ा रहा है।

आपको याद तो होगा कि अकादमीशियन फर्समान ने बताया था कि अगर पृथ्वी पर लोहा न होता तो मनुष्य का कितना बुरा हाल होता। और अगर कल पृथ्वी पर ताम्र खत्म हो जाए, तब क्या होगा? लोहे की तरह ताम्र भी तो कदम-कदम

पर इस्तमाल किया जा रहा है धम
भी लोहे से कम महत्त्वपूर्ण नहीं है।

विश्व में धातुओं के उत्पादन तथा उनकी खपत में लोहे तथा ऐलुमिनियम के बाद ताम्र का स्थान है। संभव है कि आज का व्यक्ति ताम्र के बिना काम चला सकता है क्योंकि बीसवीं शताब्दी ने मानव जाति को बहुत सारी धातुएं दे दी हैं जिनमें विविध प्रकार के गुण हैं। परंतु हमारे पूर्वजों का ताम्र के बिना बुरा हाल होता क्योंकि उनके लिए ताम्र ही एकमात्र धातु थी जो सरलता से उपलब्ध थी तथा जिससे वे अपने सीधे-सादे औजार और घर की छोटी-मोटी चीजें बनाते थे। हालांकि उनके पास इस काम के लिए एक और चीज भी थी–पत्थर। परंतु उस वक्त मानव यह समझ गया था कि पत्थर धातु का मुकाब सिनाथ्रोपो तथा एण्डरथलों से विरासत में मिली पत्थर की नहीं रही थीं।

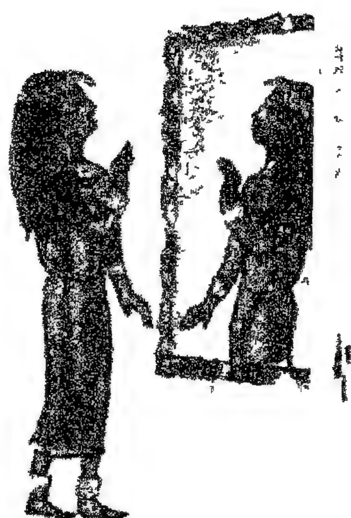


स्वर्ण, रजत, लोहे, टिन, लेड तथा पारद के साथ मिल धातुओं' का गुट बनाता है जिनसे मनुष्य अतिप्राचीन काल र है कि ताम्र के साथ मनुष्य लगभग दस सहस्रों से परिचि यह परिचय साधारण-सा था तो 2-3 सहस्रों बाद ताम्र अ का अंग बन गया। उन्होंने पत्थर की जगह ताम्र अपना बागडोर ताम्र युग को सौंप दी।

क्या कारण है कि मनुष्य के हाथों में आई सर्वप्रथ धातु के भाग्य में मानवजाति के विकास में इतनी महत्त्वपूर्ण लिखा था?

सात प्रागैतिहासिक धातुओं में से केवल तीन धातुएं– पृथ्वी पर प्राकृतिक रूप में पाई जाती हैं अर्थात् डलों के रू

आकार बहुत ही बड़ा होता है। अब तक मिले सबसे बड़े ताम्र के ढेले का वजन 420 टन था। इसके पहले तांबा, स्वर्ण तथा रजत इतनी कम मात्रा में मिलते थे कि वे इनके विस्तृत प्रयोग की बात ही नहीं सोच पाते। लेकिन ताम्र प्रकृति में विपुल मात्रा में मिलता है। इसके अलावा यह अति नरम होता है तथा इसे काम में लाना भी बहुत आसान होता है। यही वजह थी कि मनुष्य ने औजारों तथा अन्य चीजों के निर्माण के लिए ताम्र का ही चुनाव किया। हालांकि ये औजार पत्थर के औजारों जितने मजबूत नहीं थे परन्तु इनकी उम्र अधिक लम्बी थी क्योंकि औजारों को फिर से गलाकर फिर से ढाला जा सकता था और उन्हें बार-बार इस्तेमाल लायक बनाया जा सकता था।



ईसा से तीन हजार वर्ष पूर्व मिस्र में कियॉप्स स्तूप का निर्माण हुआ जो दुनिया के सात अजूबों में एक गिना जाता है। फिराऊन की इस विशाल कब्र के निर्माण में 23 लाख शिलाखंडों का इस्तेमाल किया गया था तथा हर शिला का वजन 2.5 टन था। इन शिलाखंडों की कटाई तथा सजावट में ताम्र औजारों का प्रयोग किया गया था।

धीरे-धीरे मनुष्य यह सीख गया कि अयस्क से ताम्र कैसे प्राप्त किया जाता है। साइप्रस में मिले ताम्र अयस्क विशेष रूप से प्रसिद्ध हुए। ऐसा समझा जाता है कि इस धातु का लातीनी नाम कूप्रम (Cuprum) इसी द्वीप के नाम पर रखा गया है। रूसी में ताम्र को 'मेद' कहते हैं। कुछ शोधकर्ताओं का मत है कि यह नाम शब्द 'समीता' से लिया गया है। रूस के यूरोपीय भाग में बसी प्राचीन जातियां हर धातु को इस शब्द से पुकारती थीं।

ताम्र के इतिहास की अगली महत्त्वपूर्ण घटना थी—जिंक के साथ इसके ऐलॉय—कांसे का निर्माण। ताम्र-युग के पीछे कांस्य-युग आया जिसके दौरान विश्व में कला का बहुत विकास हुआ। परन्तु बहुत अर्से तक कांसे से केवल ठाट-बाट की चीजें और गहने बनाए जाते रहे। अगर प्राचीन मिस्र में विज्ञापन की कला विकसित होती तो व्यापारी लोग हर चौराहे पर पपीरसी कागजों के पोस्टर टंगवा

देते जिन पर यह लिखा होता कि कांसे का दर्पण स्त्री के लिए सर्वोत्तम उपहार है।

शब्द 'ब्रांज' (Bronze) इटली के एक छोटे-से नगर तथा बंदरगाह ब्रीण्डीसी से लिया गया है। यह शहर कांसे की बनी चीजों के लिए हमेशा प्रसिद्ध रहा है। यहां की चीजों को लातीनी भाषा में "Es Brundusium" कहते हैं जिसका मतलब होता है—'ब्रीण्डीसी का'। इसी पर आगे चलकर ऐलॉय का नाम ब्रांज पड़ गया।

मिस्र के पुजारी शायद विश्व के सर्वप्रथम कीमियागर थे। फीवा में मिली कब्रों की खुदाई के दौरान उस जमाने की कुछ हस्तलिपियां हाथ लगी हैं जिनमें ताम्र से स्वर्ण बनाने के रहस्य लिखे हुए हैं। लिखा है कि ताम्र मे जैसे ही जिंक मिलाया जाता है वह तुरंत स्वर्ण मे परिवर्तित हो जाता है (इन तत्त्वों का ऐलॉय—पीतल वास्तव में स्वर्ण से मिलता-जुलता है)। यह जरूर सच था कि इस स्वर्ण में एक खराबी थी : उसकी सतह पर हरे रंग के 'नासूर' पैदा हो जाते थे (स्वर्ण के साथ ऐसा नहीं होता है।) पुजारियों का कथन था कि अगर सच्चे दिल से प्रार्थना



की जाए और [illegible] आज भी इन नमूनों को दूर किया जा सकता था।

ताम्र और कांसे [illegible] असीरिया, रोम तथा यूनान के [illegible] में अग्नि तथा [illegible] बताया है कि किस प्रकार इन [illegible] ताम्र की [illegible] अजीब [illegible] का शस्त्र।

[illegible] हैं। उसी में पांच [illegible] पूर्व [illegible] की [illegible] उस जमाने का [illegible] थी। उदाहरणस्वरूप, इसी से तीन शताब्दी पूर्व [illegible] की 32 मीटर [illegible] के [illegible] तरह इस प्रतिमा [illegible] जाती थी। [illegible] जाता है कि यह प्रतिमा [illegible] से गुजर जाते थे। [illegible] आधी शताब्दी में [illegible] धातु के रूप में [illegible] दिया गया। [illegible] आशा है कि [illegible] इस प्रतिमा के पुनरुद्धार की [illegible] बनाई है, परन्तु इस बार यह [illegible] से बनाई जाएगी और इसके सिर [illegible] जाएगा।

जापानी लोग कांसे की प्रतिमाएं बनाने के काम में बहुत निपुण रहे हैं। आठवीं शताब्दी में [illegible] बौद्ध की एक [illegible] प्रतिमा लगाई गई जिसका वजन 100 टन से भी ज्यादा था। इस आकार की मूर्ति बनाना बहुत हुनर का काम था।

हमारे दिनों तक जो प्राचीन कांस्य मूर्तियां सही-सलामत रही हैं वे कई शताब्दियां पूर्व बनाई गई थीं [illegible], चक्र फेंकने वाले और [illegible] की प्रतिमाएं, वे स्पष्ट रूप से बताते हैं कि प्राचीन युग में कांसा कला में कितनी [illegible] हासिल था। आगे भी यह [illegible] मूर्तिकारों की मुख्य सामग्री बना रहा। आपने लेनिनग्राद में स्थापित जार पीटर प्रथम की प्रतिमा के बारे में अवश्य सुना होगा जो 'ताम्र अश्वारोही' के नाम से सारी दुनिया में प्रसिद्ध है। इस [illegible] प्रतिमा के निर्माणकर्ता फ्रेंच मूर्तिकार

फाल्काने थ

प्राचीन काल मे ताम्र और उसके यौगिकों के अलावा इस तत्त्व के और भी कई यौगिक ज्ञात थे। आज स्पेक्ट्रमदर्शी यंत्रों से जब कुछ प्राचीन भित्तिचित्रों का रासायनिक विश्लेषण किया गया तो पता चला कि इन चित्रों में इस्तेमाल हुआ नीला पेंट कॉपर सिलिकेट है। प्राचीन काल में इस पेंट का नाम 'यार-मेद्यान्का' अर्थात् वर्डीगिस था। इसके बनाने का नुस्खा बड़ा सरल था : "बकरी के दूध का पनीर लेकर उसमें शहद मिला दें और एक ताम्र के बर्तन में रखकर ताम्र के ही ढक्कन से ढक दें। अब गोंद से इस ढक्कन को अच्छी तरह से चिपका दें और फिर दो सप्ताह के लिए मट्ठी पर रख दें। आपका यार-मेद्यान्का तैयार है।' कितना सरल तरीका है! रोमन सम्राट टाइटस के महल के स्नानघर की दीवारों तथा पाम्पेई के भित्तिचित्रों मे भी वर्डिग्रिस मिला था।

मिस्र के अलेक्सान्द्रिया शहर के व्यापारी जब भी कहीं माल बेचने जाते थे तो उनके 'हरे ताम्र' की बहुत बिक्री होती थी। उस जमाने म औरतें अपनी आंखो के नीचे हरे रंग के गोले बनाया करती थीं। और जैसाकि कहा जाता है कि इतिहास दोहरता है, आज यह रंग फिर स्त्रियों के शृंगार का अंग बन गया है।

रूस मे ताम्र की खानें ईसा से लगभग २ हजार वर्ष पूर्व मिलनी शुरू हो गई। ट्रांसकाकेशस, साइबेरिया तथा अल्ताई क्षेत्र में खुदाई के दौरान ताम्र के बने चाकू, तीरो की नोंके, कांसे की बनी ढालें, हेल्मेट (टोप) तथा अन्य कई चीजे मिली है। अनुमान लगाया जाता है कि ये ईसा से ४-५ शताब्दी पूर्व के समय की हैं। परंतु देश मे ताम्र के औद्योगिक प्रगलन का प्रथम प्रयास केवल तेरहवीं शताब्दी के आरभ मे किया गया जब त्सील्मा नदी (रूस के यूरोपीय भाग के उत्तरी क्षेत्र में) के पास ताम्र अयस्क मिलने लगे (आज यहां आर्खांगेल्स्क शहर बसा हुआ है)।

सोलहवी शताब्दी के आरंभ में मास्को के कुछ शस्त्र-उद्योगों में, जैसे 'तोप-उत्पादन घर', 'तोप यार्ड' आदि में विभिन्न कैलीबरों वाले कांसे की तोपो का निर्माण शुरू हो चुका था। रूसी कारीगर इस काम में बहुत निपुण हो चुके थे। 40 टन वजन वाली 'जार-तोप' आज भी एक अद्वितीय चीज मानी जाती है। इसे 1586 मे रूसी कारीगर आन्द्रेइ चोखोव ने कांसे से बनाया था। तकनीक की एक दूसरी मिसाल 'जार-घंटा' है जिसे मातोरिन परिवार के दो सदस्यों—पिता और पुत्र ने मिलकर 1735 मे बनाया था। उसका वजन 200 टन से ज्यादा है। यह घंटा महान् इवान घंटाघर में लगाया गया था। सोलहवीं शताब्दी की वास्तुकला

के इस औद्योगिक [illegible] गया था। [illegible] हुआ है। [illegible] कथानक [illegible] करने का [illegible] बाद में [illegible] धीरे-धीरे [illegible]।

ताम्बे की [illegible] इसके अध्ययन [illegible] मास्को भेजा गया। इसकी यात्रा सफल रही क्योंकि उस इलाके में तांबा अवश्य मिल गया। 1675 में लिखे गए दस्तावेज आज भी सुरक्षित रखे हुए हैं जिसमें यह बताया गया है कि जार ने ओलोनेत्स्क के [illegible] तथा रास्ता साफ कराने का आदेश दिया। इस रास्ते से [illegible] 1670 में कज़ान के गवर्नर ने जार को इस बात की सूचना भेजी कि [illegible] में तांबे के बहुत सारे अवशेष मिले हैं और [illegible] के लिए कारखाना लगाया गया है।

इतना सब कुछ होते हुए भी देश में तांबे की कमी थी। स्वीडन के साथ युद्ध के दौरान रूस को तांबे की कमी और भी ज्यादा महसूस हुई (विशेष बात यह है कि युद्ध के दिनों में भी रूस स्वीडन से तांबा और लोहा खरीद रहा था)।

नार्वा के पास हुई लड़ाई में स्वीडिश सेना ने रूसी सेना को बहुत क्षति पहुंचाई। अधिकारियों ने तोपों का महत्त्व समझाया तब जार पीटर ने तांबे का इस्तेमाल बढ़ाने के आदेश दिए। इसके अलावा उन्होंने सब चर्चों से घंटे तथा अन्य चीजों को ले लेने का हुक्म दिया। अधिकारियों ने इसका विरोध किया, परन्तु जार ने इनकी कोई परवाह नहीं की और चर्च का सारा कांसा युद्ध सामग्री के निर्माण में इस्तेमाल होने लगा।

पोल्टावा युद्ध पीटर प्रथम की बुद्धिमान कार्रवाइयों का परिणाम था। इसमें रूसियों ने स्वीडिश सेना को पूरी तरह से पराजित किया। स्वीडिश लोगों के पास केवल चार तोपें थीं जबकि रूसियों के पास 72। इस विजय ने आगे चलकर रूस के आर्थिक विकास में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

पोल्टावा विजय के बाद जार ने एक और नया आदेश जारी किया। देश के आंतरिक व्यापार के विकास के लिए सस्ते सिक्कों की जरूरत थी जो [illegible]

सिक्कों की जगह ले सके, जो एक बहुमूल्य धातु होने के कारण केवल विदेशों के साथ व्यापार में इस्तेमाल की जाती थी। इस बार फिर उन्हीं के नए काम आए। परंतु अब उनसे सोने नहीं चांदी के सिक्के बनाए गए।

कुछ समय बाद 1763 में अल्ताई में एक नई टकसाल खोली गई - कोलीवान टकसाल। यहां 1, 5 और 10 कोपेक के सिक्के ढाले गए। इन सिक्कों के किनारों पर निम्न शब्द अंकित थे 'साइबेरियन सिक्का'। 1781 तक लगभग 10 लाख रूबल मूल्य के ऐसे सिक्के ढाले जा चुके थे।

आने वाले वर्षों में देश में ताम्र का उत्पादन लगातार बढ़ता रहा। यूराल तथा अल्ताई में दसियों ताम्र प्रगलन कारखाने खुल गए। उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में काकेशस तथा कजाखस्तान में भी ताम्र का प्रगलन शुरू हो गया।

इन्हीं दिनों सुदूर उत्तर (उन दिनों इस इलाके को येनिसेई स्टेट कहते थे) में भी ताम्र धात्विकी का काम शुरू हो गया। 1919 में प्रसिद्ध भूविज्ञानी नि. उरवान्त्सेव को नोरील्स्क में ताम्र प्रगलन भट्टी के अवशेष मिले। पता चला कि यह भट्टी 1872 में लगाई गई थी और इसका बड़ा दिलचस्प इतिहास है।

उस वक्त लोगों को इस बात की जानकारी हो गई थी कि तायमीर में ताम्र अयस्क उपस्थित हैं। परंतु निर्माण सामग्री, खासकर ईंटों की कीमत महंगी होने के कारण ताम्र उद्योग विकसित नहीं हो पा रहा था. 1863 में एक व्यापारी किरीयान सोत्नीकोव ने एक चालाकी खेली। उसने प्रांत के गवर्नर से दूदीनका कस्बे मे लकड़ी का एक चर्च बनाने की इजाजत मांगी। व्यापारी ने यह भी कह दिया कि इस काम मे सारा पैसा वह अपनी जेब से लगाएगा। स्वाभाविक था

कि गवर्नर इस धार्मिक काम के लिए मना नहीं कर सकता था। अतः व्यापारी को तुरन्त इजाज़त मिल गई। चालाकी की बात यह थी कि दुर्दानका में पहले से ही एक चर्च बना हुआ था और वह भी ईंटों का। परंतु गवर्नर को इस बात की जानकारी नहीं थी। बुद्धिमान व्यापारी ने जल्दी में लकड़ी का एक चर्च बनवा दिया और ईंटों के चर्च को तुड़वाकर उसकी 'धार्मिक' ईंटों से एक भट्ठी का निर्माण करवाया। शीघ्र ही उसने यहां ताम्र का प्रगलन शुरू करवा दिया। आज इस स्थान पर सोवियत संघ में अलौह धातुओं के प्रगलन का अतिविशाल आधुनिक कारखाना लगा हुआ है जिसका नाम नोरील्स्क धात्विक कारखाना है। यह द्वितीय विश्व युद्ध से कुछ समय पहले चालू हुआ था।

बीसवीं शताब्दी के आरंभ तक रूस के ताम्र उद्योग का लगभग 3/4 हिस्सा विदेशी पूंजीपतियों के अधिकार में था। 1913 में शुद्ध ताम्र का उत्पादन केवल 17 हजार टन था। देश की जरूरत को देखते हुए यह मात्रा बहुत ही थोड़ी थी।

गृहयुद्ध तथा एण्टेण्टे देशों के हस्तक्षेप (1918-1920) के दौरान सोवियत संघ में ताम्र का प्रगलन बंद-सा हो गया था। बहुत सारी ताम्र खानें शत्रुओं ने या तो नष्ट कर दीं या डुबो दीं। कारखाने ठप्प हो गए थे, क्योंकि काम के लिए न तो मजदूर थे, न माल और न ही ईंधन।

इस कठिन अवसर पर एक बहुत बड़े अंग्रेज व्यापारी लेसली उरक्वारट ने सोवियत सरकार के सामने सहायता का प्रस्ताव रखा। उसने कारावाश ताम्र खान के पुनरूद्धार का ठेका मांगा जो उन दिनों देश की सबसे समृद्ध ताम्र खान मानी जाती थी। परंतु उरक्वारट ने हिम्मत नहीं हारी। वह किसी भी कीमत पर यह ठेका हासिल करना चाहता था क्योंकि इस काम में कमाई-ही-कमाई थी। यह जानते हुए कि सोवियत भूमि में ताम्र के विपुल भंडार छिपे हुए हैं, उसने सोवियत सरकार के सामने एक नया प्रस्ताव रखा : 'मैं चाहता हूं कि मुझे किरगीजिया के मैदानी इलाके में बालखाश झील के आसपास खुदाई कराने की इजाजत दी जाए। आपको क्या फर्क पड़ता है? आप लोग इस जगह पर कम-से-कम 50 साल से पहले, और हो सकता है 100 साल से पहले खुदाई नहीं करने जा रहे हैं।'

सोवियत अधिकारी समझ गए थे कि उरक्वारट को ठेका देने का मतलब युवा सोवियत देश की जड़ उखड़वाना है। अंग्रेज व्यापारी को इजाजत देने की जगह सोवियत लोगों ने खुद यह काम शुरू कर दिया।

लेनिन का कहना था कि देश का विकास तभी होगा जब हर जगह बिजली पहुंच जाएगी। इस योजना को व्यावहारिक रूप देने के लिए (रूस का

विद्युतीकरण GOELRO नाम की बस्त और म माना म आवश्यकता थी 5 मई 1922 के दिन पन स्थापित कारखाने का नाम आज इसका नाम कीरोवग्रादस्क कारखाना है) ने ताम्र का पहला ढला ... इस ... सोवियत अलौह धात्विकी का जन्मदिन माना जा सकता है।

बालखाश की भी जल्दी ही बारी आ गई। 1928 में (... 80 या 100 साल बाद) यहा एक अभियान-दल भेजा गया। ... पहाड़ की तलहटी में ताम्र मिल गया। अंग्रेज ... इसी जगह पर ही तो खुदाई करवाना चाहता था। कुछ दिनों बाद सोवियत संघ की सर्वोच्च आर्थिक समिति के अध्यक्ष वा. कुइबिशेव ने ... पार्टी के ... अधिवेशन में भाषण देते समय प्रतिनिधियों को बताया कि 'देश में ताम्र अयस्क के नए निक्षेप मिले हैं जिनमें कोउन्रादस्के का ताम्र निक्षेप मुख्य स्थान रखता है।'

1932 में इस जगह पर बालखाश ताम्र कारखाने का निर्माण शुरू हो गया। यह काम मुश्किलों से भरा था। इलाका रेगिस्तानी तथा वियाबान था। 400 किलोमीटर का लंबा सफर तय करने का एकमात्र साधन ऊंट थे। माल ढोने का काम भी ऊंटों से ही लिया जाता था। परन्तु लोगों ने हिम्मत नहीं हारी। वे हर मुसीबत का सामना करते रहे और कारखाना पूरा करके ही छोड़ा। सन् 1938 मे बालखाश कारखाने से ताम्र मिलना शुरू हो गया।

प्रथम पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान तथा द्वितीय विश्व युद्ध के बाद सोवियत संघ मे बहुत सारे ताम्र कारखाने लगाए गए। ताम्र उद्योग आज सोवियत अलौह धात्विकी का एक मुख्य अंग है।

ताम्र की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि वह अति उत्तम विद्युत तथा तापचालक होता है। केवल एक और धातु है जिसमें ये गुण ताम्र से उच्च है और वह धातु रजत है। परंतु रजत पहले तो महंगा है और दूसरी बात यह है कि तकनीकी कार्यो में विस्तृत रूप से इस्तेमाल भी नहीं किया जा सकता। ताम्र की विद्युतचालकता लोहे से 5 गुना अधिक, ऐलुमिनियम से डेढ़ गुना, जिंक से 3 गुना और टाइटेनियम से 35 गुना अधिक है। यही कारण है कि इसे विद्युततकनीक की मुख्य धातु मानते हैं।

ट्रांसफार्मर में, कार के इंजन मे, टेलीविजन और रेडियो सेटों में, जटिलतम इलेक्ट्रानिक मशीनरी तथा धातु उद्योग की मशीनो में हम ताम्र लगा देखते हैं। ताम्र से रासायनिक उपकरण बनाए जाते हैं। चूंकि विस्फोट के समय स्टील चिंगारियां उत्पन्न करता है इसलिए आतिशबाजी तथा ज्वलनशील पदार्थों के साथ काम करने के लिए औजार ताम्र से बनाए जाते हैं।

ताम्र ऐलायों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है तथा इन्हें विभिन्न प्रकार के उद्योगों में प्रयुक्त किया जा रहा है। अगर आज से 30-40 साल पहले केवल ताम्र तथा टिन के एलॉय को ढाला जाता था तो आज ऐलुमिनियम, लेड, सिलिकन, मैगनीज, बेरिलियम, कैडमियम, क्रोमियम तथा जिर्कोनियम के साथ ताम्र के ऐलॉय को भी ढाला जाता है।

ऐलुमिनियम कांसे (ताम्र का एक ऐलॉय जिसमें ऐलुमिनियम की मात्रा लगभग 5% होती है) से सिक्के भी बनाए जाते हैं। रूस में ताम्र के सिक्कों का प्रचलन सत्रहवीं शताब्दी के मध्य में शुरू हुआ। इस घटना से मास्को में दंगे-फसाद शुरू हो गए (1662 में)। इतिहास में यह घटना 'ताम्र दंगे' के नाम से प्रसिद्ध है। दंगे-फसाद का कारण यह था कि जैसे ही रजत की जगह ताम्र के सिक्के चलाए गए, डबलरोटी तथा अन्य खाद्य-पदार्थों के भाव बढ़ गए। रूसी लोग वैसे भी पोलैंड तथा स्वीडन के साथ चल रहे लंबे युद्धों से बहुत परेशान थे। उधर फसल भी अच्छी नहीं हो रही थी तथा सरकार ने टैक्स बहुत बढ़ा दिए थे। अतः जैसे ही ताम्र के सिक्के बाजार में आए, लोगों के सब्र का बांध टूट गया और दंगे-फसाद शुरू हो गए। परन्तु जार ने उपद्रवियों का पूरी शक्ति के साथ दमन किया और उन्हें कड़ी सजाएं दीं। सैकड़ों बागी मौत के घाट उतार दिए गए, नदी में फेंक दिए गए, हजारों बागी जेल भेज दिए गए तथा हजार से अधिक साइबेरिया तथा आस्त्राखान भेज दिए गए।

अक्तूबर क्रांति के तुरंत बाद सोवियत सरकार ने अपने सिक्के ढलवाने शुरू करवा दिए। 1920 में खोरेज्म शहर (मध्य एशिया) में खोरेज्म सोवियत जनतंत्र के कमिश्नरों की समिति के आदेश पर 20, 25, 50, 100 तथा 500 रूबल के सिक्के बनने शुरू हो गए (इसके 2 वर्ष बाद लेनिनग्राद की टकसाल फिर चालू हो गई)। इन सिक्कों पर अंकित शब्द रूसी तथा उज्बेकी भाषा में थे। उनका प्रचलन तब बंद हुआ जब सोवियत सरकार ने सारे देश के लिए बैंकनोट बनाने शुरू कर दिए।

आपको शायद विश्वास नहीं आएगा कि कई बार ताम्र के सिक्कों की कीमत सोने के सिक्कों से ज्यादा होती है। कुछ साल पहले लंदन में एक अजीब नीलाम देखा गया। इस नीलाम में केवल एक सिक्का बेचा जा रहा था और वह भी एक पैंस का। परन्तु हाल में उपस्थित लोग जानते थे कि इस सिक्के की असली कीमत क्या है।

1933 में इंग्लैंड की टकसाल ने ऐसे कुल छः सिक्के ढाले थे जिनमें से पांच सिक्के ब्रिटिश राष्ट्रीय संग्रहालय में रखे हुए हैं और यह छठा सिक्का किसी

संग्रहकर्ता किसी सिक्के के शौकीन थे। सिक्के के नए मालिक को अपना शौक पूरा करने के लिए इसकी कीमत से ज्यादा पैसा यानी पूरे 2600 पौंड देने पड़े।

ऊपर हम बता चुके हैं कि धातुओं में विभिन्न किस्म ताम्र के एलॉयों का एक बहुत बड़ा ग्रुप बनाती है। इन एलॉयों का इस्तेमाल व्यापक पैमाने पर होता है। अगर इनमें दूसरे तत्त्व मिला दिए जाएं तो अलग-अलग गुणों वाले एलॉय प्राप्त होते हैं।

पिछले कुछ समय में तकनीक के कुछ क्षेत्रों में ताम्र तथा इसके एलॉयों की जगह दूसरी धातुओं ने ले ली है। उदाहरणतया संयुक्त राज्य अमरीका में उच्चवोल्टता वाली बिजली के तार अब ताम्र की जगह एल्यूमिनियम से बनाए जा रहे है। हो सकता है कि आने वाले वर्षों में प्लास्टिक भी ताम्र की जगह इस्तेमाल होने लगेगा।

ताम्र की जगह अन्य धातुओं का इस्तेमाल करने का कारण यह है कि इस धातु के भंडार कम होते जा रहे हैं। यही वजह है कि आज ताम्र अयस्कों के नए निक्षेपों की खोज पर बहुत ज्यादा ध्यान दिया जा रहा है। हाल ही में सोवियत संघ में उडोकान के पास ताम्र के अतिविशाल निक्षेप मिले हैं। अनुमान लगाया जाता है कि कजाखस्तान के जेजकाज्गान निक्षेपों के मुकाबले उडोकान निक्षेपों में ताम्र की मात्रा दुगुना अधिक है। उत्तरी ध्रुव के क्षेत्र में ताल्नाख के पास भी कुछ ऐसे निक्षेप मिले हैं जिनमें ताम्र अयस्क उपस्थित हैं।

हाल मे ताम्र की सांद्रता की वजह से एक जहाज दुर्घटनाग्रस्त हो गया। नार्वे का एक मालवाहक जहाज 'अनातीना' ताम्र की सांद्रता लादकर जापान जा रहा था कि अचानक खतरे की घंटी बजने लगी। जहाज में पानी भरता जा रहा था। पता चला कि माल ने जहाजियों के साथ बहुत बुरा मजाक किया था। हुआ यह था कि सांद्रता में जमे ताम्र ने जहाज के बाडी के स्टील के साथ मिलकर एक अच्छा विद्युतअपघटनी जोड़ा बना लिया था और समुद्र का पानी विद्युत-अपघटनी अवगाह की भूमिका निभा रहा था। परिणाम यह हुआ कि विद्युत बननी शुरू हो गई। इस विद्युत ने जहाज के बाडी को इतनी क्षति पहुंचाई कि उसमें सूराख हो गए और समुद्री पानी अंदर आने लगा।

ताम्र का एक और भी उपयोग है, परंतु धातु के रूप में नही बल्कि एक जैवतत्त्व के रूप में। जीव-जंतुओं तथा पेड़-पौधों के सामान्य विकास के लिए वे जैवतत्त्व परम आवश्यक है। ये कोशिकाओं के अंदर घट रही रासायनिक प्रतिक्रियाओं में उत्प्रेरक का काम करते हैं।

पेड़ पौधों के ऊतकों में अगर ताम्र की कमी हो जाती है तो उनके अदर क्लोरोफिल की मात्रा घट जाती है जिससे उनकी पत्तियां पीली पड़ जाती है तथा वे फसल देना बंद कर देते है। क्लोरोफिल के अभाव में वनस्पतियां पूर्णतया नष्ट भी हो सकती है।

जंतुओं की श्रेणी में ताम्र की अधिकतम मात्रा आक्टोपसों (अष्टभुजों), कटल फिशों, घोंघों तथा कुछ अन्य मोलस्कों में होती है। केंकड़ों तथा शीर्षपादों मे ताम्र उनके श्वसन वर्णक-हीमोसायनिन का एक घटक होता है (0.33-0.38%) तथा उनके अंदर ताम्र वही काम करता है जो अन्य जानवरों के रक्त में लोहा करता है। वायु की ऑक्सीजन के साथ मिलकर हीमोसायनिन का रग नीला हो जाता है (यही कारण है कि घोंघे का रक्त नीले रग का होता है), परतु जैसे ही हीमोसायनिन अपनी ऑक्सीजन ऊतकों को दे देता है, रक्त रगहीन हो जाता है। मानसिक रूप से बहुत विकसित जंतुओं तथा मनुष्य के अदर ताम्र मुख्यत यकृत के अदर होता है। मनुष्य को प्रतिदिन 0.005 ग्राम ताम्र की आवश्यकता होती है। अगर उसके भोजन में ताम्र की कमी रहती है तो उसे अरक्तता का रोग लग सकता है तथा वह कमजोरी भी महसूस कर सकता है।

यही वजह है कि बहुत सारी जातियों के लोग ताम्र को एक औषधि मानते है। नेपाली लोग इसे एक पवित्र धातु समझते हैं। उनका कहना है कि यह धातु दिमाग को ताकत देती है, पाचन में सहायक होती है तथा पेट व आंतो की बीमारियों के इलाज में फायदमंद सिद्ध होती है (पानी-भरे गिलास में कुछ ताम्र सिक्के डालकर रोगियो को यह पानी पिलाया गया है)। नेपाल का एक विशाल तथा अतिसुदर मदिर 'ताम्र मंदिर' के नाम से प्रसिद्ध है।

पोलैंड के वैज्ञानिकों ने सिद्ध किया है कि जिन जलाशयो में ताम्र उपस्थित होता है वहा की कार्पो* का आकार बड़ा होता है। परंतु जिस तालाब या झील मे ताम्र बिल्कुल नहीं होता, वहा जल्दी ही फफूदी लग जाती है जो कार्पो को बहुत हानि पहुंचाती है।

अगर कार्पो को ताम्र मे बहुत लगाव है तो जल-जगत् के दूसरे प्रभावशाली वासियों—शार्कों को इस तत्व से बहुत नफरत है। ठीक-ठीक कहे तो वे इस धातु के एक यौगिक कापर सल्फेट (नीले थोथे) से बहुत ही घृणा करती है। द्वितीय विश्व युद्ध के आरंभ में अमरीका में शार्करोधी इस औषधि के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए बड़े पैमाने पर कई प्रयोग किए गए। इसकी वजह यह थी कि

---

* एक मछली का नाम।

जर्मन टारपीडों तथा बमों ने जो [illegible] में रक्षा के तरीके ढूंढना बहुत जरूरी था।

इस समस्या का हल ढूंढने के काम में शार्कों के [illegible] विशेषज्ञों ने भाग लिया। [illegible] ने हाथ बंटाया। उन्होंने वैज्ञानिकों को [illegible] शार्कों का शिकार किया था।

शार्करोधी औषधि के प्रयोग आशा से [illegible]। [illegible] विशेषज्ञ इन प्रयोगों से संतुष्ट नहीं हुए। उन्होंने मजाक में [illegible] पाउडर से हमारी शार्कों (आस्ट्रेलिया की शार्कें सबसे [illegible] के तो सिर में दर्द होने लगेगा। यह पाउडर केवल [illegible] करता है।' परंतु जैसे ही आस्ट्रेलिया के पश्चिमी तट पर [illegible] में इस पाउडर का परीक्षण किया गया तो देखा गया कि [illegible] इसका प्रयोग सफल सिद्ध हुआ।

ताम्र की प्राप्ति की एक विचित्र जैविक प्रक्रिया [illegible] हमारी शताब्दी के आरंभ में अमरीका के [illegible] दी गई। वजह यह थी कि उनके मालिकों ने यह समझकर कि अयस्क के भंडार खत्म हो चुके हैं, इन खानों में पानी भरवा दिया। परंतु दो साल बाद जब खानों से पानी निकलवाकर इनकी सफाई करवाई गई तो इनके अंदर 12 हजार टन ताम्र मिला। मैक्सिको में भी बिल्कुल ऐसी ही घटना घटी जहां एक बेकार खान से 1 साल के अंदर 100 हजार टन ताम्र मिला।



स्वाभाविक था कि वैज्ञानिक सोचने पर मजबूर हो गए कि यह ताम्र आया कहां से? उन्हें इस प्रश्न का उत्तर मिल गया। बात यह है कि विभिन्न किस्मों के जीवाणुओं में कुछ ऐसे भी हैं जो कुछ धातुओं के

सल्फ्यूरिक वगैरह का यह अंश में स्थान है। चूंकि ताम्र प्रकृति में प्रायः सल्फर के साथ रहता है इसलिए ये जीवाणु ताम्र अयस्कों को भी पसंद करते हैं। ताम्र के जो सल्फाइड जल में घुलनशील नहीं हैं उन्हें ये जीवाणु ऑक्सीकरण द्वारा विलयशील यौगिकों में परिवर्तित कर देते हैं। विशेष बात यह है कि यह प्रक्रिया बड़ी तेजी से चलती है। आपको यह बात स्पष्ट करने के लिए यहां हम निम्न उदाहरण देते हैं : अगर साधारण ऑक्सीकरण द्वारा कैल्कोपाइराइट (ताम्र का एक खनिज) से 21 दिनों में केवल 5% ताम्र प्राप्त हुआ तो जीवाणुओं की सहायता से 4 दिनों में 80% ताम्र प्राप्त किया जा सका। इन प्रयोगों के बाद जीवाणुओं–खनिकों की श्रेष्ठता में कोई संदेह नहीं रहा। यह बात जरूर है कि उक्त प्रयोग के दौरान आदर्श परिस्थितियां रखी गईं : तापमान 30°C से 35°C के बीच था, खनिज को पीस दिया गया था और विलयन में उसे लगातार हिलाया जा रहा था। परंतु दूसरे बहुत सारे प्रयोगों ने यह सिद्ध कर दिया है कि जीवाणु बहुत शरीफ किस्म के हैं तथा काम से जी नहीं चुराते हैं : उत्तरी इलाके की कड़कती ठंड में भी वे बड़े शौक से काम में जुटे रहे, उदाहरणतया, सोवियत संघ में कोल्स्क प्रायद्वीप में।

खानों की खुदाई के समापन के समय जीवाणुओं की उपस्थिति बहुत ही उपयोगी सिद्ध होती है : खानों के अंदर से सारा माल निकालने के बाद भी 5 से 20% तक अयस्क जरूर बच जाते हैं। इसकी वजह यह है कि बचे माल का निकालना बहुत महंगा पड़ता है और कई बार तो बिल्कुल असंभव होता है। जीवाणु ताम्र की इन कब्रों तक बड़ी आसानी से पहुंच जाते हैं जहां वे बचा माल इकट्ठा कर लेते हैं।

सूक्ष्मजीवाणुओं की सहायता से कूड़े के ढेर से भी काम की चीजें निकाली जा सकती हैं। मेक्सिको में कानानिआ खान के पास 4 करोड़ टन वजन के लगभग धात्विक कूड़ा इकट्ठा हो गया। हालांकि इसमें ताम्र की मात्रा केवल 0.2% थी फिर भी खनिकों ने इससे ताम्र प्राप्त करने की कोशिश की। उन्होंने इस कूड़े को खानों से निकले पानी में भिगोया और फिर इस पानी को खानों में बहा दिया। जब खनिजज्ञों ने इस पानी का विश्लेषण किया तो उन्हें प्रति लीटर पानी से 3 ग्राम ताम्र मिला और इस प्रकार कूड़े से एक महीने के अंदर कुछ नहीं से कुल मिलाकर 650 टन धातु प्राप्त हुई।

सोवियत संघ की कुछ खानों में भी जीवाणुओं को 'नौकरी' दी गई है। सन् 1964 में यूराल की एक बहुत बड़ी खान में पहली बार जीवाणुओं की सहायता से ताम्र निकाला गया। इस इलाके में खाली खानों के आसपास गरीब ताम्र अयस्क

का ढेर लग गया था। ताम्र की इस नई खान को जीवाणुओं के जिम्मे कर दिया गया। जीवाणुओं ने दिन लगातार काम किया और उनको लागत कम ही पड़ी क्योंकि कुंड से कीमती धातु की कई टन मात्रा प्राप्त हुई। आज कुंड से ताम्र निकालने के लिए वहां एक आधुनिक संयंत्र चालू है। यूराल तथा कजाखस्तान की कई खनन संस्थाएं भी जीवाणुओं की सहायता ले रही हैं।

सोवियत संघ की विज्ञान अकादमी के सूक्ष्म जीवाणु संस्थान में किए गए अनुसंधान कार्यों से यह पता चला है कि आधुनिक जीवाणुओं की क्षमता भिन्न है। उनकी सहायता से ताम्र के अलावा भू-पर्पटी से लोहा, जिंक, निकिल, कोबाल्ट, टाइटेनियम, एलुमिनियम तथा कई अन्य तत्त्व निकाले जा सकते हैं। और तो और, वे यूरेनियम, स्वर्ण, जर्मेनियम तथा गैलियम जैसी बहुमूल्य धातुएं भी निकाल सकते हैं। कुछ साल पहले इस संस्थान के वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध किया कि जीवाणुओं की सहायता से निक्षालन द्वारा गैलियम, इंडियम तथा थैलियम जैसी विरल धातुएं भी प्राप्त की जा सकती हैं।

जैव धात्विकी का भविष्य काफी उज्ज्वल है। आज ताम्र प्राप्त करने की सारी विधियों में भूमिगत निक्षालन विधि सबसे सस्ती मानी जाती है। इसमें न तो खनिकों को खानों के अंदर भेजने की जरूरत पड़ती है और न ही ताम्र अयस्कों के अर्जन की फेक्टरियों की आवश्यकता होती है। इस कठिन काम को करोडों सूक्ष्म 'खनिक' खुद करते हैं। कहानियों के बौनों की तरह वे दिन-रात काम में जुते रहते हैं और लोगों को काम की धातुएं देते रहते हैं।

कुछ साल पहले विख्यात सोवियत वैज्ञानिक अकादमीशियन अ. इमशेनेत्स्की ने निम्न शब्द कहे : 'प्रकृति के चक्र में सूक्ष्मजीव अतिमहत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते है। बहुत साल पहले व. वेर्नादस्की ने जो भूसूक्ष्मजीवविज्ञान संबंधी विचार प्रस्तुत किए थे आज उनका व्यावहारिक प्रयोग हो रहा है। सब जानते हैं कि जीवाणुओ ने कई सारे खनिजी अयस्कों की रचना की है। जार पीटर प्रथम ने रूस के उत्तरी इलाके मे झील की सतह से तोपो के लिए अयस्क निकालने का आदेश दिया था जो बहुत सस्ता था। उस जमाने में झील में अयस्क कहां से आ गया?...यह सूक्ष्मजीवाणुओं की कृपा थी। आने वाले दिनों में बहुमूल्य धातुओ के रूप में उनका प्रयोग और भी बढ़ेगा। 20 साल पहले यह बात एक गप्प-सी लगती थी, परतु आज मनुष्य इन अदृश्य खनिकों से काम लेने का तरीका जानता है। दुनिया के कई हिस्सो में आज पानी में डूबी बेकार खानो से इन सूक्ष्म-जीवाणुओ की सहायता से बड़े पैमाने पर यूरेनियम, ताम्र, जर्मेनियम तथा कई अन्य धातुए प्राप्त की जा रही है। इस बात मे कोई शक नहीं कि हमारी शताब्दी के अंत

तक सूक्ष्मजीवाणुओं की [illegible] में प्रयोग होने [illegible] जाएगा तथा इसकी गिनती आर्थिक [illegible] की जाएगी। सूक्ष्म जीवाणु, जो [illegible] की क्षमता रखते हैं, सबसे [illegible] जाएगा। विशेष बात यह है कि इनका उत्पादन [illegible] हो सकता है।

पिछले कुछ समय से [illegible] वनस्पतिविज्ञान के संबंध बढ़ते जा रहे हैं और इन्होंने विज्ञान की एक नई शाखा को जन्म दिया है जिसे अभिसूचक भूवनस्पतिविज्ञान कहते हैं। [illegible] ने [illegible] नामक अपनी पुस्तक में [illegible] का वर्णन किया है। इनकी सहायता से सोने व चांदी, लोहे तथा ताम्र के खजाने ढूंढे। बहुत सारी वनस्पतियों की जड़ें पृथ्वी के अंदर काफी गहराई तक पहुंचकर एक पंप की तरह वहां उपस्थित विभिन्न पदार्थों के विलयनों को चूस लेती हैं और अगर उसके आसपास किसी धातु के भंडार उपस्थित होते हैं, तो इस वनस्पति की जड़ों, तनों तथा पत्तियों में इस धातु की मात्रा अधिक हो जाती है। मजेदार बात यह है कि हर वनस्पति की अपनी पसंद होती है। मकई तथा मधुभाजी को स्वर्ण अच्छा लगता है, नीलपुष्प [illegible] को [illegible] होती है; कुछ [illegible] लवंग को मैंगनीज भाता है तथा [illegible] का पसंद करता है। अगर वनस्पति के अंदर किसी तत्त्व की मात्रा अधिक मिलती है तो यह इस बात का सूचक होती है कि उस वनस्पति के आसपास की भूमि में यह धातु हो सकती है। ऐसे भूविज्ञानी प्रयास अक्सर सफल रहते हैं। उदाहरण के लिए, कजाकिस्तान तथा तूवा में वनस्पतियों की सहायता से ताम्र के निक्षेप ढूंढने में सफलता मिली।

हालांकि ताम्र-युग इतिहास की बहुत प्राचीन घटना है, परंतु मनुष्य ताम्र से जुदा नहीं होना चाहता। ताम्र उसका पुराना तथा वफादार दोस्त है।

विज्ञान के पक्ष में

गत महायुद्ध की संहार-लीला में विज्ञान के आविष्कारों का इस्तेमाल एक बड़े पैमाने पर हुआ है—रॉकेट बम, 'वी-2' चालकहीन विमान, तथा परमाणु बम सरीखे दानवीय अस्त्र-शस्त्रों के पीछे अवश्य ही विज्ञान का एक जबरदस्त हाथ मौजूद है। अतः ससार के सभी राष्ट्र आज विज्ञान की संहारात्मक शक्ति के भय से त्रस्त है। कुछ लोगों ने तो यहां तक कहा है कि प्राकृतिक विज्ञान को सौ-दो सौ वर्षों के लिए दफना दीजिये वरना यह हमारी सभ्यता, संस्कृति को निगल जायेगा।

इस समस्या की विवेचना करने के लिए हमें तनिक गहराई में पैठना होगा। क्या वास्तव में वर्तमान समय की बेकारी, मारकाट, अन्तर्राष्ट्रीय कलह तथा गत युद्ध की भीषणता का उत्तरदायित्व हम विज्ञान के कंधों पर रख सकते हैं?

विज्ञान के इतिहास के पन्ने उलटिये--आप देखेंगे कि जिज्ञासा की उत्प्रेरणा पाकर मानव सत्यान्वेषण के पथ पर ज्यों-ज्यों बढ़ता गया, विज्ञान की कड़िया भी त्यो-त्यो एक-एक करके परस्पर जुड़ती गयी। प्रकृति के रहस्योद्घाटन के सुसगठित तथा क्रमबद्ध प्रयत्न की आधारशिला पर आधुनिक विज्ञान का निर्माण हुआ है। हजारों वर्ष की निरन्तर लगन और अध्यवसाय के फलस्वरूप वैज्ञानिक ने प्रकृति की शक्ति पर नियंत्रण प्राप्त करने का गुर हासिल किया। इस प्रकार मानव-समाज के हाथो में उसने पर्याप्त शक्ति दी कि वह भूतल से महामारी, भुखमरी, वस्त्राभाव आदि को सदा के लिए मिटा दे।

फिर भी संसार में ये भौतिक परेशानियां व्याप्त रूप से क्यों देखने को मिलती है? इन व्याधियों को दूर करने मे आज का विज्ञान असमर्थ क्यों है? विज्ञान के दुरुपयोग से हमारी व्याधियां बढ़ जाती हैं—इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता। किन्तु यह कहना कि विज्ञान एक बाह्य शक्ति है जो मानव सभ्यता को आज निगल जाना चाहती है, प्रश्न को गलत तरीके पर रखना है। विज्ञान स्वय मानव की कृति है, यह एक साधन मात्र है जिसका इस्तेमाल करना पूर्णतया मनुष्य के अधीन है। वह इस साधन का प्रयोग मानव कल्याण के लिए भी कर सकता

है और उसके अस्तित्व के लिए भी।

किसी देश या समाज के लिए यदि विज्ञान के आविष्कार अनिष्टकारी बन [illegible] तो इसके लिए स्वयं मनुष्य का ही [illegible] उस बालक को [illegible] कहना है कि चाकू ने उसकी उंगली को काट डाला।

आधुनिक विज्ञान का दुरुपयोग केवल युद्धक्षेत्र तक ही सीमित नहीं है। आर्थिक तथा सामाजिक क्षेत्र में भी विज्ञान के दुरुपयोग द्वारा मानव क्लेश को निःसीम बढ़ाया जा सकता है। साधारण जनता के लिए अत्युपयोगी पदार्थों के निर्माण की जगह कुछ थोड़े से लोगों के लिए विलास की सामग्री तैयार करने में समय और श्रम व्यय करना इसका एक छोटा-सा उदाहरण है। पूंजीपतियों द्वारा मुनाफे की रकम बढ़ाने के लिए उत्पादन को जान-बूझकर घटाना विज्ञान की शक्ति का दुरुपयोग ही तो है।

अतः विज्ञान को कोसने से काम नहीं चलेगा। विज्ञान का क्षेत्र पहले की अपेक्षा अब विस्तृत हो गया है। मानव मस्तिष्क के भावावेश, हर्ष, विषाद के उद्रेक तथा समाज के अन्दर मनुष्य के परस्पर के सम्बन्ध, ये सभी वैज्ञानिक अध्ययन की सीमा के अन्तर्गत आ गये हैं। वास्तव में आधुनिक विज्ञान न केवल कीटाणुओं तथा अन्य जीव-जन्तुओं की गतिविधि का निरीक्षण करता है बल्कि वह स्वयं मानव-चरित्र का भी विश्लेषण करता है। मानव-चरित्र की गुत्थियां सुलझाने के निमित्त कार्यकारण के अटूट सिद्धान्त की सहायता ली जा रही है। अतः विज्ञान की व्यापक सीमा से हम अपने को बाहर नहीं रख सकते हैं। इसीलिए विज्ञान से मुख मोड़कर आज के जीवन की असंगतियों का निराकरण नहीं किया जा सकता है। कालचक्र को पीछे की ओर घुमाना सम्भव नहीं है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे विज्ञान को भरपूर अपनाकर ही हम इन असंगतियों को दूर कर सकते है। सम्प्रदायवाद, संकुचित राष्ट्रीयता तथा परम्परागत रूढ़िया—इन सभी प्रतिबंधों से मुक्ति पाने का मार्ग वैज्ञानिक दृष्टिकोण द्वारा ही प्रशस्त किया जा सकता है। जीवन और विज्ञान के बीच समन्वय स्थापित करने में ही मानवजाति का कल्याण है, उससे दूर भागने मे नहीं।

हमारा श्रेष्ठ विज्ञान साहित्य

- अंतरिक्ष एवं नक्षत्र विज्ञान
- अंतरिक्ष विज्ञान
- गणित जिज्ञासा प्रश्नोत्तरी
- भूगोल जिज्ञासा प्रश्नोत्तरी
- आहार ही औषधि
- वनस्पति जगत से परिचय
- जीवों से परिचय
- मैं हूं जीवनदायिनी बिजली
- धातुओं के रोचक तथ्य
- मै हूं रहस्यमय ब्रह्मांड
- मानव शरीर की सैर
- प्रकृति द्वारा स्वास्थ्य
- विज्ञान के चमत्कार
- ध्वनि जगत
- समुद्र से परिचय
- विज्ञान का संक्षिप्त इतिहास
- अंगलक्षण विज्ञान
- विज्ञान जिज्ञासा प्रश्नोत्तरी
- विज्ञान जिज्ञासा
- प्राणी जगत से परिचय
- कीट-पतंगों से परिचय
- पानी की कहानी
- परिवहन खोज और खोजकर्ता
- मैं पिता के समान क्यों हूं?
- मैं हूं पृथ्वी
- परमाणु शक्ति भारत
- प्रकृति द्वारा स्वास्थ्य और सौन्दर्य
- भारत में विज्ञान की प्रगति
- पृथ्वी और आकाश
- अदृश्य जीव-जगत तथा पर्यावरण प्रदूषण
- मानव जाति की उत्पत्ति एवं क्रमिक विकास
- आश्चर्यजनक प्रयोग, मनोरंजक पहेलियां



समाप्त

राजकुमार शर्मा

प्रसिद्ध लेखक एवं प्रकाशक।

हिन्दी पुस्तकों के प्रकाशन को एक नया रूप देने के लिए आपका नाम भारत ही नहीं अपितु पूरे विश्व में चर्चित है। शुरू में आप पंडित राज के नाम से लिखा करते थे। वर्तमान मे आप राजकुमार शर्मा के नाम से प्रसिद्ध हैं। पुस्तक व्यवसाय मे आप 1955 में आ गये थे। शुरू-शुरू मे आपने धार्मिक पुस्तकें जैसे—रत्न मंजरी, शिव महापुराण आदि पुस्तकों का संपादन एवं पुर्नलेखन किया। इसके पश्चात आपने स्वामी रामकृष्ण परमहंस की जीवनी लिखी। इस पुस्तक पर आपको मध्यप्रदेश सरकार के द्वारा 'कला शिरोमणि' पुरस्कार से सम्मानित किया गया। वर्तमान में आप सन्मार्ग प्रकाशन के निदेशक हैं। आपकी लोकप्रिय एवं चर्चित पुस्तके—

- रामकृष्ण परमहंस
- मैं योगी कैसे बना
- वैराग्य शतक
- धातुओं के रोचक तथ्य
- आगे बढ़ो
- सच को जानो

सम्पर्क : सी-8/74, यमुना विहार, दिल्ली-110053